पृथ्वीराज रासो की भाषा

नामवर सिंह

सरस्वती प्रेस, बनारस

निवेदन

इस निबंध में पृथ्वीराज रासो की भाषा पर यथासंभव सांगोपांग अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। अभी तक इस विषय पर प्रायः फुटकल विचार ही व्यक्त किए गए हैं, व्यवस्थित विवेचन नहीं हुआ है। प्रस्तुत निबंध में रासो की भाषा के ध्वनिविचार, रूप-विचार, वाक्यविन्यास, शब्द-समूह आदि सभी पक्षों पर विचार किया गया है। इस प्रकार इस महत्त्वपूर्ण ग्रंथ की भाषा पर पहली बार व्यवस्थित विचार किया जा रहा है।

वर्तमान स्थिति में जब कि रासो के सुलभ संस्करण संतोषप्रद नहीं हैं और वैज्ञानिक संस्करण अभी भी होने को है, भाषावैज्ञानिक अध्ययन के लिए सर्वोत्तम मार्ग यही है कि प्राचीनतम पांडुलिपियों में से किसी एक को आधार बना लिया जाय। इस निबंध में धारणोज की लघुतम रूपान्तर वाली प्रति को आधार माना गया है क्योंकि एक तो इसका प्रतिलिपि काल (सं० १६६७ वि०) अब तक की प्राप्त प्रतियों में प्राचीनतम है और दूसरे, इसमें भाषा के रूप भी अपेक्षाकृत प्राचीनतर हैं। इसके साथ ही मैंने नागरी प्रचारिणी सभा में सुरक्षित बृहत् रूपान्तर की उस प्रति से भी सहायता ली है जिसका प्रतिलिपि-काल संपादकों के अनुसार सं० १६४० या' ४२ है। सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण के रहते हुए भी इस पांडुलिपि की सहायता लेना आवश्यक जान पड़ा। ऐसा लगता है कि संपादित संस्करण में इसका यथोचित उपयोग नहीं हुआ है। इन दोनों पांडुलिपियों के आधार पर मैंने अपने अध्ययन के लिए रासो के मुख्य तथा केन्द्रीय भाग 'कनवज्ज समय' का पाठ तैयार किया है। इस प्रकार प्रस्तुत अध्ययन कुल मिलाकर साढ़े तीन हजार शब्द-रूपों पर आधारित है। किसी रचना की भाषा के

वास्तविक रूप का पता देने के लिए इतने शब्द अपर्याप्त नहीं होने चाहिए। गहराई से विवेचन करने के लिए ही पाठ की सीमा निर्धारित की गई है। प्रस्तुत निबंध में भाषावैज्ञानिक विवेचन के साथ 'कनवज्ज समय' का सम्पादित पाठ और उसके संपूर्ण शब्दों का संदर्भ-सहित कोश भी दे दिया गया है।

निबंध में यथास्थान शब्द-रूपों की ऐतिहासिकता तथा प्रादेशिकता की ओर संकेत किया गया है। इस प्रकार एक ओर डिंगल-पिंगल तत्व स्पष्ट होते गये हैं तो दूसरी ओर हिंदी की उदयकालीन तथा अपभ्रंशोत्तर अवस्था की भाषा का स्वरूप भी उद्घाटित हुआ है। साथ ही तुलना के लिए तत्कालीन अन्य रचनाओं के भी समानान्तर शब्द-रूप दिए गए हैं। आशा है, इन सबसे पश्चिमी हिंदी—विशेषतः व्रजभाषा के प्राचीन इतिहास को आलोकित करने योग्य कुछ महत्वपूर्ण सामग्री प्राप्त होगी।

निबंध का मार्ग-दर्शन गुरुदेव आचार्य हजारीप्रसाद जी द्विवेदी ने किया है। संपूर्ण प्रयत्न उन्हीं की प्रेरणा और प्रोत्साहन का परिणाम है।

लघुतम रूपान्तर की प्रतिलिपि के लिए मैं आदरणीय श्री अगरचंदजी नाहटा तथा प्रो० नरोत्तमदासजी स्वामी का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। नाहटा जी ने कृपापूर्वक मेरे लिए रासो की अन्य हस्तलिखित प्रतियाँ भी सुलभ कर दी थीं और स्वामी जी ने विविध रूपान्तरों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए आवश्यक सामग्रियाँ जुटाने की कृपा की थी।

रासो की अन्य हस्तलिखित प्रतियों के लिए मैं अनूप-संस्कृत लाइब्रेरी बीकानेर तथा काशी नागरी प्रचारिणी सभा के प्रति आभारी हूँ।

लोलार्क कुण्ड, काशी
३० मार्च, १९५६

नामवर सिंह

विषय-सूची

पृष्ठ

पृथ्वीराज रासो की भाषा

भूमिका

१. पृथ्वीराज रासो हिंदी की सबसे विवाद-ग्रस्त रचना है। पिछले सौ वर्षों में इतनी चर्चा शायद ही किसी हिंदी ग्रंथ की हुई होगी। इससे उसके महत्त्व का पता चलता है। रासो की चर्चा में इतिहास, साहित्य, भाषाविज्ञान आदि विविध क्षेत्रों के अध्येताओं ने भाग लिया है। यह रासो के महत्त्व की व्यापकता का प्रमाण है। कर्नल टाड[1], डा० बूलर[2], डा० मारिसन[3], पं० गौरीशंकर हीराचंद ओझा[4], मुंशी देवी प्रसाद[5], डा० दशरथ शर्मा[6] प्रभृति प्रसिद्ध इतिहासकारों के अनुसंधानपूर्ण विचारों से पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिक सामग्री पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। वास्तविक तथ्य का निर्णय इस क्षेत्र के विशेषज्ञों के लिए सुरक्षित रखते हुए यहाँ इतना ही संकेत करना काफ़ी होगा कि नई खोजों से रासो के अनेक तथ्य क्रमशः इतिहास के अन्य स्रोतों द्वारा समर्थित और पुष्ट होते जा रहे हैं। पृथ्वीराज रासो के साहित्यिक पक्ष पर अपेक्षाकृत कम काम हुआ है। फिर भी बाबू श्यामसुंदरदास[7], डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी[8], पं० मोतीलाल मेनारिया[9], डा० उदयनारायण तिवारी[10], डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी[11] जैसे साहित्य-समीक्षकों ने पृथ्वीराज रासो के काव्य-सौन्दर्य का उद्घाटन

---

१. एनल्स एंड एंटीक्विटीज़ ऑव राजस्थान, १८२९; द वाउ ऑव संयोगिता, एशियाटिक जर्नल (न्यू सीरीज़), जिल्द २५; कनउज खंड, जे० ए० एस० बी०, १८३८ ई०

२. प्रोसीडिंग्ज़, जे० ए० एस० बी०, जनवरी-दिसंबर १८९३ ई०

३. सम अकाउंट ऑव दि जीनियालॉजीज़ इन दि पृथ्वीराज विजय, वियना ओरिएंटल जर्नल, भाग ७, १८९३ ई०

४. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग १, १९२० ई०; वही, भाग ६; पृथ्वीराज रासो का निर्माणकाल, कोषोत्सव स्मारक संग्रह, १९२८ ई०

५. पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० पत्रिका, भाग ५, १९०१ ई०

६. संयोगिता, राजस्थान भारती, भाग १, अंक २-३; सम्राट पृथ्वीराज की रानी पद्मावती, मरु भारती, वर्ष १; पृथ्वीराज तृतीय की जन्मतिथि, राज० भा०, अंक १, भाग २; पृथ्वीराज तृतीय और मुहम्मद बिन साम की मुद्रा, जर्नल ऑव न्यूमिस्मैटिक सोसाइटी ऑव इंडिया, १९५४; दिल्ली का अंतिम हिंदू सम्राट पृथ्वीराज तृतीय, इंडियन कल्चर, १९४४; इत्यादि।

७. हिंदी साहित्य, १९३० ई०

८. हिंदी साहित्य का आदिकाल, १९५३ ई०

९. डिंगल में वीर रस, १९४०; राजस्थानी भाषा और साहित्य; राजस्थान का पिंगल साहित्य

१०. वीर काव्य, १९४८ ई०

११. चंद वरदायी और उनका काव्य, १९५२ ई०; रेवातट, १९५३ ई०

करने में काफ़ी काम किया है जिसके फलस्वरूप रसज्ञ जनों को अब रासो में रस मिलने लगा है। बीम्स[१], होर्नले[२], ग्रियर्सन[३], डा० तेसितोरी[४], डा० सुनीति कुमार चटर्जी[५], डा० धीरेंद्र वर्मा[६], डा० दशरथ शर्मा[७], प्रो० नरोत्तमदास स्वामी[८] जैसे भाषावैज्ञानिकों और भाषाशास्त्रियों ने समय-समय पर पृथ्वीराज रासो की भाषा का विश्लेषण किया है तथा उस पर अपनी राय प्रकट की है। पुरानी पांडुलिपियों के अन्वेषकों तथा पाठ-विज्ञान के विशेषज्ञ संपादकों ने भी पृथ्वीराज रासो के पुनरुद्धार की ओर ध्यान दिया है, जिनमें बीम्स[९], होर्नले[१०], डा० श्याम सुन्दर दास[११], मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या[११], मथुरा प्रसाद दीक्षित[१२], मुनि जिनविजय[१३], अगरचंद नाहटा[१४], और कविराव मोहन सिंह[१५] के प्रयत्न विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। इस प्रकार रासो पर किए गये कार्यों का भी एक विशाल साहित्य है और मनोरंजक इतिहास है। यह स्वयं अपने आप में स्वतंत्र अध्ययन का विषय हो सकता है। परंतु इस संक्षिप्त रूपरेखा से इतना तो अवश्य ही प्रमाणित होता है कि पृथ्वीराज रासो संबंधी समस्याएँ बहुत जटिल हैं और इतने दीर्घ तथा व्यापक प्रयत्न के बावजूद बहुत सी समस्याएँ अभी सुलझाने को शेष रह गई हैं।

---

१. स्टडीज़ इन दि ग्रैमर ऑव चंद बरदायी, जे० आर० ए० एस० बी०, जिल्द ४२, भाग १, १८७३ ई०
२. गौडियन ग्रैमर, १८८० ई०
३. माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑव हिंदुस्तान, जे० ए० एस० बी०, भाग १, १८८८ ई०
४. ग्रैमर ऑव ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी, इंडियन एंटिक्वेरी, १९१४ ई०
५. ओरिजिन एंड डिवेलपमेंट ऑव बेंगाली लैंग्वेज. भूमिका, १९२६ ई०
६. ब्रजभाषा, अध्याय, ३, १९३५ ई०। (हिंदी अनुवाद, १९५५) ई०
७. दि ओरिजिनल पृथ्वीराज रासो—ऐन अपभ्रंश वर्क, राजस्थान भारती, भाग १, अंक १, १९४६; पृथ्वीराज रासो की भाषा, वही, अंक ४, १९४७ ई०
८. पृथ्वीराज रासो की भाषा, राजस्थान भारती, भाग १, अंक २-३, १९४६ ई०
९. दि मैरेज विद पद्मावती, जे० ए० एस० बी०, जिल्द ३८, भाग १, १८६९; ट्रांसलेशंस ऑव सेलेक्टेड पोर्शंस, वही, जिल्द ४१, १८७२ ई०
१०. बिब्लिओथेका इंडिका, न्यू सीरीज़ ३०४, १८७४; वही सं० ४५२, १८८१ ई०
११. पृथ्वीराज रासो, नागरी प्रचारिणी सभा, १९०४–१९१२ ई०
१२. असली पृथ्वीराज रासो (पहला समय) लाहौर, १९३८ ई०
१३. पुरातन प्रबंध संग्रह, भूमिका, १९३५ ई०। मुनि जी ने लघुतम रूपान्तर की एक पुरानी पांडुलिपि भी खोजी है।
१४. नाहटा जी द्वारा खोजी तथा संग्रह की गई पांडुलिपियों के विवरण लिए देखिए राजस्थान भारती मरुभारती के अंक।
१५. पृथ्वीराज रासो, अब तक दो भाग प्रकाशित, उदयपुर १९५५ ई०

२. पृथ्वीराज रासो की भाषा-संबंधी समस्या उन्हीं जटिल समस्याओं में से एक है। कहने के लिए इसे एक तरह से पहली और आधारभूत समस्या कहा जा सकता है क्योंकि भाषा ही वह पहली दीवार है जिसे पार करके पृथ्वीराज रासो तक पहुँचा जा सकता है। भाषा की कठिनाई के कारण ही रासो का सम्यक् साहित्यिक मूल्यांकन नहीं हो पा रहा है और अभी तक इसके वैज्ञानिक संपादन न हो सकने के पीछे प्रमुख कारणों में से एक भाषा भी है। संभव है, ऐतिहासिक मतभेदों के पीछे भी इसका कुछ प्रभाव हो। इसीलिए डा० ग्रियर्सन ने 'एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका' में चंद वरदायी और पृथ्वीराज रासो पर लिखते हुए कहा है कि भाषा-विषयक कठिनाई के कारण ये विद्वान् (ग्राउज़, बीम्स और होर्नले) अधिक प्रगति नहीं कर सके। जो कठिनाई किसी समय ग्राउज़, बीम्स और होर्नले के सामने थी वह आज भी हिंदी विद्वानों के सामने है। इसीलिए कभी कुछ विद्वान् झुँझलाकर पृथ्वीराज रासो की भाषा को 'बिल्कुल बे-ठिकाने' कह बैठते हैं[१], तो कुछ विद्वान् डिंगल-पिंगल का अनुमान लगाया करते हैं। पृथ्वीराज की भाषा-संबंधी समस्या केवल डिंगल-पिंगल अथवा अपभ्रंश का निर्णय देने तक ही सीमित नहीं है। जैसा कि डा० ग्रियर्सन ने इस ग्रंथ के के भाषा-संबंधी महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा है—**"यह चाहे कुछ भी हो परंतु यह काव्य भाषा-विज्ञान के विद्यार्थी के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि अभी तक प्राप्त सामग्री को देखते हुए यूरोपीय अन्वेषकों के सामने अर्वाचीन प्राकृतों और प्राचीनतम गौड़ीय रचनाओं के बीच की कड़ी के रूप में केवल यही मात्र है। चंद के वास्तविक पाठ न होने पर भी हमें उसकी रचना में गौड़ीय साहित्य के अति प्राचीन अभिज्ञ निदर्शन प्राप्त होते हैं जो शुद्ध अपभ्रंश शौरसेनी प्राकृतों से भरे पड़े हैं।"**[२]

३. डा० ग्रियर्सन ने पृथ्वीराज रासो के भाषा-संबंधी महत्त्व की यह घोषणा १८८८ ई० में की थी। तब से अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की अवस्था का पता देने वाली बीसियों पुस्तकें प्राप्त हो गई हैं, फिर भी पृथ्वीराज रासो जैसा विशाल और समृद्ध काव्यग्रंथ अभी तक नहीं प्राप्त हुआ है। इसलिए वर्तमान पृथ्वीराज रासो 'चंद का वास्तविक पाठ न होने पर भी' अपभ्रंशोत्तर तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की आरंभिक अवस्था पर प्रकाश डालने योग्य पर्याप्त सामग्री प्रदान कर सकता है। इस प्रकार डा० ग्रियर्सन ने 'पृथ्वीराज रासो' में भाषा-संबंधी उस संभावना की ओर संकेत किया है जिसका संबंध भारतीय आर्य भाषा के विकास की अत्यंत महत्त्वपूर्ण अवस्था से है। तात्पर्य यह कि, पृथ्वीराज रासो की भाषा का अध्य-

१. रामचन्द्र शुक्ल : हिंदी साहित्य का इतिहास, पांचवाँ संस्करण, पृ० ४४, १९४८ ई०

२. माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑव हिंदोस्तान, १८८८ ई०

यन केवल उस रचना को समझने के लिए ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि उसका महत्त्व भारतीय आर्यभाषा के ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से भी है। डा० ग्रियर्सन के अनुसार पृथ्वीराज रासो के वर्तमान रूप का भी भाषावैज्ञानिक अध्ययन उपयोगी हो सकता है। इसलिए कुछ लोगों की जो यह धारणा है कि वैज्ञानिक संस्करण के पूर्व रासो की भाषा का अध्ययन अनावश्यक है, वह सदिच्छापूर्ण होती हुई भी उत्साहप्रद नहीं कही जा सकती। निःसन्देह वैज्ञानिक पद्धति से सम्पादित संस्करण सुलभ हो जाने पर रासो के भाषावैज्ञानिक अध्ययन का कार्य सरल हो जायेगा और अपेक्षाकृत पूर्ण भी होगा। किन्तु रासो के वर्तमान रूप का भाषावैज्ञानिक विश्लेषण बहुत संभव है कि उसके वैज्ञानिक सम्पादन में भी कुछ योग दे। एक ही शब्द के प्राप्त होने वाले विविध रूपों में से एक प्रतिमित रूप निर्धारित करने के लिए भाषावैज्ञानिक दृष्टि का भी उपयोग करना पड़ेगा। यही वजह है कि बंगाल की रायल एशियाटिक सोसायटी की ओर से रासो का सम्पादन करते समय बीम्स और होर्नले ने उसकी भाषा पर भी विचार किया। तद्भव शब्दों में होने वाले ध्वनि-परिवर्तनों तथा व्याकरणिक रूपों के पीछे काम करनेवाले नियमों की खोज पर आधारित होने के कारण ही एशियाटिक सोसायटी का संस्करण अपेक्षाकृत वैज्ञानिक हो सका है। इस प्रकार पृथ्वीराज रासो की भाषा पर राय देने और अनुमान लगाने की अपेक्षा उसका व्यवस्थित विश्लेषण अधिक उपयोगी कार्य हो सकता है।

४. पृथ्वीराज रासो का प्रथम व्याकरण बीम्स ने १८७३ ई० में प्रस्तुत किया।[१] उस समय तक सम्पूर्ण पृथ्वीराज रासो का कोई सम्पादित और मुद्रित संस्करण प्रस्तुत नहीं हुआ था। जैसा कि बीम्स के विवरण से पता चलता है, उन्होंने टाड की प्रतिलिपि को आधार बनाकर बैदला और आगरा की दो अन्य पांडुलिपियों की सहायता से सम्पादन-कार्य आरम्भ किया था। व्याकरण लिखने के समय बीम्स द्वारा सम्पादित 'प्रथम समय' प्रेस में था और डा० होर्नले दूसरे 'समयों' पर काम कर रहे थे। बीम्स ने अपने व्याकरण की अधिकांश सामग्रियाँ 'प्रथम समय' से ली हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने यथास्थान १९ वें, ६४ वें और ६५ वें समय से भी उदाहरण चुने है। कुछ उद्धरण उन्होंने १८ वें समय से तथा दो-एक २१ वें समय से भी लिए है, जो उनके शब्दों में, सुप्रसिद्ध 'महोबा खंड' है। बीम्स ने मुख्यतः सर्वनामों, परसर्गों और क्रियापदों पर विचार किया है। जहाँ तक तद्भव शब्दों के ध्वनि-परिवर्तन का सम्बन्ध है, उन्होंने १९-१९ शब्द चुनकर क्रमशः उनमें से प्रत्येक के स्वर और व्यंजन संबंधी विविध रूपान्तरों

१. स्टडीज़ इन दि ग्रैमर ऑव चंद बरदायी, जे० ए० एस० बी०, जिल्द ४२, भाग १, पृष्ठ१६५—१९१

की सूची दे दी है। इन रूपान्तरों के कारण पर विचार करते हुए बीम्स ने पहला कारण लिपि-शैली की अव्यवस्था बतलाई है। जहाँ शब्द में मात्रा-संबंधी रूप-भेद दिखाई पड़ते हैं, उन्हें बीम्स ने छन्दोऽनुरोध का परिणाम बताया है। शेष रूपों के विषय में बीम्स की यह स्थापना है कि वे भाषा के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के परिचायक हैं। बीम्स के अनुसार इस रूप-विविधता का बहुत महत्त्व है क्योंकि इससे किसी शब्द के इतिहास की क्रमिक अवस्थाओं पर प्रकाश पड़ता है। इस तथ्य के आधार पर उन्होंने निष्कर्ष निकाला है कि पृथ्वीराज रासो उस समय का (लिखित अथवा संकलित) काव्य है जब बोलचाल में एक ही शब्द के अनेक रूप प्रचलित थे और कोई एक रूप प्रतिमान के रूप में स्थिर नहीं हो सका था; जैसे *नगर* शब्द के *नगर*, *नयर* और *नेर* ये तीन रूप एक साथ प्रचलित दिखाई पड़ते हैं। बीम्स के अनुसार रासो में शब्दों की रूप-विविधता का कारण तत्कालीन उच्चारण की अनिश्चितता है। फिर भी उन्होंने कुछ अन्य विद्वानों की तरह रासो की भाषा को सर्वथा अव्यवस्थित और बेठिकाने नहीं कहा। उनका निष्कर्ष यह है कि 'अनियमितताओं के बीच भी उसमें आद्योपान्त एक-रूपता मिलती है।'

५. बीम्स ने जैसा कि स्वयं कहा है, यह निबंध रासो के व्याकरण की कुछ विशेषताओं को लेकर ही लिखा गया है; यह व्यवस्थित और सांगोपांग व्याकरण नहीं है। ध्वनि-विचार उसका सबसे कमज़ोर पहलू है। भाषाविज्ञान की उस आरंभिक अवस्था में यह संभव भी न था। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यह निःसंदिग्ध कहा जा सकता है कि बीम्स द्वारा प्रस्तुत रासो के व्याकरण की रूपरेखा का ऐतिहासिक महत्त्व है। यह आकस्मिक बात नहीं है कि भारत में आधुनिक भाषाओं के अध्ययन का प्रवर्तक विद्वान् हिंदी के तथाकथित आदि काव्य का प्रथम वैयाकरण भी है। बीम्स के व्याकरण की सीमाएँ उनके युग की सीमाएँ हैं लेकिन उनकी अनेक स्थापनाएँ युग की सीमाओं के पार भी महत्त्वपूर्ण हैं।

६. होर्नले द्वितीय भाषावैज्ञानिक हैं, जिन्होंने पृथ्वीराज रासो की भाषा पर विचार किया है। बीम्स की तरह उन्होंने रासो की भाषा पर कोई स्वतंत्र निबंध तो नहीं लिखा लेकिन 'गौडियन ग्रैमर'[1] में उन्होंने हिंदी कारक-रूपों की व्युत्पत्ति पर विचार करते हुए स्थान-स्थान पर चंद के उदाहरण दिए हैं। व्युत्पत्ति और सजातीय बोलियों के तुलनात्मक समानान्तर रूपों की दृष्टि से होर्नले का प्रयत्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण

१. देखिए पृष्ठ १३६, १६५, १६६, २०६, २०८, २१०, २१६, २२७, २३१, २३२, २३४, २३७, २३८, २७६, २७८, २६४, २६८, २६६।

है। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि चंद की भाषा के लिए होर्नले ने बराबर 'पुरानी पश्चिमी हिंदी' संज्ञा का प्रयोग किया है।

७. पिछली शताब्दी के इन आरंभिक प्रयत्नों के बाद वर्षों तक रासो की भाषा पर कोई कार्य नहीं हुआ। इसकी प्रामाणिकता को लेकर उठने वाले विवाद ने विद्वानों का ध्यान दूसरी ओर केन्द्रित कर दिया। जब वह विवाद कुछ कम हुआ तो कुछ अध्येताओं का ध्यान एक बार फिर उस ग्रंथ की ओर गया। रासो की भाषा का ऐसा ही विस्तृत विवरण डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी की पुस्तक 'चंद वरदायी और उनका काव्य' (१९५२ ई०) के पाँचवें अध्याय में मिलता है।[1] डा० त्रिवेदी का यह प्रयत्न हिंदी में प्रथम कहा जा सकता है। हिंदी में इतने विस्तार से रासो की भाषा का विवरण अभी तक नहीं दिया गया था। परंतु जैसा कि डा० त्रिवेदी ने स्वयं स्वीकार किया है, उन्होंने 'कतिपय विशेषताएँ' ही निरूपित की है। भाषा-संबंधी विवेचन वस्तुतः उनकी संपूर्ण 'थीसिस' का एक अंग है। डा० त्रिवेदी के भाषा-संबंधी कार्य की विशेषता यह है कि उन्होंने रासो में प्राप्त फ़ारसी और अरबी के शब्दों की लंबी सूची दी है। उन्होंने परिश्रम के साथ इन तद्भव शब्दों के मूल रूप भी खोज निकाले हैं और सुविधा के लिए उन्हें फ़ारसी लिपि में प्रस्तुत किया है। खेद यही है कि यह शब्द-सूची अकारादि-क्रम से नहीं दी गई है और न तो उन शब्दों का पूरा संदर्भ ही दिया गया है। इसी तरह डा० त्रिवेदी ने तद्भव शब्दों में होनेवाले ध्वनि-परिवर्तनों पर भी बीम्स से कुछ विस्तृत विवरण देने का प्रयत्न किया है, परंतु उसमें भी कोई व्यवस्था या क्रम नहीं है। इन बातों के अतिरिक्त डा० त्रिवेदी द्वारा प्रस्तुत रासो के व्याकरण की संपूर्ण रूपरेखा बीम्स की ही है। सच पूछा जाय तो भाषावैज्ञानिक दृष्टि से डा० त्रिवेदी का यह विवेचन बीम्स के कार्य को आगे बढ़ाने की ओर से उदासीन है।

८. भाषा-संबंधी ये सभी अध्ययन पृथ्वीराज रासो की एक परंपरा की प्रतियों पर आधारित हैं जिसे सामान्यतः 'बृहत् रूपान्तर' कहा जाता है। इनकी सीमाओं का यह भी एक कारण है। परंतु इधर की खोजों से 'रासो' की अन्य परम्पराओं का भी पता चला है। 'रासो' की भाषा पर विचार करते समय इन परम्पराओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। पाठ-परंपरा की उपेक्षा करके भाषा-संबंधी किसी सही निर्णय पर पहुँचना संभव नहीं है। विद्वानों का अनुमान है कि इन पाठ-परंपराओं में विषय वस्तु के साथ ही भाषा में भी पर्याप्त अन्तर है। इसलिए तथ्य की छानबीन में प्रवेश करने से पूर्व संक्षेप में 'रासो' की विविध पाठ-परंपराओं का तुलनात्मक अध्ययन कर लेना प्रासंगिक होगा।

---

१. देखिये पृष्ठ २८७—३५६

९. अभी तक पृथ्वीराज रासो की *चार* प्राप्त परंपरायें निश्चित की जा सकती हैं। इसमें से वृहत् रूपान्तर की लगभग ३३, मध्यम की ११, लघु की ५ और लघुतम की २ प्रतियाँ प्राप्त हैं। रायल एशियाटिक सोसायटी और नागरीप्रचारिणी सभा के प्रकाशित संस्करणों का संबंध वृहत् रूपान्तर से है। सभा का संस्करण जिन दो मुख्य प्रतियों पर आधारित है उनमें से प्राचीनतम प्रति का लिपि-काल कुछ अस्पष्ट है। संपादकों के अनुसार वह सं० १६४० अथवा १६४२ है परंतु मेरे देखने में वह १७६७ प्रतीत होता है[1]। उसकी एक फोटो कापी अन्यत्र दी जा रही है ताकि इस विषय के विशेषज्ञ उसका निर्णय स्वयं कर लें। संभवतः ये सभी प्रतियाँ उदयपुर की उस प्रति पर आधारित हैं जिसका लिपिकाल सं० १७६० वि० बतलाया जाता है और जो उदयपुर के महाराणा अमर सिंह द्वितीय (सं० १७५५–६७ वि०) के राज्य-काल में तैयार हुई थी। अन्य परंपराओं की प्रतियाँ अभीतक हस्तलिखित रूप में ही सुरक्षित हैं। यहाँ उदयपुर वाली हस्तलिखित प्रति को आधार मानकर विभिन्न परंपराओं अथवा रूपान्तरों की तुलनात्मक तालिका प्रस्तुत की जा रही है।

१. इन संख्याओं के भ्रान्त अथवा विवादास्पद पाठ का एक कारण तो यह है कि उन पर सामने वाले पन्ने की स्याही की छाप पड़ गई है जिससे चार संख्याओं में से तीसरी संख्या कुछ अस्पष्ट हो गई है किन्तु दूसरा कारण उन संख्याओं की लिपि-शैली भी है। सात की संख्या प्रायः शून्य की भाँति गोलाकार लिखी गई है, अन्तर इतना ही है कि इसमें ऊपर की ओर बाईं ओर थोड़ा सा हिस्सा खुला हुआ है। प्रति में अन्यत्र लिखित संख्याओं की लिपि-शैली को देखने से पता चलता है कि यह संख्या सात की ही है। इसी प्रकार प्रति की लिपि-शैली के द्वारा तीसरी अस्पष्ट संख्या का भी पाठ-निर्णय हो जाता है और वह छह ही है। इस प्रकार मेरे विचार से इस प्रति का लिपि-काल १७६७ वि० होना चाहिए।

१०. विविध रूपान्तरों के खंडों की तालिका[१]

(१) चारों रूपान्तरों में पाए जाने वाले खंड[२]

१. आदि पर्व	(१)[३]	६. कैमासवध	(५७)
२. दिल्ली किल्ली दान	(३)[४]	७. षट रितु वर्णन	(६१)[६]
३. अनंगपाल दिल्ली दान	(१८)[४]	८. कनवज कथा	(६२)[७]
४. पंग यज्ञ विध्वंस	(४६)[५]	९. बड़ी लड़ाई	(६८)[७]
५. संजोगिता नेम आचरण	(५०)[५]	१०. बानबेध	(६९)[८]

१. (क) यहाँ खंडों की संख्या प्रायः महाराणा अमर सिंह की १७६० वाली प्रति के अनुसार है। केवल समरसी दिल्ली सहाय खड को, जो इस प्रति में बड़ी लड़ई के अंतर्भूत है, प्राचीन प्रतियों के अनुसार अलग दिखाया गया है जिससे संपूर्ण खंड संख्या ६९ के स्थान पर ७० हो जाती है। क्रम में भी आखेटक चख श्राप खंड को प्राचीन प्रतियों का अनुसरण करते हुए धीर पुंडीर खंड के पीछे रखा गया है।

(ख) बड़े रूपान्तरों के जो खंड छोटे रूपान्तरों में आए हैं वे ज्यों के त्यों नहीं हैं किन्तु उत्तरोत्तर संक्षिप्त होते गए हैं, यहाँ तक कि कई खंड तो छोटे खंडों (रूपान्तरों) में दो चार अथवा एकाध पद्यों के रूप में ही आए जाते हैं। साथ ही बड़े रूपान्तरों के अनेक खड छोटे रूपान्तरों में दूसरे खंडों के अन्तर्भुक्त हो गए हैं। कुछ अवस्थाओं में वृहत् रूपान्तर के खंड छोटे रूपान्तरों में कई खंडों में विभक्त हो गए हैं वृहत् रूपान्तर के उक्त १० खंडों के स्थान पर मध्यम रूपान्तर में २० और लघु रूपान्तर में १४ खड हैं।

२ लघुतम रूपान्तर खंडों में विभक्त नहीं है। अत: उसमें खंड नहीं हैं पर वृहत् रूपान्तर के इन खंडो के प्रसंग उसमें किसी न किसी रूप में आए हैं।

३. लघु रूपान्तर में यह दो खंडों में विभक्त है। प्रथम में मंगलाचरण (और दशावतार प्रसंग) है तथा दूसरे में वंशावली। दूसरे खंड में वृहत् रूपान्तर के ढिल्ली किल्ली (३), अनंगपाल दिल्लीदान (१८) तथा धनकथा (२४) खंडों के प्रसंग भी आ गए हैं।

४. लघु रूपान्तर में ये प्रसंग बहुत संक्षेप में वंशावली वाले द्वितीय खंड में आए हैं। लघुतम रूपान्तर में इसका कथन और भी अधिक संक्षिप्त है।

५. लघु रूपान्तर में ये दोनों प्रसंग एक ही खंड में आ गए हैं। मध्यम रूपान्तर में ये बालुका राइ वध खड में अन्तर्भुक्त हो गए हैं।

६. वृहत् और लघुतम रूपान्तरों में यह प्रसंग कनवज-कथा के पूर्व आया है पर लघु और मध्यम रूपान्तरों में धीर पुंडीर प्रसंग के पश्चात्। मध्यम रूपान्तर में वह स्वतन्त्र खंड है पर लघु रूपान्तर में धीर पुंडीर प्रसंगवाले खंड का अंग है।

७. मध्यम रूपान्तर में ये प्रसंग क्रमशः आठ और चार खंडों में विभक्त हैं, और लघु रूपान्तर में क्रमशः छै और पाँच खंडों में।

८ मध्यम रूपान्तर की कई प्रतियों में यह प्रसंग नहीं पाया जाता।

(२) केवल वृहत् मध्यम और लघु रूपान्तरों में पाए जानेवाले खंड

११. दशम या दसावतार वर्णन	(२)[१]	१४. धनकथा	(२४)
१२. भोरा राइ जुद्ध, सामंतविजै	(१२)[२]	१५. संयोगिता विनय मंगल	(४६)
१३. सलख पातिसा ग्रहण	(१३)[२]	१६. धीर पुंडीर	(६४)[३]

(३) केवल वृहत् और मध्यम रूपान्तरों में पाए जाने वाले खंड

१७. नाहर राइ	(७)	२७. पीपा पातिसाह ग्रहण	(३१)
१८. मेवाती मूगल	(८)	२८. हंसावती	(३६)
१९. हुसेन कथा (पातिसाह प्रथम जुद्ध)	(९)[४]	२९. वरुण कथा	(३८)
२०. इंछुनी विवाह	(१४)[५]	३०. सोमेस वध	(३९)
२१. मूगल जुद्ध	(१५)	३१. भीमंग वध	(४४)
२२. भूमि स्वप्न	(१७)[६]	३२. संजोगिता पूर्वजन्म	(४६)
२३. माधो भाट	(१९)[७]	३३. बालुकाराइ वध	(४८)[८]
२४. प्रिथा विवाह	(२१)	३४. सामंत पंग जुद्ध	(५५)
२५. ससिव्रता	(२५)	३५. समरसी पंग जुद्ध	(५६)
२६. कर्णाटी पात्र कथा (निड्ढर राइ आगमन)	(३०)	३६. दुर्गा केदार कथा पातिसाह ग्रहण	(५८)

३७—सुक विलास या सुक चरित्र (६३)[९]

१. लघु रूपान्तर में यह प्रसंग प्रथम खंड में आया है।

२. लघु रूपान्तर में यह प्रसंग भोराराइ जुद्ध खंड के पीछे नहीं किन्तु पहले आया है।

३. मध्यम रूपान्तर में यह खड दो खंडों में विभक्त है—एक में धीर द्वारा पातिसाह ग्रहण की कथा है और दूसरे में धीर वध की। लघु रूपान्तर में धीरवध की कथा नहीं है। उसमें पृथ्वीराज दिल्ली आगमन धीरपातिसाह ग्रहण तथा षटरितुवर्णन तीनों प्रसंग तीन की जगह एक ही खंड में आ गये हैं।

४. मध्यम रूपान्तर की कुछ प्रतियों में यह खंड नहीं है। एक प्रति में अंत में अलग से दिया हुआ है।

५. इस खंड का दूहा लघु रूपान्तर में भीम पराजय (भोरा राइ जुद्ध सामंत विजै) खंड में पाया जाता है।

६. मध्यम रूपान्तर में यह प्रसंग धनकथा (खट्टू बन आखेटक रमण) खंड का पूर्व-भाग है।

७. मध्यम रूपांतर में यह प्रसंग दिल्ली राज्याभिषेक (अनंगपाल दिल्ली दान) खंड का उत्तरभाग है।

८. मध्यम रूपांतर में यह प्रसंग पंग यज्ञ विध्वंस और संयोगिता नेम आचरण खंडों का पूर्व भाग है अर्थात् वृहत् रूपांतर के इन तीन खंडों का मध्यम रूपांतर में एक ही खंड है।

९. मध्यम रूपांतर में यह प्रसंग राजसू-जज्ञ–विध्वंस पृथ्वीराज दिल्ली आगमन' खंड का उत्तर भाग है।

(४) केवल बृहत् रूपान्तर में पाए जाने वाले खंड

* ३८. लोहाना आजानुबाहु (४)[१]
३९. कन्ह अंख पट्टी (५)[२]
४०. आखेटक वीर वरदान (६)[२]
४१. खट्टू आखेट सुरतान चूक करण (१०)
४२. चित्ररेखा पूर्व जन्म (११)
४३. पुंडीर दाहिमी विवाह (१६)
* ४४. पद्मावती विवाह पतिसाह ग्रहण (२०)[१]
* ४५. होली कथा (२२)[१]
* ४६. दीपमाला कथा (१३)[१]
४७. देवगिरि जुद्ध (२६)
४८. रेवातट जुद्ध (२७)
४९. अनंगपाल जुद्ध (२८)
५०. घघ्घर की लड़ाई (२९)
५१. करहेड़ा जुद्ध (३२)
५२. इन्द्रावती विवाह (३३)
५३. जैतराइ पातिसाह ग्रहण (३४)
५४. कांगुरा विजै (३५)
५५. पहाडराइ पातिसाह ग्रहण (३७)
५६. पज्जून कछवाहा छोंगा (४०)
५७. पज्जून विजय (४१)
५८. चंद द्वारका गमन (४२)
५९. कैमास पातिसाह ग्रहण (४३)
६०. सुक वर्णन (४७)
६१. हांसी प्रथम युद्ध (५१)
६२. हांसी द्वितीय युद्ध (५२)
६३. पज्जून महुआ जुद्ध (५३)
६४. पज्जून कछवाहा पतिसाह ग्रहण (५४)
६५. दिल्ली वर्णन (५९)
६६. जंगम सोफी कथा (६०)
६७. राजा आखेटक चख श्राप (६५)[३]
* ६८. प्रथिराज-विवाह (६६)[१]
६९. समरसी दिल्ली सहाय (६७)[४]
७०. रैनसी जुद्ध (७०)

---

१. ये पांच खंड बृहत् रूपांतर की प्राचीन-तम प्रतियों में नहीं पाये जाते।

२. ये दो खंड मध्यम रूपांतर की सबसे पिछली प्रति में पाये जाते हैं।

३. महाराणा अमरसिंह की १७६० वाली प्रति में यह खंड धीरपुंडीर खंड के पहले है पर प्राचीन प्रतियों में पीछे।

४. महाराणा अमर सिंह की प्रति में यह प्रसंग बड़ी लड़ाई खंड में अन्तर्भुक्त हो गया है।

११. पृथ्वीराज रासो के रूपान्तरों के खंडों की तुलनात्मक तालिका

वृहत रूपान्तर †			मध्यम रूपान्तर ❀			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
१	३६७	आदि पर्व	१	१२५	आदि प्रबंध	१	मंगलाचरण	+
					मंगलाचरण		दशावतार	×
					वंशावली	२	वंशोत्पत्ति	+
					ढुंढा दाणव कथा		(ढुंढा दाणव कथा)	+
					वंशावली		(वंशावली)	+
					राजा जन्म कथा		(राजा जन्म कथा)	+
							द्रव्य लाभ	+
							ढिल्लीराज्याभिषेक	+
२	२२२	दशम	२	११३	दशावतार वर्णन	[१]	+	×
३	३७	दिल्ली किल्ली	३	२३	राजा स्वप्न, दिल्ली किल्ली	[२]	उल्लेख मात्र	उल्लेख मात्र
*४	[१८]	लोहाना आजान बाह			×	-	×	×
५	६०	कन्ह अक्ख पट्ट बंधन			×	-	×	×
६	११०	आखेटक वीर वरदान			×	-	×	×

† वृहत् रूपान्तर के खंडों संख्या की महाराणा अमरसिंह की १७६० वाली प्रति के अनुसार है पर समरसी दिल्ली सहाय खंड को प्राचीन प्रति का अनुसरण करते हुए स्वतंत्र रखा गया है जिससे संख्या में एक की वृद्धि होती है। प्राचीन प्रतियों के अनुसार धीर पुंडीर खंड को आखेटक चख श्राप के पूर्व रखा गया है। रूपकों की संख्या ना० प्र० सभा की १७६७ वाली प्रति के अनुसार दी गई है।

❀ मध्यम रूपान्तर के खंडों की संख्या और क्रम तथा रूपकों की संख्या अबोहर की १७२३ वाली प्रति के अनुसार दी गई है।

* तारकांकित (*) खंड वृहत् रूपान्तर की प्राचीन प्रतियों में नहीं है। सं० १७६० वाली प्रति में पहले पहल मिलते हैं। इनकी रूपक-संख्या कोष्ठकों में इसी मति के अनुसार दी गई है।

१. मध्यम रूपान्तर की सं० १७६२ की प्रति में यह खंड दो खंडों में विभक्त है।

२. मध्यम रूपान्तर की सं० १७६२ की प्रति में ये दोनों खंड भी दिए हुए हैं।

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
क्र. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	क्र. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	क्र. सं.	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
७	१२०	नाहरराय कथा	६	४८	नाहरराज पराजय पृथ्वीराज विजय पृथ्वीराज विवाह		×	×
८	४५	मेवाती मूगल कथा	७	१५	मूगल पराजय पृथ्वीराज विजयकरण	-	×	×
९	६०	हुसेन खाँ चित्ररेखा पात्र पातसाह ग्रहण[1]	४ -	८५ -	गोरी पातिसाह पृथ्वीराज प्रथम जुद्ध वर्नन[1]		×	×
१०	३०	खट्टू वन आखेट सुरतान चूककरण	-	-	×	-	×	×
११	१८	चित्ररेखा वर्णन			×	-	×	×
१२	२२२	भोरा राइ जुद्ध सामंत विजै	११	१५८	भोरा राइ भीमंगदे पराजय मंत्रि कैमास विजै	५	कैमास मंत्रिणा भीम पराजय	×
१३	६६	सलख जुद्ध पातिसाह ग्रहण	१२	४५	पामार सलख हस्तेन पातिसाह ग्रहण	४	सामंत सलख पांवार हस्तेन गोरी साहाबदीन निग्रह	×
१४	११७	इंछिनी विवाह वर्णन	१३	५७	इंछिनी विवाह, सुक- सुकी वाक्य, दूतता, संजोगिता पातिव्रत	- -	×	×
१५	२०	मूगल जुद्ध	१५	१४	आखेटके सोलकी सारंगदे हस्तेन मूगल ग्रहण		×	×

१. मध्यम रुपान्तर की कई प्रतियों में यह खंड नहीं पाया जाता। ज्ञान भंडार की प्रति में वह अंत में अलग से दिया गया है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं. सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं. सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं. सं०	ंड का नाम	यह प्रसंग हैं + या नही है ×
१६	१६	पुंडीर दाहिमी विवाह	-	-		-	×	×
१७	४७	भूमि स्वप्न[1]	[५]	-	भूमि सुपन सगुन कथा	-	×	×
१८	४८	अनंगपाल दिल्ली दान[2]	६	६४	दिल्ली राज्याभिषेक	[२] -	ढिल्ली राराज्याभिषेक	+
१९	१३१	माधो भाट राजा विजय पातिसाह ग्रहण[2]	६	६४	जुद्ध विजय पतिसाह पराजय चामुंड राइ हस्तेन पातिसाह ग्रहण		×	×
*२०	[४५]	पद्मावती विवाह पातिसाह ग्रहण	-		×	-	×	×
२१	६६	प्रिथा विवाह	२३ -	२७ -	समरसी प्रिथाकुंवारी विवाह	-	×	×
*२२	२२	होली कथा	-	-	×	-	×	×
*२३	३५	दीपमालिका पर्व			×	-	×	×
२४	३१४	खट्टूवन मध्ये आखेटक रमण, धन संग्रहण, पातिसाह ग्रहण, [धन कथा][1]	५	१११	[भूमि सुपन, सगुन कथा] पृथ्वीराज युद्ध विजय धनागम, पातिसाह ग्रहण	[२]	द्रव्यलाभ	×
२५	५३९	ससिव्रता कथा	२२	३९	ससिव्रता विवाह जुद्ध विजय		×	×
२६	६३	देवगिरि जुद्ध	-	-	×	-	×	×
२७	८८	रेवातट पातिसाह ग्रहण	-	-	× ×	-	× ×	× ×

१. मध्यम रूपान्तर में बृहत् रूपान्तर के १७ वें और २४ वें खंडों की कथा एक ही खंड में आई है।

२. मध्यम रूपान्तर में बृहत् रूपान्तर के १८ वें और १९ वें खंडों की कथा एक ही खंड में आई है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
२८	६८	अनंगपाल दिल्ली आगमन, पृथ्वीराज जंग जुरन, बद्री सरन	-	-	×	-	×	×
२६	४५	घग्घर नदी की लड़ाई कन्ह पातिसाह ग्रहण	-	-	×		×	×
३०	२३	कर्णाटी पात्र वर्णन	१६	१८	राठौर निड्ढर दिल्लीआगमन, कर्णाटीपात्र कथा	-	×	×
३१	७१	पीपा पड़िहार पातिसाह ग्रहण	१६	१८	वर्णनपरिहार पीपजुद्धविजय पीपा हस्तेन गोरी ग्रहण	- -	×	×
३२	७०	करहड़ा जुद्ध रावर समरसी विजय	-	-	×	-	×	×
३३	६०	इन्द्रावती विवाह सामंत विजय	-	-	×	-	×	×
३४	३७	जैतराइ पातिसाह ग्रहण	-	-	×	-	×	×
३५	३१	कांगुरा विजय	-	-	×	-	×	×
३६	१५४	हंसावती विवाह	२४	२७	रणथंभौर हंसावती विवाह	-	×	×
३७	७१	पहाड़राइ पातिसाहग्रहण	-	-	×	-	×	×
३८	३५	वरुण कथा	१४	३३	सोमेस राजा जमुना गते वरुण दूत सामंत उभयो युद्ध वर्णन	-	×	×
३६	८५	भोरा भीम विजय सोम वध	२०	४८	भोरा राइ विजय युद्ध वर्णन	-	×	×

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	खं. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	खं. सं.	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
४०	१४	पज्जून कछवाहा छोंगा	-	-	×	-	×	×
४१	२८	पज्जून विजय पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
४२	४८	चंद द्वारका गमन देव मिलन, परस्पर वाद जुरन	-	-	×	-	×	×
४३	७६	खटट्ठू वन मध्ये कैसास पातिसाह ग्रहन	-	-	×	-	×	×
४४	१४१	भोरा राइ भीमंग वध	-	-	भोराराइ भीमंगदे वधन	-	×	×
४५	१४१	संजोगिता पूर्वजन्म कथा	८	३८	संजोगिता पूर्वजन्म कथा	-	×	×
४६	८३	संजोगिता को विनय मंगल	१०	५८	विजयपाल दिग्विजय करण, संजोगिता उत्पत्ति मदन वृद्ध बंभनी गृहे सकल कला पठनार्थ दुज-दुजी गंधर्वगंधर्वीसंवाद	३	संयोगिता उत्पत्ति द्विज द्विजी संवाद गंधर्व गंधर्वी संवाद	×
४७	७८	सुकवर्णन	-	-	×	-	×	×
४८	११५	बालुकाराय वध[1]	२५	७२	बालुकाराय वधन	-	×	×
४९	१७	पंग यज्ञ विध्वंस[1]	,,	-	[यज्ञ विध्वंस]	६	यज्ञ विध्वंस	+

१. वृहत् रूपान्तर के ४८, ४९ और ५० नंबर के तीन खंडों की कथा मध्यम रूपान्तर में एक ही खंड में आयी है। लघु रूपान्तर में ४८ वें खंड की कथा नहीं है, बाकी दोनों खंडों की कथा एक ही खंड में है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
क्र. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	क्र. सं.	रूपक सं०	खंड का नाम	क्र. सं.	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
५०	५५	संजोगिता नेम आचरण[1]	,,	-	संजोगिता दूती परस्पर वार्ता		पृथ्वीराज वरणार्थ संजोगिता नियम	+
५१	८६	हांसी पुर प्रथम युद्ध पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
५२	११३	हांसीपुर द्वितीय जुद्ध पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
५३	२६	पज्जून महुवा जुद्ध पातिसाह पराजय	-	-	×	-	×	×
५४	३४	पज्जून कछवाहा पातिसाह ग्रहण	-	-	×	-	×	×
५५	१२५	सामंत पंग जुद्ध	१७	६२	पंग सामंत जुद्ध	-	×	×
५६	६०	जैचंद समरसी जुद्ध	१८	४७	जैचंद समर जुद्ध	-	×	×
५७	१८०	चामंड वेड़ी भरण कन्नाटी दासी खून	२६	८७	चमुंड वेड़ी	-	×	×
		कैमास वध			मंत्रि कैमास वध	७	कैमास वध	+
५८	१६८	दुर्गा केदार	२७	५२	राजा पानी पंथ मृगया, चंद केदार संवाद, पाहार हस्तेन पातिसाह ग्रहण	-	×	×
५९	१७	दिल्ली वर्णन	-		×	-	×	×
६०	५७	जंगम सोफी कथा सिव पूजा	-		×	-	×	×
६१	५४	षट रितु वर्णन[1]	३८	३४	षट रितु श्रृङ्गार वर्णन[2]	[१३]	षट रितु वर्णन[2]	+

१. ना. प्र. स. के मुद्रित संस्करण में ६१ वां खड ६२ वें खंड के आरम्भ में आया है।

२. मध्यम और लघु रूपान्तरों में षटरितु प्रसंग धीर पुन्डीर कथा के पश्चात् आता है।

[६०१]

वृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खंड सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खंड सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खंड सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग हैं + या नहीं है ×
६२	११८४	कनवज्ज कथा[3]	२८	६८	कनवज वर्णन जैचंद द्वार संप्राप्त	८	जयचंद द्वार संप्राप्त	+
			२६	१४२	चंद जैचंद संवाद	६	जयचंद संवाद	+
					चंद अखाड़ो			
					पृथ्वीराज प्रगटन		संजोगिता विवाह	+
			३०	६१	प्रथम लंगरी राय जुद्ध वर्णन संजोगिता विवाह	,,		
			३१	६८	अष्टमी शुक्ल प्रथम दिवस जुद्ध	१०	अष्टमी प्रथम दिवस जुद्ध	+
			३२	७१	नवमी शनिवार द्वितीय दिवस जुद्ध	११	नौमी द्वितीय दिवस जुद्ध	+
			३३	४४	पृथ्वीराज सोरों प्राप्त	,,		
			३४	१६	दशमी रविवार तृतीय दिवस जुद्ध	१२	दशमी तृतीय दिवस जुद्ध	+
			३५	६८	राजसू जग्य विध्वंस ढिल्लीपुर आगमन संजोगिता पाणिग्रहण	१३	दिल्ली आगमन	+
६३	१०१	सुक विलास (सुकचरित्र)[4]	,,	-	राज शुक चरित्र	-	×	×
६४	३०६	धीर पुंडीर पातिसाह ग्रहण	३६		धीर पुंडीर हस्तेन पातिसाह ग्रहण	,,	धीरेण साहाबदीन निग्रह	+
		धीर वधन[5]	३७		धीर पुंडीर वध	-	×	×

३. वृहत् रूपान्तर का कनवज्ज कथा खंड मध्यम रूपान्तर में आठ खंडों तथा लघु रूपान्तर में ६ खंडों में विभक्त है।

४. वृहत् रूपान्तर का सुक विलास खंड मध्यम रूपान्तर के दिल्ली आगमन खंड में अन्तर्भुक्त हो जाता है।

५. वृहत् रूपान्तर का ६४ वाँ खंड मध्यम रूपान्तर की अधिकांश प्रतियों में दो खंडों में विभक्त है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
[६१]		षट रितु वर्णन (ऊपर देखिए)	[३८]		षट रिति शृङ्गार वर्णन	,,	षट रितु वर्णन[६]	+
६५	११६	राजा आखेटक चख श्राप[७]	-		×	-	×	×
६६	[३]	प्रथिराज विवाह	-		×	-	×	×
६७	४६	समरसी दिल्ली सहाय[८]			×		×	×
६८	८६२	बड़ी लड़ाई	३६	१६७	राजा स्वप्न कथा	१४	चामुंड बंध मोचन	+
		राजा ग्रहण			रावल समरसी आगमन		सर्व सामंत मंत्र	+
		चंद दिल्ली आगमन[९]			चामुंड राइ बंध मोचन			
					सूर सामंत मंत्र वर्णन			
			४०	१७३	जालंधर देवी स्थाने	१५	चंद विरोध	×
					हाहुलिराइ हम्मीरेण व्याजेन चंद निरोधन युद्धार्थ सेना समागम			
					गृद्ध व्यूह रचना		व्यूह रचना	+
					जालंधर देवी स्थाने	१६	युद्ध वर्णन	+
					महेश वीरभद्र यज्ञ वेताल योगिनी संवाद			

६. लघु रूपान्तर में दिल्ली आगमन, धीर पुन्डीर पातिसाह ग्रहण तथा षट रितु वर्णन प्रसंग एक ही खंड में आए हैं।

७. सं० १७६० की और पिछली कई प्रतियों में आखेटक चख श्राप खंड धीर पुन्डीर खंड के पहले आया है।

८. सं० १७६० और पीछे की प्रतियां में बड़ी लड़ाई खंड के अंतर्गत।

९. बृहत् रूपान्तर का बड़ी लड़ाई खंड मध्यम रूपान्तर की अधिकांश प्रतियों में ४ खंडों में, तथा लघु रूपान्तर में पाँच खण्डों में विभक्त है।

बृहत् रूपान्तर			मध्यम रूपान्तर			लघु रूपान्तर		लघुतम रूपान्तर
खं० सं०	रूपक सं०	का नाम	खं० सं०	रूपक सं०	खंड का नाम	खं० सं०	खंड का नाम	यह प्रसंग है + या नहीं है ×
			४१	४७	जुद्ध वर्णन समली गिधनी संजोगिताग्रे सूर सामंत पराक्रम कथन-वीर विभाइ आगमन	१७	युद्ध वर्णन	+
			४२	६६	जुद्ध वर्णन वीर विभाइ संजोगिताग्रे सूर सामंत पराक्रम वर्णन, संजोगिता सूर्यमंडल आगत, पृथ्वीराज ग्रहण, जालंधर देवी स्थाने चंद वीरभद्र परस्पर वार्ता, चंद मोक्षण, चंद ढिल्ली आगमन	१८	राजा ग्रहण चंद इन्द्र-प्रस्थागमन	+
				[४८३]				
६९	३३८	बान बेध, राजा चंद सुजस करन, पश्चात् वधन	४३	१६७	कविचंद गजनपुर आगत— गोरी चंद परस्पर वार्ता— पृथ्वीराज हस्तेन गोरी साहाबदीन वधन[1]	१९	पृथ्वीराज गोरी साहाबदीन मरण	+
७०	११२	रैनसी जुद्ध जैचंद गंगासरन[2]	-	-	×	-	×	×

१. मध्यम रूपान्तर की कुछ प्रतियों में यह खण्ड नहीं पाया जाता।

२. मुद्रित प्रति में इस खण्ड की संख्या ६८ वीं है।

५० रासो की परम्पराओं का पौर्वापर्य सम्बन्ध

१२. कथा प्रसंगों और खंडों की तुलनात्मक तालिका से इन चारो रूपान्तरों के पारस्परिक सम्बन्ध का पता चलता है परन्तु वह संबंध किस प्रकार का है, इसका निश्चय इस आधार पर करना सरल नहीं है। डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे विद्वान का अनुमान है कि अन्तिम तीनों रूपान्तर वृहत् से ही क्रमशः संक्षिप्त किए गये हैं।[1] इसके विपरीत अगरचंद नाहटा और नरोत्तमदास स्वामी की धारणा है कि वृहत् रूपान्तर लघुतम का परिवर्धित और प्रक्षेपपूर्ण रूप है।[2] पाठ-विज्ञान के विशेषज्ञ डा० माताप्रसाद गुप्त ने 'बलाबल' की दृष्टि से वृहत् मध्यम और लघु तीन रूपान्तरों की तुलना करते हुए यह स्थापित किया है कि लघु और मध्यम वृहत् के अथवा लघु मध्यम का संक्षिप्त रूपान्तर नहीं है। डाक्टर गुप्त के विश्लेषण का सारांश इस प्रकार है—

विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि वृहत् तथा मध्यम में ४६ स्थानों में से केवल १६ स्थानों पर बलाबल सम्बन्धी समानता है, शेष स्थानों पर विषमता है। वृहत् और लघु में ४६ स्थानों में से केवल ५ स्थानों पर समानता है, शेष स्थानों पर विषमता है, और मध्यम तथा लघु में ५१ स्थानों में से केवल २४ स्थानों पर विषमता है। यदि वृहत् से मध्यम या वृहत् से लघु या मध्यम से लघु का संक्षेप हुआ होता, तो तीन में से किन्हीं भी दो पाठों में तो इस प्रकार की विषमता न होती। होता यह कि वृहत् की तुलना में मध्यम और लघु में और मध्यम की तुलना में लघु में अतिशयोक्ति की मात्रा अधिक मिलती। किन्तु बात सर्वथा भिन्न मिलती है। दो चार अपवादों को छोड़कर जो प्रतिलिपि-प्रक्रिया में हो ही जाते हैं, जहाँ पर भी बलाबल सम्बन्धी अन्तर है, लघु की अपेक्षा मध्यम में मध्यम की अपेक्षा वृहत् में और मध्यम तथा लघु दोनों की अपेक्षा वृहत् में ही अतिशयोक्ति की प्रबलता है। इसलिए यह

---

१. संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो, भूमिका, १६५२ ई०।

२. राजस्थान भारती, भाग १, अप्रैल १६४६ ई०।

अनुमान निराधार है कि लघु और मध्यम वृहत् के अथवा लघु मध्यम का संक्षिप्त रूपान्तर है।"[१]

इस तुलना-क्रम में डा० गुप्त ने लघुतम रूपान्तर को नहीं लिया है, फिर भी इस निष्कर्ष के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जो रूपान्तर आकार की दृष्टि से लघुतर है वे अपने से बड़े रूपान्तरों के संक्षिप्त रूप नहीं हैं। यह नियम लघुतम रूपान्तर के विषय में भी लागू हो सकता है।

परन्तु इससे यह तो साबित नहीं होता कि अपेक्षाकृत बड़े रूपान्तर छोटे रूपान्तरों के परिवर्धित रूप हैं। इस आधार पर यह भी नहीं कहा जासकता कि बड़े आकार वाले रूपान्तर परवर्ती हैं। इस तुलना से केवल इतना ही स्पष्ट होता है कि इन रूपान्तरों की परम्पराएँ भिन्न हैं। जब तक इन रूपान्तरों के पारस्परिक संबंध पर प्रकाश डालनेवाले अन्य तथ्य खोज नहीं निकाले जाते, तबतक इससे अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता। रूपान्तरों के पौर्वापर्य-सम्बन्ध काल-निर्णय के दूसरे आधार भी हो सकते हैं।

वृहत् और लघुतम में भाषा-भेद

१३. भाषा-विज्ञान के विद्यार्थी के लिए इन रूपान्तरों के भाषा-सम्बन्धी तथ्यों का तुलनात्मक अध्ययन विशेष उपयोगी है। यदि सभी रूपान्तरों से मिलते-जुलते कुछ समान छंद एक साथ लिए जायँ और फिर उनमें से समान शब्दों के सभी प्राप्त रूपों को रूपान्तर-क्रम से देखा जाय तो विकास की विभिन्न अवस्थाओं का पता चल सकता है। सुविधानुसार यहाँ वृहत् और लघुतम केवल दो रूपान्तरों के कनवज समय से दो उभयनिष्ठ छंद लिए जा रहे हैं। वृहत् रूपान्तर के उद्धरण नागरी प्रचारिणी सभा की प्रति से लिए गये हैं और लघुतम रूपान्तर के उद्धरण धारणोज की प्रति से।

ग्यारह सइ इक्कावनइ चैत तीज रविवार।
कनवज विक्खण कारणइ चालिउ संभरिवार॥

१. 'पृथ्वीराज रासो' के तीन पाठों का आकार-सम्बन्ध, अनुशीलन, वर्ष ७, अंक ४, अगस्त १९५५ ई०।

सत सुभट्ट ले संम्रुही पंगुराय ग्रिह साज ।
कै जानइ कवि चंद अरु कै जानइ प्रिथीराज ॥
लघुतम, कनवज समय, १–२

ग्यारह से एकानवै चैत तीज रविवार ।
कनवज पिखन कारनैं चल्यो सु संमरिवार ॥
कै जानै कवि चंद इ कै प्रयांन पृथीराज ।
सित सामंत सुसंमुहे पंगुराय ग्रह काज ॥
वृहत्, कनवज समय, १०२, ७८

(क) इन छन्दों में से तुलना के लिये एक ओर *इक्कावनइ* और *दिख्खण* तथा दूसरी ओर *एकानवै* और *पिखन* शब्द लिए जा सकते हैं। लघुतम रूपान्तर में यदि व्यंजन-द्वित्व सुरक्षित है तो वृहत् में उसका सरलीकृत रूप मिलता है। सरलीकरण के लिये एक जगह सरलीकृत व्यंजन से पूर्ववर्ती स्वर को क्षतिपूर्ति के लिये दीर्घ कर दिया गया है[1], तो दूसरी जगह पूर्ववर्ती स्वर को दीर्घ किए बिना ही व्यंजन का सरलीकरण हो गया है। इसके अतिरिक्त लघुतम के *सइ, इक्कावनइ, कारणइ, जानइ,* इत्यादि शब्दों में अन्त्य संयुक्त स्वर *अइ,* सुरक्षित है तो *सै, एकानवै, कारनैं, जानै* में वे संयुक्त स्वर संकुचित होकर–ऐ हो गये हैं। स्वर संकोचन (Vowel-Contraction) की यह प्रवृत्ति *चालिउ* से बने हुए *चल्यो* रूप में भी देखी जा सकती है।

(ख) व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण और स्वर-संकोचन—ये दोनों प्रवृत्तियाँ अपभ्रंश के बाद की अवस्था के प्रमाण हैं। आधुनिक आर्यभाषाओं में यह प्रवृत्ति क्रमशः प्रबल होती चली गई।

लघुतम की अपेक्षा वृहत् में यह प्रवृत्ति अधिक व्यापक दिखाई पड़ती है।

१—ए, इ का वस्तुतः दीर्घ रूप नहीं है, इ का दीर्घ तो ई होता है लेकिन यहां उच्चारण की दृष्टि से इ और ए में गुण-संबंधी अंतर उतना नहीं है जितना मात्रा संबंधी।

इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि बृहत् की अपेक्षा लघुतम में भाषा के प्राचीन रूप अधिक सुरक्षित हैं।

(ग) *कारणइ* और *कारनैं* की तुलना से लघुतम और बृहत् की भाषा में एक अन्य अंतर का संकेत मिलता है। बृहत् में प्रायः *ण* को *न* कर देने की प्रवृत्ति है; जब कि लघुतम का झुकाव *ण* की ओर है। इसे राजस्थान-गुजरात का प्रादेशिक प्रभाव भी कहा जा सकता है और प्राचीनता का प्रमाण भी माना जा सकता है क्योंकि प्राकृत-अपभ्रंश में *ण* की प्रवृत्ति प्रबल थी।

(घ) इसी तरह 'ग्रिह साज' का 'ग्रह काज' रूपान्तर अर्थान्तर के साथ ही, बृहत् की एक विशेष ध्वनि-प्रवृत्ति को सूचित करता है। लघुतम जहाँ 'ऋ' के लिए 'रि' का प्रयोग किया गया है, वहाँ बृहत् में केवल 'र' है। लघुतम यदि 'प्रिथीराज' का प्रयोग करता है तो बृहत् 'प्रथीराज'। इस अंतर को लिपि-संबंधी प्रभाव भी कहा जा सकता है परन्तु जैसा आधुनिक राजस्थानी की उच्चारण-प्रवृत्ति से पता चलता है, 'प्रिथीराज' के लिये 'प्रथीराज' का उच्चारण वहाँ की प्रादेशिक विशेषता है। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बृहत् के उच्चारण पर कहीं कहीं आधुनिक राजस्थानी का प्रभाव लक्षित होता है किन्तु लघुतम में भाषा के प्राचीनतर उच्चारण की रक्षा की गई है।

(ङ) उपर्युक्त छंदों के अतिरिक्त अन्यत्र पृथ्वीराज रासो के बृहत् रूपान्तर में छन्द के अन्तर्गत मात्रा पूर्ति के लिए संयुक्त व्यंजन के रूप में परवर्ती र के समावेश की प्रवृत्ति बहुत दिखाई पड़ती है। ऐसे संयुक्त-व्यंजन के बाद आने वाले व्यंजन का प्रायः द्वित्व हो जाता है, जैसे :—

कर्म>क्रम्म	*निर्माण>त्रिम्मान*
गंधर्व>गध्रब्ब	*मर्यादा>म्रज्जाद*
गर्व>ग्रब्ब	*सर्प>स्रप्प*
दर्पण>द्रप्पन	*सर्व>स्रब्ब*
घर्म>घ्रम्म	

यह प्रक्रिया सर्वत्र मात्रा-पूर्ति के लिए ही अपनाई गई नहीं प्रतीत होती। कहीं

तो शैली को ओजपूर्ण बनाने के लिए ऐसा किया गया है और कहीं संभवतः स्थानीय उच्चारण का प्रभाव मालूम होता है। इस प्रवृत्ति के लिए चाहे जो संतोषप्रद व्याख्या दी जाय, किन्तु इतना निश्चित है कि लघुतम रूपान्तर की अपेक्षा वृहत् में इसकी बहुलता है। दोनों की भाषा में यह महत्त्वपूर्ण अन्तर है।

(च) शब्द-समूह के विभिन्न तत्वों के विश्लेषण से पता चलता है कि वृहत् रूपान्तर में अरबी-फारसी शब्दों की बहुलता है। वृहत् की अपेक्षा लघुतम में अरबी-फारसी शब्द कम हैं जैसे, *साह (शाह), फवज (फौज), दरबार*, *तुरुक (तुर्क)* इत्यादि। फारसी शब्दों की बहुलता वृहत् रूपान्तर को परवर्ती प्रमाणित करने वाले तथ्यों में से एक कही जा सकती है।

इस प्रकार भाषा की दृष्टि से लघुतम रूपान्तर अपेक्षाकृत प्राचीन शब्द-रूपों को सुरक्षित रखने की ओर प्रवृत्त दिखाई पड़ता है और इसलिए भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन के लिए लघुतम रूपान्तर अधिक उपयोगी कहा जा सकता है।

रासो का केन्द्र : कनवज्ज समय

१४. पृथ्वीराज रासो की समस्त प्राप्त परम्पराओं में जिस प्रसङ्ग का सबसे अधिक विस्तार मिलता है, वह है संयोगिता-विवाह तथा जयचन्द के साथ पृथ्वीराज का युद्ध। वृहत् रूपान्तर में इसका वर्णन **'कनवज्ज समय'** के अन्तर्गत किया गया है। लघुतम रूपान्तर समय, प्रस्ताव, पर्व अथवा खंड के आधार पर विभाजित नहीं है, फिर भी सुविधा के लिए इस प्रसङ्ग को 'कनवज्ज समय' कहा जा सकता है। अन्य रूपान्तरों की तरह लघुतम में भी 'कनवज्ज समय' सबसे बड़ा है। सच पूछा जाय तो लघुतम रूपान्तर में मुख्यतः तीन ही कथा प्रसङ्ग है—कैमास वध, संयोगिता विवाह और पृथ्वीराज-गोरी युद्ध। इन तीनों में से संयोगिता-विवाह की ऐतिहासिकता विवाद-ग्रस्त है। फिर भी इस कथा-प्रसङ्ग का विस्तार और काव्यात्मक सौन्दर्य देखकर विद्वानों ने अनुमान लगाया है कि 'कनवज समय' ही मूल रासो है। डा० धीरेन्द्र वर्मा लिखते हैं कि "पाठक पर पहला प्रभाव यही पड़ता है कि ६१ वाँ कनवज्ज-समय रासो का प्रधान केन्द्रीय समय है। आश्चर्य नहीं कि पृथ्वीराज के संयोगिता के साथ विवाह के

अनुकरण में अन्य कवियों ने शेष नौ विवाहों की भी धीरे-धीरे कल्पना कर डाली हो। इसी प्रकार संयोगिता के पूर्वजन्म तथा पूर्वानुराग आदि से सम्बन्ध रखने वाले अनेक समयों की, जो ४५ से ६६ समयों के बीच पाए जाते हैं, कल्पना धीरे-धीरे हुई हो।"[1]

इस प्रकार 'कनवज्ज समय' पृथ्वीराज रासो का मूल रूप हो या नहीं, किन्तु उसे केन्द्र-विन्दु तो अवश्य ही कहा जा सकता है। तुलसी के रामचरितमानस में जो स्थान द्वितीय सोपान, अयोध्या काण्ड, का है लगभग वही स्थान पृथ्वीराज रासो में कनवज्ज-समय का है। इसमें रासो की साहित्य और भाषा-सम्बन्धी प्रायः सभी प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व हो जाता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखकर प्रस्तुत अध्ययन के लिए लघुतम रूपान्तर के कनवज्ज-समय को आधार बनाया गया है।

बृहत् और लघुतम के कनवज्ज-समय की तुलना

१५. बृहत् कनवज्ज-समय में षड्-ऋतु वर्णन के ७३ छन्दों को लेकर कुल २५५३ छन्द हैं जब कि लघुतम की छन्द संख्या केवल ३४६ है। इस प्रकार बृहत् कनवज्ज-समय लघुतम का सातगुना है। इस आकार-विस्तार को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—वर्णन सम्बन्धी विस्तार और नवीन प्रसंगोद्भावना। जो बात लघुतम में एक छन्द में कही गई है उसे बृहत् ने अनेक छन्दों में विस्तार दिया है। कन्नौज की ओर पृथ्वीराज की यात्रा, गंगा माहात्म्य, कन्नौज नगर की शोभा, जयचन्द की राज-सभा और सैन्य-शक्ति, चन्द के साथ छद्म वेश में पृथ्वीराज का पंग दरबार में प्रवेश, पृथ्वीराज संयोगिता-मिलन तथा गन्धर्व-विवाह, जयचन्द से पृथ्वीराज का युद्ध इत्यादि मुख्य प्रसंग ऐसे हैं जो दोनों रूपान्तरों में समान हैं तथा इनसे सम्बन्धित कुछ छन्द भी प्रायः एक से हैं। बृहत् में उन छन्दों के अतिरिक्त और भी बहुत से छन्द हैं। कहीं तो वर्णन-विशेष से सम्बद्ध उसी ढंग के छन्द अन्त में बढ़ाए गए दिखाई पड़ते हैं और कहीं छन्द का ढंग भी बदल दिया गया है। परन्तु इस प्रकार का विस्तार बहुत कम है। बृहत् रूपान्तर में वस्तुतः लघुतम की अपेक्षा कथा-प्रसङ्ग

---

१. पृथ्वीराज रासो, काशी विद्यापीठ रजत जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, १९४६ ई०, पृ० १७२.

अधिक हैं। उदाहरण के लिए पृथ्वीराज की कन्नौज-यात्रा में बृहत् के अन्तर्गत निम्न-लिखित प्रसङ्ग अधिक हैं—

१. जमुना-किनारे पड़ाव; २. अपशकुनों की लम्बी सूची[१]; ३. सामन्तों का नाम-परिगणन और वर्णन; ४. अलौकिक घटनाएँ; जैसे एक-एक करके देवी, शिव, हनुमान, इन्द्र सहस्रबाहु और सरस्वती अलग-अलग आदमियों को आकर दर्शन देते हैं और भविष्यवाणी करके अभय देते हैं; एक अतिमानवीय सुन्दरी सहसा पृथ्वीराज को अजेय बाण देकर लुप्त हो जाती है; ५. नागा साधुओं की फौज; ६. सङ्खधुनी साधुओं का वर्णन ;

यह विस्तार स्पष्ट रूप से अनावश्यक और अप्रासङ्गिक है। अपशकुनों की कल्पना केवल प्रमुख सामन्तों की मृत्यु को पुष्ट करने के लिए बाद में की गई और पूर्व सूचना के रूप में जोड़ी गई प्रतीत होती है। अलौकिक और अतिमानवीय घटनाओं के लिए भी ऐसी ही व्याख्या प्रस्तुत की जा सकती है।

जयचन्द के दरबार में चन्द के प्रवेश को लेकर भी इसी प्रकार चन्द की अलौकिक प्रतिभा के अनेक प्रमाण दिए गए हैं। चन्द और जयचन्द की बातचीत में भी 'वरद्द' शब्द पर श्लेष-जनित नोक-झोंक एकदम नई चीज है। परन्तु इससे भी बढ़कर विचित्र बात वह है जब चन्द जयचन्द को यह बतलाता है कि जिस समय महाराज दक्षिण गए थे, शहाबुद्दीन गोरी ने कन्नौज पर आक्रमण किया था और पृथ्वीराज ने उनकी अनुपस्थिति में कन्नौज की रक्षा की थी। इस घटना का वर्णन बृहत् में शताधिक छन्दों में किया गया है। प्रसङ्ग को देखते हुए यह घटना सर्वथा अप्रासंगिक प्रतीत होती है। यदि यह सच भी होती, तो सम्भव नहीं प्रतीत होता कि जयचन्द इतनी महत्वपूर्ण घटना से अब तक अनभिज्ञ रहे होंगे और चन्द को उसकी याद दिलाने की जरूरत पड़ी होगी। इसी प्रकार चन्द के सेवक रूप में छद्मवेशी पृथ्वीराज को कुछ-कुछ पहचान लेने के बाद भी जयचन्द का शिकार के लिए तैयारी करना अविश्वसनीय प्रतीत होता है। स्वयं महाराज जयचन्द का कवि चन्द के डेरे पर जाना भी बृहत् रूपान्तर की ऐसी ही अविश्वसनीय घटनाओं में से एक है। पृथ्वीराज के

१. लघुतम में केवल शकुनों का उल्लेख है।

वास-स्थान को छोड़ते समय जिस विस्तार से जयचन्द की सेना का वर्णन किया गया है और साथ ही जयचन्द द्वारा पृथ्वीराज को पकड़ने के लिए मुसलमानी सेना को आज्ञा देने की बात कही गई है, उसे भी वृहत् की अपनी कल्पना समझनी चाहिए। आगे चलकर युद्ध वर्णन में ऐसे बहुत से नये सामन्तों के शौर्य की चर्चा आई है जो लघुतम में अनुल्लिखित हैं।

संक्षेप में वृहत् रूपान्तर के कनवज्ज समय के इतने विस्तार का यही आधार है।

१६. वृहत् और लघुतम कनवज्ज समय के छन्द क्रम में भी कहीं-कहीं परिवर्तन दिखाई पड़ता है। कथा-प्रवाह और प्रासंगिकता की दृष्टि से वे छन्द लघुतम में जिस क्रम से आये हैं, वह ठीक प्रतीत होता है। मेरे विचार से क्रम-भंग वृहत् में ही हुआ है। कनवज समय के अन्तर्गत कुल मिलाकर ५ स्थानों पर छन्दों में क्रम-विपर्यय हुआ है। इन स्थलों की तुलनात्मक तालिका निम्नलिखित है।

	लघुतम	वृहत्
छन्दः क्रम संख्या	१,२	१०२, ७८
	८७,८८,८६	४६८,५०४,४६७
	६१,६२	५१३,५१०
	२११,२१२,२१३	१३४६,१७०६,१३४७
	२६७—३१५	१७०४ और १७३३ के बीच सहसा २१४६ से २३१४ तक के छन्द*

वृहत् रूपान्तर में छन्दों के इस क्रम-विपर्यय से कथा-सूत्र जोड़ने में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती है। सम्भवतः प्रसंगान्तर और प्रक्षेप के कारण ही यह गड़बड़ी उपस्थित हुई और इससे इस स्थापना को बल मिलता है कि वृहत् परवर्ती प्रक्षिप्त रूपान्तर है तथा इसका संकलन अथवा संग्रह पीछे हुआ है।

* युद्ध वर्णन के सिलसिले में वृहत में बहुत बड़े पैमाने पर छन्दों का यह क्रम वि[illegible]य हुआ है उल्लिखित तिथियों के आधार पर उसकी असंगति स्पष्ट हो जाती है।

१७. लघुतम रूपान्तर के कनवज्ज समय में कुछ छन्द ऐसे भी हैं जो बृहत् की सभा वाली प्रति में बहुत खोजने पर भी प्राप्त नहीं हुए। ये छन्द कुल मिलाकर १७ हैं और इनकी क्रम संख्या निम्नलिखित हैं।

२१ से २५ तक ६४, २०३ से २११ तक, २२६ और २२६

बृहत् में इन छन्दों के मिलने की कोई युक्ति संगत व्याख्या वर्तमान स्थिति में दे सकना सम्भव नहीं है।

कनवज्ज समय की वार्ताएँ

१८. छन्दों के अतिरिक्त लघुतम के कनवज्ज समय में ३० गद्य वार्ताएँ भी हैं। गद्य-वार्ताएँ रासो के बृहत् रूपान्तर में भी हैं। वार्ताओं का प्रयोग प्रायः कथा-सूत्र जोड़ने अथवा स्पष्ट करने के लिए हुआ है। काव्य-ग्रन्थों में बीच-बीच में गद्य-वार्ता जोड़ने की यह प्रवृत्ति कुछ अन्य काव्यों में भी दिखाई पड़ती है। 'ढोला मारू-रा दूहा' नामक पुरानी राजस्थानी रचना की भी कुछ ऐसी प्रतियां प्राप्त हुई हैं जिनमें दोहों के बीच जगह-जगह चौपाइयाँ तथा गद्य-वार्ताएँ जोड़ी गई हैं।[1] इससे कथात्मक काव्यों में गद्य-वार्ता जोड़ने की परम्परा का पता चलता है। विद्वानों का अनुमान है कि इस वार्ता परम्परा का प्रचलन सोलहवीं शताब्दी के आसपास अथवा बाद में हुआ होगा। काव्य-ग्रन्थों में सन्निविशिष्ट वार्ताओं के अतिरिक्त आद्योपान्त केवल गद्य की स्वतन्त्र वार्ताएँ भी प्राप्त होती है जिनमें 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' अत्यन्त प्रसिद्ध है। ऐसा प्रतीत होता है कि मध्ययुग में गद्य के लिए 'वार्ता' शब्द रूढ़ हो गया था। बृहत् में वार्ताओं के लिए कहीं-कहीं 'वचनिका' शब्द का भी प्रयोग किया गया है, किन्तु लघुतम में सर्वत्र 'वार्ता' शब्द ही व्यवहृत है।

१९. लघुतम कनवज्ज समय की वार्ताएँ परवर्ती संलग्न पद्य-संख्या के संदर्भ सहित निम्नलिखित हैं।

१. सावंत टारियान लागे कुया कुया। (३)

२. राजा प्रिथीराज चालंता शकुन होइत हइ। (४)

---

१. ढोला मारू-रा दूहा, नागरी प्रचारिणी सभा. काशी, १६३४ ई०, प्रस्तावना, पृष्ठ १२।

३. राजा कूँ इह उत्कंठा भयी। सावंतन की पाछिली आस गयी। राजा नै आइस दीन्हों जे ठाकुर पंगुराय प्रगट है ताकी आधीन हुइ के रूपो दुरावो वा-की कैसा रूप ही। साथि आवउ सामंतनु मानिया निसा जुग एक रजनी। (९)

४. राजा गंगा जाइ देखी। (२०)

५. राजा स्नान कीयो। सामंतन ने स्नान कीयो। तब राजा गंगा को समरनु करत है। (२६)

६. तब लगि अरुनोदय भयो। गंगोदक भरिबै के निमित्त आनि ठाढ़ी भयी, मानो मुकति तीरथ दोऊ संकीरन भबे यौं जानियतु है। (३१)

७. ते किसी-एक पनिहारी है। (३३)

८. संदेह देवी वर्णन है। (५८)

९. अबहि नगर देखत है। (६७)

१०. चांद राजा के दरबार ठाढो रह्यो। (८३)

११. राजा ने पूछो—दंड आडंबरी भेख धारी सुकव्वि च्यारि प्रकार भट्ट प्रवर्ततु है। देखो धौं जाइ इनमें को है। (८७)

१२. छहै भाखा नो रस चांदु कहतु है (८८)

१३. अथ चांद भाट राजा जैचंद को वर्णवतु है। (८९)

१४. देख्यो ए भविष्यत् दरिद्र को छत्रु लिये फिरै। चोहान को बोल याकै मुँहि क्यों निकसै। (१०६)

१५. राजा पूछइ ते चंद उतर देत हइ। (१०८)

१६. देखे भलो मार है। जाको लून–पानि खात है ताको पूरउ बोलत है। राजा मनि चिंतवत है (१०९)

१७. पुनः चांद वाक्यं। (११०)

१८. ता रनवास की दासी सुगंधादिक घनसार म्रिगमद हेम-संपुट सुरलोक वहु चलि अच्छरी समान। (११५)

१९. राजा अनेग हास्य करन लागे। अनेग राजान के मान-अपमान सगि अंबर तै दिन-यर अदरसै। (१२७)

२०. अह निसा तो राषो जोग वीवहि निसा पंगुरहि को जाति है। (१२८)

२१. पात्रग्राम—दर्पकांगी, नेतचंगी, कुरंगी, कोकाखी, कोकिलारागी, मे मागवानी, अंगाल लोल डोल एक बोल अमोल पुष्फांजली पंग सिर नाइ जयति पिय कामदेव। (१३१)

२२. राजा कइसी नींद विसारि। (१४०)

२३. रात्र गते ये राजा अर्क सो देखयतु है। (१४१)

२४. राजा आइसु ते गीज सोधा चहुवान को भट्ट आयो है, ताहि इतनो दज्यो। (१४६)

२५. राजा प्रिथीराज कनवजहि फिरि आवतु हइ। इतने सामंतन सूं पंगु राजा को कटकु सज्ज होइ लरतु है। (१५३)

२६. ए तो राजा कूं सुख प्रापत भय। सावंतन की कुण अवस्था हुइ। (१७९)

२७. तउलूं राजा आव देखइ जेसो मदमत्त हस्ती होइ। (१८२)

२८. राजा कहै—संग्राम विखै स्त्री विवर्जित है। (१८८)

२९. राजा प्रिथीराज फोज वांपत है। भुमरावली छंद इही वांचीइ (२०३)

३०. पहिली सामंत सू झूसे तिनके नाउं अरु वरणनु कहतु है। (२१५)

२०. *वार्ताओं की भाषा* स्पष्टतः परवती है। पद्य की भाषा इनसे कहीं अधिक प्राचीनतर है। कुछ वार्ताओं में 'कौन' के लिए राजस्थानी *कुण* (३, १७६), गुजराती संबंध-परसर्ग *नो* (८८) तथा गुजराती की अस्तिवाचक क्रिया *छै* (५८) का प्रयोग आदि विशेषताएँ ऐसी हैं जो रासो के पद्यों की भाषा में कहीं नहीं मिलतीं। इनके अतिरिक्त वार्ताओं की भाषा संबंधी कुछ मुख्य विशेषताएँ ऐसी हैं जो हिंदी भाषा की आपेक्षाकृत आधुनिक अवस्था से संबद्ध हैं।

(१) भूतकाल की सकर्मक क्रिया के कर्ता के साथ कर्तृ-करण-परसर्ग **ने** अथवा **नै** का प्रयोग :—

राजा नै आइस दीन्हों (६)
राजा ने पूछयो (८७)
सामंतन ने स्नान कियो (२६)

(२)—*अत* वाले वर्तमानकालिक कृदंत + अस्तिवाचक सहायक क्रिया-रूप से संयुक्त काल का निर्माण :—

होइत हइ (४) *आवतु है* (१५३)
करत है (२६) *लरतु है* (१५३)
कहतु है (८८, ३१५) *देत हइ* (१०८)

(३)—*इयतु* वाले कृदन्त के द्वारा कर्मवाच्य की रचना—
यौं जानियतु है (३१), *देखियतु है* (१४१)

(४)—*अन* प्रत्ययान्त क्रियार्थक संज्ञा के संयोग से आधुनिक ढंग की संयुक्त क्रिया की रचना :—

करन लागे (१२७), *टारियान लागे* (१)

(५) लिंगानुशासित भूतकृदन्त क्रिया-रूपों का अस्तित्व :—
भयी, (६, ३१) *गयी* (६) *देखी* (२०) इत्यादि ।

(६) आधुनिक ढंग के पूर्वकालिक कृदन्त रूप :—
हुई कै (६) = होकर, होके

इन तथ्यों से प्रमाणित होता है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा पर विचार करते समय वार्ताओं को अलग रखना ही युक्तिसंगत हैं ।

कनवज्ज समय के संस्कृत छन्द

२१. बृहत् की तरह लघुतम रूपान्तर में भी कुछ संस्कृत भाषा के छन्द मिलते हैं । लघुतम में संस्कृत छन्दों की संख्या कुल मिलाकर केवल आठ है जो विभिन्न छन्दों के अनुसार इस प्रकार है :—

काव्य—२० ६५, १४१

साटक—१४०

आर्या – १४७

श्लोक—१७६,* १८८, १९४

हिन्दी काव्यों की, संस्कृत भाषा में रचे गए छन्दों से अलंकृत करने की परंपरा काफी पुरानी है। तुलसीदास के रामचरित मानस में भी संस्कृत के अनेक पद्य हैं। विद्वानों ने तुलसी के संस्कृत पद्यों की संस्कृत भाषा में व्याकरण संबन्धी भूलों की ओर संकेत किया है। ऐसी स्थिति में रासो के संस्कृत पद्यों की भाषा का त्रुटिपूर्ण होना विशेष आश्चर्य की बात नहीं है। बौद्ध ग्रन्थों की 'गाथा-संस्कृत' की तरह यह संस्कृत भी काफी गड़बड़ है। इसलिए इसे संस्कृताभास हिन्दी कह सकते हैं।

प्राकृत छन्द

२२. लघुतम कनवज्ज समय में प्राकृत की सात गाथाएँ भी हैं। इनकी छन्दः क्रम-संख्या १९७, २०१, २६७, २७३, २८०, २८८ और ३१६ है। इन गाथाओं की भाषा प्राकृताभास हिन्दी है। ये प्राकृत गाथाएँ रासो के सभी रूपान्तरों में मिलती हैं। ये वार्ताओं की तरह प्रक्षिप्त नहीं हैं बल्कि रासो का अभिन्न अंग प्रतीत होती हैं। इसकी पुष्टि 'षड्भाषा' परंपरा से भी होती है।

रासो और षड्भाषा

२३. रासो के प्रायः सभी रूपान्तरों में इस आशय के छन्द आते हैं कि इसमें षड् भाषा का प्रयोग किया गया है। लघुतम के कन्नवज समय में भी एक छन्द में इसका संकेत मिलता है।

अंभोरुहमानंद जोइ लरि सो दाडिम्म लो बीय लो।
लोयंदे चलु चालु आरु कलऊ बिंबाय कीयो गहो॥

* वस्तुतः यह श्लोक है अर्थात् इसका छन्द अनुष्टुप् है। गलती से इस छन्द को रासो में 'गाथा' कहा गया है।

केसीरी के साहि बेयन रसो विक्किसकी नागवी।
इंदो मध्य सु विद्यमान विहना ए षष्ठ *भाषा* छंदो ॥८८॥

'षड्भाषा' की परंपरा कालान्तर में कुछ बदलती गई; फिर भी संस्कृत, प्राकृत (महाराष्ट्री), शौरसेनी, मागधी, पैशाची और अपभ्रंश को षड्भाषा के अन्तर्गत स्वीकार करने की परंपरा प्रधान थी। इसकी पुष्टि 'षड्भाषा-चन्द्रिका' से भी होती है। मालूम होता है, राज्य-सम्मान प्राप्त करने के लिए कवि को पिंगल और अलंकार-शास्त्र की तरह 'षड्भाषा' की जानकारी का भी प्रमाण देना पड़ता था। इसलिए मध्ययुग के राजकवि अपनी रचनाओं में 'भाषा' के अतिरिक्त यथास्थान षड्भाषा के भी कुछ छन्द रख दिया करते थे। षड्भाषा रासो काव्य की प्रकृति नहीं, बल्कि अलंकरण है और अधिक-से-अधिक शैली विशेष का परिचायक है।

भाषा की मूल प्रवृत्ति

२४. संस्कृत श्लोकों, प्राकृत गाथाओं और प्रक्षिप्त गद्य-वार्ताओं को छोड़कर पृथ्वीराज रासो की सामान्य भाषा का एक निश्चित और नियमित ढाँचा है। लघुतम रूपान्तर के 'कनवज्ज समय' के पाठ को आधार बनाकर तथा सभा की प्राचीनतम प्रति के पाठांतरों को तुलनात्मक रूप से सामने रखकर इस रचना की भाषा के सम्बन्ध में मैंने जिन तथ्यों की खोज की है, उनका सारांश निम्नलिखित है।

अ. ध्वनि-विचार

(१) छन्द के अनुरोध से प्रायः लघु अक्षर को गुरु और गुरु अक्षर को लघु बना दिया गया है। लघु को गुरु बनाने के लिए शब्दान्तर्गत (क) ह्रस्व स्वर का दीर्घीकरण, (ख) व्यंजन-द्वित्व, (ग) स्वर का अनुस्वार-रंजन, तथा (घ) समास में द्वितीय शब्द के प्रथम व्यंजन का द्वित्व करने की प्रवृत्ति है। इसके विपरीत गुरु को लघु बनाने के लिए (क) दीर्घ स्वर का ह्रस्वीकरण, (ख) व्यंजन-द्वित्व का क्षतिपूर्ति-रहित सरलीकरण, तथा (ग) अनुस्वार के अनुनासिकीकरण की विधि प्रयोग में लाई गई है।

(२) छन्दोऽनुरोध के अतिरिक्त भी स्वर-व्यंजन में परिवर्तन हुए हैं। उत्तराधिकार में प्राप्त प्राकृत के अर्ध-तत्सम शब्दों का प्रयोग करने के साथ ही आधुनिक आर्यभाषाओं की प्रवृत्ति के अनुसार नये तद्भव रूपों की ओर भी झुकाव लक्षित होता है। अन्त्य दीर्घ स्वर के ह्रस्वीकरण की जो प्रवृत्ति प्राकृत-अपभ्रंश-काल से ही शुरू हो गई थी, वह रासो में पर्याप्त प्रबल दिखाई पड़ती है; जैसे *जोध* (= *योद्धा*), *सेन* (= *सेना*) इत्यादि।

(३) शब्द के अन्तर्गत आद्य अक्षर में प्रायः स्वर की *मात्रा* में परिवर्तन हो गया है और मात्रा सम्बन्धी यह परिवर्तन प्रायः दीर्घ से ह्रस्व की ओर दिखाई पड़ता हैं; जैसे :—

अनंद (= *आनंद*), *अहार* (= *आहार*), *जियण* (= *जीवन*) इत्यादि।

(४) शब्द के अन्तर्गत अनादि अक्षर में स्वर के *गुण* सम्बन्धी परिवर्तन की प्रवृत्ति है; जैसे—

अ > इ : तुरङ्ग > तुरिय
> उ : अञ्जलि > अंजुलिय
ई > अ : निरीक्ष्य > निरखि
उ > अ : मुकुट 7 मुकट
> इ : कौतुक > कोतिग
ऊ > ओ : ताम्बूल > तंबोल
ए > इ : नरेन्द > नरिन्द : इत्यादि।

(५) प्राकृत-अपभ्रंश में जहाँ स्वरान्तर्गत अथवा मध्यग *क, ग, च, ज, त, द प, य, व* के लोप से उद्वृत्त स्वर अवशिष्ट रह जाता था, उनके स्थान पर धीरे धीरे *य, व* श्रुति के आगम अथवा पूर्ववर्ती स्वर के साथ उन्हें संयुक्त करने की प्रवृत्ति अवहट्ट-अवस्था से प्रारम्भ हो गई थी जिसकी प्रबलता पृथ्वीराज रासो में भी दिखाई पड़ती है। रासो में उद्वृत्त स्वर की (क) स्वतन्त्र रूप से सुरक्षित, (ख) य, व श्रुति के रूप में उच्चरित, और (ग) पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त, तीनों स्थितियाँ मिलती हैं किन्तु प्रधानता द्वितीय स्थिति की है और तृतीय स्थिति विकास की अवस्था में दिखाई पड़ती है। तीनों स्थितियों के उदाहरण निम्नलिखित है—

(क) *चउसट्ठि* < *चतुष्षष्ठि*
(ख) *नयर* < *नगर*
(ग) *रावत* < *रावुत* < *रावउत* < **राश्रवुत*
< *राजपुत* < *राजपुत्र*

(६) उद्वृत्त स्वर को पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त करने की प्रवृत्ति पदान्त में विशेष दिखाई पड़ती है जिसका व्याकरण की दृष्टि से अत्यधिक महत्व है। इस प्रवृत्ति के कारण रासो के क्रियापद अपभ्रंश से विशिष्ट हो गए हैं और संज्ञा तथा सर्वनाम पदों में विकारी रूपों के निर्माण की अवस्था दिखाई पड़ती है। *है, कहै, जानिहै, आयो, मो* आदि क्रियापद तथा *हत्थैं, तैं* आदि संज्ञा-सर्वनाम के विकारी रूप इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

(७) उद्वृत्त स्वर के अतिरिक्त मूल स्वरों में भी स्वर-संकोचन की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। *मोर (=मयूर), समै (=समय), स्रोन (=श्रवण)* इत्यादि शब्द इसी प्रकार के स्वर-संकोचन के परिणाम कहे जा सकते हैं।

(८) प्राचीन व्यंजन ध्वनियों में से *य* और *व* रासो में अधिकांशतः केवल श्रुति के रूप में सुरक्षित प्रतीत होते हैं। इसके अतिरिक्त प्रायः *य* *ज* में तथा *व* *ब* में परिवर्तित हो गया था। प्रतिलिपिकार ने यद्यपि *ब* के लिए भी *व* का ही प्रयोग किया है, तथापि उच्चारण में वह *ब* ही प्रतीत होता है।

(९) *श, ष, स* तीन ऊष्म ध्वनियों में से केवल *स* का अस्तित्व प्रमाणित होता है। *श* और *ष* भी प्रायः *स* में परिवर्तित हो गए थे। *ष* के अन्य परिवर्तित रूप, *ख* और *ह* मिलते हैं। *ख* के लिए *ष* का प्रयोग मध्ययुगीन नागरी लिपि-शैली की सामान्य विशेषता है जिससे सभी लोग परिचित हैं।

(१०) वर्गीय अनुनासिक व्यंजनों में से केवल *न, म* का अस्तित्व प्रमाणित होता है। क्वचित-कदाचित *ण* भी दिखाई पड़ जाता है किन्तु इसका प्रयोग या तो तत्सम शब्दों में परम्परा-निर्वाह के लिए दिखाई पड़ता है या राजस्थानी प्रभाव के अन्तर्गत प्रयुक्त हुआ है।

(११) लिपि-शैली से ड़, ढ़, न्ह, ल्ह, म्ह पाँच नवीन व्यंजन-ध्वनियों के प्रचलन का प्रमाण मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन ड, ढ क्रमशः ड़, ढ़ में परिवर्तित हो गए थे।

(१२) असंयुक्त व्यंजनों में क > ह, ज > ग, ट > र, र > ल परिवर्तन महत्वपूर्ण हैं जिनके उदाहरण निम्नलिखित हैं—

क > ह : *चिकुर > चिहुर*
ज > ग : *कनवज > कनवग*
ट > र : *भट > भर*
र > ल : *सरिता > सलिता*

(१३) असंयुक्त महाप्राण घोष और अघोष व्यंजनों का केवल महाप्राणत्व ही अवशिष्ट रह गया था। यह परिवर्तन प्रायः स्वरान्तर्गत अथवा मध्यम स्थिति में हुआ है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

ख : *दुह, सुह*
घ : *सुहर*
थ : *पहिल, पुहवी*
ध : *कोह, विहि*
भ : *लहै, हुअ*

(१४) असंयुक्त अल्पप्राण व्यंजनों को आदि और अनादि दोनों ही स्थितियों में कहीं-कहीं महाप्राण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है; जैसे—

कंधार > खंधार
अंकुर > अंखुली

(१५) अघोष व्यंजनों का घोषीकरण; जैसे—

अनेक > अनेग
कौतुक > कोतिग
चातक > चातग

(१६) मूर्धन्यीकरण

ग्रन्थि > गंठि; गर्त > गड्ढा, दिल्ली > ढिल्ली

(१७) संयुक्त व्यंजनों के परिवर्तन में सबसे महत्त्वपूर्ण अन्य व्यंजन+र तथा र+अन्य व्यंजन है। ऐसे स्थलों पर रासो में या तो सम्प्रसारण अथवा स्वर-भक्ति की प्रवृत्ति है या फिर परवर्ती व्यंजन-द्वित्व की। कहीं-कहीं व्यंजन-द्वित्व के साथ ही रेफ-विपर्यय भी हो गया है। फलतः रासो में *धर्म* के *धरम, धरम्म, ध्रम्म* तीन प्रकार के रूप मिलते हैं। इसी प्रकार *गर्व > गरब, गव्व, ग्रव्व* रूप भी।

(१८) अन्य संयुक्त-व्यंजनों में प्राकृत-अपभ्रंश की भाँति यथास्थान पूर्व-सावर्ण्य तथा पर-सावर्ण्य की प्रवृत्ति प्रचलित दिखाई पड़ती है। फल-स्वरूप इस रचना में भी प्राकृत-अपभ्रंश की तरह व्यंजन-द्वित्व की बहुलता मिलती है। रासो के *मुक्क, अग्ग, नच्च, कज्ज, तुट्ट, नित्त, सद्द, अप्प, सब्ब, जम्म* जैसे शब्द इसी प्रवृत्ति के परिणाम हैं।

(१९) परंतु आधुनिक भारतीय आर्यभाषा की, व्यंजन-द्वित्व को सरलीकृत करने की मुख्य प्रवृत्ति पृथ्वीराज रासो में भी मिलती है। व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण दो प्रकार से किया गया है—(क) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-सहित और (ख) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित। दोनों के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(क)	*अट्ठ*	>	*आठ*
	किज्जइ	>	*कीजइ*
	लक्ख	>	*लाख*
(ख)	*अलक्ख*	>	*अलख*
	उच्छंग	>	*उछंग*
	चड्ढिउ	>	*चढिउ*

दीर्घाक्षरिक शब्द में भी क्षतिपूरक दीर्घीकरण के बिना ही व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण हो जाता है; जैसे—

चैत्र > *चैत्त > चैत

(२०) संयुक्त व्यंजन तथा व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण क्षतिपूरक अनुस्वार के साथ भी होता है; जैसे—

दर्शन > *दंसन*
प्रजल्प्य > *पयंपि*
पक्षी > *पंखी*

आ. रूप-विचार

(१) रूप-रचना की दृष्टि से रासो की भाषा अपभ्रंशोत्तर और उदयकालीन नव्य भारतीय आर्यभाषा की विशेषताओं से युक्त दिखाई पड़ती है। इनमें से पहली विशेषता है निर्विभक्तिक संज्ञा शब्दों का सभी कारकों में प्रयोग। अपभ्रंश में इस प्रवृत्ति का आरंभ ही हुआ था और नव्य भारतीय आर्यभाषा में प्रत्येक कारक के लिए परसर्ग का विकास होने से पूर्व बहुत दिनों तक ऐसे निर्विभक्तिक संज्ञा शब्दों के प्रयोग की बहुलता थी।

(२) उकार बहुला अपभ्रंश में कर्ता-कर्म एक वचन में जिस—उ विभक्ति का प्रचलन था, वह रासो की प्राचीन प्रतियों में प्रचुर मात्रा में मिलती है। सभा के मुद्रित संस्करण में इसका अभाव दिखाई पड़ता है।

(३) अपभ्रंश की—*ह* परक विभक्तियों के अवशेष रासो में काफ़ी मिलते हैं। *कनवज्जह*, *कनवजहे*, *कनवज्जहि* जैसे रूप विरल नहीं हैं। परवर्ती हिंदी में धीरे धीरे यह विभक्ति घिसकर विकारी रूप बन गई।

(४) करण कारक एकवचन की–इ,–ए,–ऐं अपभ्रंश विभक्तियाँ भी रासो में प्रचुर मात्रा में मिलती हैं; जैसे *कारणइ*, *फवज्जइ*, *हत्थे*, *हत्थैं* इत्यादि।

(५) कर्ता-करण तथा कर्म-सम्प्रदान के बहुवचन में-*न*,–नि,–नु विभक्ति का प्रयोग रासो की ऐसी विशेषता है जो अपभ्रंश में नहीं मिलती लेकिन 'वर्णरत्नाकर', 'कीर्तिलता' इत्यादि अवहट्ट रचनाओं से –*ह* से युक्त अर्थात् –*न्ह*,–*न्हि* रूप मिलने लगते हैं। यही–*न* आगे चलकर विकारी रूप–*ओं* तथा–*आँ* में विकसित हुआ। रासो में–*ओं*,–*आँ* वाले विकारी रूप नहीं मिलते।

(६) परसर्गों की दृष्टि से पृथ्वीराज रासो अपभ्रंश तथा अवहट्ट दोनों की अपेक्षा समृद्ध है। कर्तृ-करण परसर्ग नैं अथवा ने को छोड़कर प्रायः शेष सभी परसर्ग

किसी-न-किसी रूप में यहाँ मिलते । कर्म-परसर्ग *कहुँ, कहु, कूं* रूप में; करण-अपादान परसर्ग *तैं, ते* तथा *सहुं, सों, सूं*; अपादान—परसर्ग *हुंति*; संबंध-परसर्ग *को, का, की, के* तथा *कउ, कै*; अधिकरण-परसर्ग *मज्झहि, मज्झे, मज्झि, मंझ, मधि, महि, मह* आदि विविध रूपों में प्राप्त होता है किन्तु लघुतम रूपान्तर के कनवज्ज समय में अधिकरण-परसर्ग *मैं* अथवा *में* कहीं नहीं मिलता।

(७) सर्वनामों के विषय में रासो की भाषा अपेक्षाकृत अधिक आधुनिक है। उत्तम पुरुष सर्वनाम के *मैं, हूं, हम* तथा विकारी रूप *मो, मोहि* मिलते हैं। मध्यम पुरुष के *तुम, तुम्ह, तुम्हइ* तथा *तैं, तुज्झ, तोहि* रूप; अन्य पुरुष के *सो* तथा *तासु* जैसे प्राचीन रूपों के अतिरिक्त दूरवर्ती निश्चयवाचक के *वह, उह* तथा *उस* रूपों का भी प्रयोग मिलता है।

(८) प्रश्नवाचक सर्वनाम के *को, कौन* तथा *किस, किन* रूप; निज वाचक *अप्पु, अप्प, अपन*; सर्वनाममूलक विशेषण *अस, इसो, तस, तैसे* आदि प्रकारवाचक और *इत्तनहि, इत्तनउ, इत्तने* तथा *कितकु* आदि परिमाणवाचक रूप रासो को अपभ्रंश-अवस्था से बाद की रचना प्रमाणित करते हैं।

(९) संख्यावाचक विशेषण—१ से १० तक की संख्याएँ *एक, दुइ, तीन, चार, पाँच, छह, सात, आठ, दस* नाम से मिलती हैं। १०० के लिए *सै, सौ* दोनों रूप आते हैं। १००० के लिए *सहस* के अतिरिक्त *हज्जार* (फ़ारसी) का भी प्रयोग है। क्रमवाचक *पहिलइ, बीय, तिअ*; अपूर्ण संख्यावाचक *अड्ढ*; आवृत्तिवाचक *दुहु, चहु* इत्यादि।

(१०) क्रिया पदों में यदि √*भू* के सभी काल के रूपों पर दृष्टिपात किया जाय तो अपभ्रंश से विकसित अवस्था के स्पष्ट लक्षण मिलते हैं। वर्तमान काल में *है*, भविष्यत् में *होइहै* तथा भूतकाल में कृदन्त-रूप *भो, भयो, भयी, भये* तथा *हुअ, हुवो* इत्यादि।

(११) कहीं-कहीं पूर्वी हिंदी का *आहि* वाला क्रिया रूप भी रासो में मिलता है, परंतु इसका प्रयोग अधिक नहीं है।

(१२) भविष्यत् काल में अपभ्रंश का —*स्स*— मूलक रूप, जो पीछे राजस्थानी में विशेष प्रचलित हुआ तथा पश्चिमी और पूर्वी हिंदी में नहीं आया, रासो में कहीं-कहीं दृष्टिगोचर होता है।

(१३) सामान्य वर्तमानकाल के लिए रासो में अपभ्रंश के तिङन्त-तद्भव —*अइ* वाले रूप के साथ ही स्वर-संकोचन-युक्त—*ऐ* वाले रूप भी मिलते हैं और गणना करने से पता चलता है कि अनुपात की दृष्टि से दोनों का प्रयोग लगभग समान है।

(१४)—*इग* अन्त वाला भूतकालिक क्रियापद; जैसे *चलिग, कहिग, करिग* इत्यादि, रासो की अपनी विशेषता है। इस प्रकार के क्रियापद अपभ्रंश में नहीं थे और पश्चिमी हिंदी में भी इस प्रकार के जो क्रिया-रूप मिलते हैं उनका प्रयोग भूत-काल में न होकर केवल भविष्यत् काल तक ही सीमित है।

(१५)—*अत* कृदंत युक्त क्रियापदों से वर्तमान काल-रचना का सूत्रपात रासो में हो चुका था किन्तु इसके साथ अस्तिवाचक सहायक क्रिया के रूप जोड़कर आधुनिक हिंदी की भाँति संयुक्त-काल रचना की प्रवृत्ति उसमें नहीं मिलती। यह अवस्था स्पष्टतः अपभ्रंश के पश्चात् और ब्रजभाषा के उदय के आसपास की है।

(१६) संयुक्त क्रियाएँ रासो में अपभ्रंश से अधिक किन्तु ब्रजभाषा से बहुत कम मिलती हैं; साथ ही अर्थ की दृष्टि से भी वे काफ़ी सरल हैं। *धरि राख्यो, लेहि बइठो, उड़ चलहि, हुइ जाइ* जैसी सरल संयुक्त क्रियाएँ ही रासो में प्रयुक्त हुई हैं।

इ. शब्द-समूह

१. कनवज समय (लघुतम रूपान्तर) में कुल मिलाकर लगभग साढ़े तीन हज़ार शब्द हैं और यदि रूप-विविधता को ध्यान में रखते हुए किसी शब्द के विविध-रूपों में से केवल एक रूप की गणना की जाय तो शब्द-संख्या लगभग तीन-हज़ार होती है। इनमें से लगभग ५०० शब्द संस्कृत तत्सम हैं और २० शब्द फारसी के

हैं, शेष शब्द मुख्यतः तद्भव हैं। केवल थोड़े से शब्द अर्ध तत्सम अर्थात् प्राकृत-अपभ्रंश के अवशेष हैं और उनसे भी कम देशी अथवा स्थानीय हैं। इस प्रकार रासो में तत्सम शब्दों का अनुपात १६% प्रतिशत से अधिक नहीं है। अपभ्रंश को देखते हुए तत्सम शब्दों का यह अनुपात बहुत अधिक कहा जायगा किन्तु नव्य आर्यभाषा की प्राचीन रचनाओं को देखते हुए रासो में तत्सम शब्दों का यह अनुपात कम कहा जायगा। इससे साबित होता है कि भक्तिकालीन रचनाओं की अपेक्षा पृथ्वीराज रासो कुछ प्राचीन रचना है और सोलहवीं शताब्दी के व्यापक सांस्कृतिक पुनर्जागरण का प्रभाव उसपर कम पड़ा है। इसी तरह मुसलमान बादशाहों के प्रभाव से इस रचना में जिन फारसी शब्दों की बहुलता की बात कही जाती है, वह केवल वृहत् रूपान्तर के लिए सही हो सकती है। लघुतम रूपान्तर में फारसी शब्द बहुत कम हैं।

भाषा-निर्णय

अ. अपभ्रंश ?

२५. उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि पृथ्वीराज रासो के जितने रूपान्तर प्राप्त हैं उनमें से प्राचीनतम की भी भाषा अपभ्रंश से अधिक विकसित तथा नव्यतर है। फिर भी कुछ विद्वानों की धारणा है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा मूलतः अपभ्रंश है। जब से मुनि जिनविजय द्वारा सम्पादित 'पुरातन प्रबंध-संग्रह' के पृथ्वीराज और जयचंद से सम्बद्ध चार अपभ्रंश छंद सामने आए हैं[1] और उनमें तीन छंद रूपान्तरित रूप में पृथ्वीराज रासो में प्राप्त हुए हैं, विद्वानों को इस दिशा में अनुमान करने के लिए आधार मिल गया है। डा० दशरथ शर्मा तथा मीनाराम रंगा ने इसी आधार पर यह स्थापना की है कि मूल पृथ्वीराज रासो अपभ्रंश की रचना थी।[2] अपनी स्थापना की पुष्टि के लिए उन्होंने 'यज्ञ-विध्वंस' प्रसंग के कुछ छंदों का अपभ्रंशरूपान्तर प्रस्तुत किया है। उनका कहना है कि यदि वर्तमान रासो की भाषा को थोड़ा-सा बदल दिया

१. सिंघी जैन ग्रन्थमाला, संख्या २, १९३६ ई०, पृष्ठ ८६, ८८

२. राजस्थान भारती, बीकानेर, भाग १, अंक १, अप्रैल १९४६

जाय तो वह अपभ्रंश हो जायगी। रूपान्तर की विपरीत प्रक्रिया का प्रयोग करके इन विद्वानों ने यह दिखलाने का प्रयत्न किया है कि इसी प्रकार वर्तमान रासो भी मूल अपभ्रंश रासो का आधुनिक रूपान्तर है। यह अनुमान और तर्क-शैली काफ़ी मनोरंजक है। इससे इन विद्वानों की अनुवाद-शक्ति का तो परिचय मिलता है किन्तु इससे रासो के भाषा-संबंधी रूपान्तर पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता। इसका निर्णय पाठ-विज्ञान के आधार पर ही संभव है। अब तक रासो के जो रूपान्तर प्राप्त हैं उनकी भाषा के मूल ढाँचे में इतना अंतर नहीं है कि उन्हें भाषा के विकास की दो भिन्न अवस्थाओं में रखा जा सके। सच तो यह है कि 'पुरातन प्रबंध-संग्रह' के पृथ्वीराज-जयचन्द संबंधी छंदों की भाषा भी परिनिष्ठित अपभ्रंश नहीं है। डा० दशरथ शर्मा तथा मीनाराम रंगा के अपभ्रंश अनुवाद की भाषा 'पुरातन प्रबंध संग्रह' के पद्यों की भाषा से कहीं अधिक प्राचीन और ठेठ अपभ्रंश है। अंत में इस विषय में इतना ही कहना काफी होगा कि रासो का जो रूप—तथाकथित मूल रूप—अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है, उसके बारे में अनुमान लगाने की अपेक्षा, वर्तमान रूप की भाषा पर निर्णय देना अधिक वैज्ञानिक है।

आ. डिंगल या पुरानी राजस्थानी

२६. मूल रासो को अपभ्रंश मानकर डा० दशरथ शर्मा और मीनाराम रंगा वहीं रुक नहीं जाते बल्कि उस युक्ति के आधार पर वर्तमान रासो को डिंगल अथवा पुरानी राजस्थानी की रचना बतलाते हैं।[1] प्रमाण-स्वरूप उन्होंने रासो में प्राप्त *जित्तिआ, मेलिया, वुल्यो, मोक्कल* जैसे राजस्थानी शब्दों को उपस्थित किया है। इनमें से निःसन्देह *मेलिया* और *मोक्कल* दो ऐसे अपभ्रंश शब्द हैं जो राजस्थानी-गुजराती में आज भी सुरक्षित हैं। किन्तु डा० शर्मा और रंगा जी ने इन शब्दों से आगे बढ़कर अपने उद्धृत अंश की ध्वनि-प्रवृत्ति तथा व्याकरण-सम्बन्धी विशेषताओं पर विचार नहीं किया। डा० तेस्सितोरी ने 'पुरानी-पश्चिमी राजस्थानी' की भाषा सम्बन्धी जो दस मुख्य विशेषताएँ भूमिका में गिनाई हैं[2], उनमें से कोई विशेषता रासो में नहीं मिलती।

---

१. वही; राजस्थान भारती, भाग १, अंक ४. जनवरी १९४७.

२. पुरानी पश्चिमी राजस्थानी, इण्डियन एंटिक्वेरी, १९१४ ई०

उदाहरण के लिए पुरानी राजस्थानी का सम्बन्ध-परसर्ग *रा* अथवा *रहइँ* या *हुइँ* रासो के सभी रूपान्तरों में लुप्त है। इसी प्रकार सामान्य वर्तमान काल के उत्तम पुरुष बहुवचन के लिए *आँ* का प्रयोग तथा भविष्यत् काल में अन्य पुरुष एकवचन के लिए *इसि* पदान्त का प्रयोग, आदि पुरानी राजस्थानी की ये सामान्य विशेषताएँ भी रासो में अप्राप्त हैं। इसके विपरीत 'ढोला-मारू-रा दूहा' में पुरानी राजस्थानी की इन विशेषताओं के अतिरिक्त (क) ण-बहुलता, (ख) ळ-ध्वनि का प्रचलन, (ग) कर्म-सम्प्रदान परसर्ग *नूं*, सम्बन्ध-परसर्ग *तणा, तणी* आदि विशेषताएँ भी मिलती हैं। ढोला॰ और रासो की भाषा के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि पुरानी राजस्थानी किसे कहते हैं और रासो उससे कितना दूर है। यदि डिंगल केवल शैली-विशेष नहीं, बल्कि पुरानी पश्चिमी राजस्थानी भाषा का ही दूसरा नाम है तो यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि रासो की भाषा डिंगल नहीं है। इसका खंडन राजस्थानी तथा व्रज-भाषा के विशेषज्ञ विद्वानों ने समय-समय पर किया है।[1]

इ पिंगल या पुरानी व्रजभाषा

२७. पुरानी पश्चिमी राजस्थानी से पिंगल को अलगाते हुए डा॰ तेसितोरी ने कहा है कि "पिंगल अपभ्रंश उस भाषा-समूह का शुद्ध प्रतिनिधि नहीं है जिससे प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी उत्पन्न हुई है, बल्कि उसमें ऐसे अनेक तत्व हैं जिनका आदि स्थान पूर्वी राजपूताना मालूम होता है और जो अब मेवाती, जयपुरी और मालवी आदि पूर्वी राजस्थानी बोलियों तथा पश्चिमी हिन्दी में विकसित हो गए हैं। ऐसी पूर्वी विशेषताओं में से मुख्य है सम्बन्ध-परसर्ग *कौ* का प्रयोग जो प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी के लिए सर्वथा विदेशी है और यहाँ तक कि आज भी गुजरात और पश्चिमी राजपूताना की बोलियों में एकदम गायब है। इसके विपरीत पूर्वी राजस्थानी बोलियों तथा पश्चिमी हिन्दी में इसका व्यापक प्रचलन है।[2]

इस परम्परा में *प्राकृत-पैंगल* को प्राचीन ग्रन्थ मानते हुए तेसितोरी आगे कहते

---

१. नरोत्तमदास स्वामी, राजस्थान भारती, अङ्क वही।

२. पुरानी राजस्थानी, भूमिका पृ० ६, (हिन्दी अनुवाद) नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, १९५५ ई०

हैं कि प्राकृत पैंगल की भाषा की पहली संतान प्राचीन-पश्चिमी राजस्थानी नहीं, बल्कि *भाषा का वह विशिष्ट रूप है* जिसका प्रमाण चन्द की कविता में मिलता है और जो भलीभाँति *प्राचीन पश्चिमी हिन्दी* कही जा सकती है।[१]

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, मध्ययुगीन तथा आधुनिक भारतीय आर्य भाषा के विशेषज्ञ गार्सां द तासी, बीम्स, होर्नले, ग्रियर्सन, तेस्सितोरी आदि यूरोपीय तथा डा० सुनीतिकुमारी चटर्जी, डा० धीरेन्द्र वर्मा, नरोत्तम दास स्वामी आदि भारतीय विद्वानों ने एक स्वर से रासो की भाषा को प्राचीन पश्चिमी हिन्दी अथवा प्राचीन ब्रजभाषा कहा है।

परन्तु पृथ्वीराज रासो की भाषा को पुरानी ब्रजभाषा कहने के साथ मैं इतना अवश्य जोड़ना चाहूँगा कि ब्रजभाषा के प्राचीनतम कवि सूरदास की रचनाओं से ब्रज-भाषा का जो स्वरूप सामने आता है, उससे पृथ्वीराज रासो की भाषा पर्याप्त भिन्न है और यह भिन्नता काल-सम्बन्धी ही नहीं बल्कि प्रदेश-सम्बन्धी भी है। रासो के संज्ञा, सर्वनाम और भूतकालिक कृदन्तों के उच्चारण का झुकाव ब्रजमंडल के—औकारान्त की अपेक्षा-*ओ* कारान्त की ओर अधिक है; साथ ही सम्भवतः प्राचीनतर अवस्था की भाषा से सम्बद्ध होने के कारण अकारान्त शब्दों में भी अन्त्य *उ* की स्वतन्त्र सत्ता को सुरक्षित रखने की प्रवृत्ति पाई जाती है; अर्थात्—*औ* और—*ओ* के स्थान पर—*अउ* की ओर झुकाव है। इसी प्रकार व्यंजन-द्वित्व आदि अन्य ध्वन्यात्मक प्रवृत्तियों में रासो अपभ्रंशोत्तर युग की भाषा के निकट दिखाई पड़ता है। व्याकरण की दृष्टि से भी रासो की भाषा में नव्य भारतीय आर्य-भाषा की उदयकालीन विश्लेषात्मक अवस्था का आरम्भ मात्र मिलता है। इन्हीं कारणों से रासो की भाषा पुरानी ब्रजभाषा होती हुई भी सूरसागर की भाषा से कुछ पछाँह की तथा काफी पूर्ववर्ती प्रमाणित होती है।

प्राकृत-पैंगलम् और पृथ्वीराज रासो

२८. परंपरा के अनुसार पृथ्वीराज रासो पिंगल-रचना है। फ्रेंच इतिहासकार गार्सां द तासी का प्रमाण है कि "रायल एशियाटिक सोसायटी वाली हस्तलिखित

---

१. वही।

प्रति पर एक फारसी शीर्षक दिया हुआ है 'तारीख प्रिथूराज *बज़बान पिंगल* तसनीफ़ कर्दा कवि चन्द बरदाई' जिसका आशय है प्रिथूराज का इतिहास, पिंगल भाषा में, रचना करनेवाला चंद बरदाई।"[1]

आधुनिक विद्वानों में से कुछ तो पिंगल को पुरानी ब्रजभाषा मानते हैं और कुछ अवहट्ट अथवा देश्य भाषा मिश्रित परवर्ती अपभ्रंश। परन्तु इन मान्यताओं का तर्कसंगत आधार स्पष्ट नहीं है। पिंगल का अर्थ हिन्दी में छन्दःशास्त्र भी होता है और यह अधिक प्रचलित है। अब प्रश्न यह है कि छन्द के पिंगल और भाषा के पिंगल में क्या सम्बन्ध है? पिंगल का मूल अर्थ छन्द है या भाषा? पिंगल शब्द का प्राचीनतम प्रयोग अभी तक जिस पुस्तक में मिला है वह चौदहवीं सदी की प्रसिद्ध रचना 'प्राकृत-पैंगलम्' है[2]। 'प्राकृत-पैंगलम्' छन्दःशास्त्र का ग्रन्थ है जिसमें छन्दों का लक्षण प्राकृत भाषा में दिया गया है और उदाहरण के लिए कुछ छन्द भी प्राकृत के हैं परन्तु प्रस्तुत उदाहरणों में से अधिकांश ऐसे हैं जिनकी भाषा पर तत्कालीन देशी भाषाओं का गहरा रंग है। पूरी रचना में देशी मिश्रित प्राकृत भाषा के छन्दों की प्रधानता देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि इसके रचयिता का मुख्य उद्देश्य लोक प्रचलित देशी भाषाओं के छन्दों का सोदाहरण विवरण देना है। संभवतः इसमें देशी छन्दों की प्रधानता के कारण आगे चलकर 'पिंगल' शब्द तत्कालीन देश भाषा के लिए अथवा देश्यमिश्रित प्राकृत भाषा के लिए प्रचलित हो गया।

२६. छन्द और भाषा को पर्याय समझने की परंपरा बहुत पुरानी है। वैदिक संस्कृत के लिए पाणिनि ने अष्टाध्यायी में बराबर 'छन्दस्' संज्ञा का प्रयोग किया है। इसके बाद भी छन्द के आधार पर भाषा के नामकरण की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। गाहा (गाथा) छन्द-प्रधान प्राकृत को 'गाहा बन्ध' तथा 'दोहा' छन्द का सबसे पहले प्रयोग करने के कारण अपभ्रंश को 'दोहा बन्ध' कहने के अनेक प्रमाण मिलते हैं।[3]

---

१. हिन्दुई साहित्य का इतिहास (अनुवादक डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय) १९५३ पृ० ६६

२. बिब्लिओथेका इंडिका, १९०२ ई०, प्राकृत पिंगल सूत्राणि, निर्णयसागर प्रेस १८९४ ई०

३. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, पुरानी हिन्दी, नागरी प्रचारिणी सभा; १९४८, पृ० १४, १०६

मध्ययुग में भी रेख़ता छन्द के कारण उर्दू ज़बान का नाम 'रेखता' पड़ गया था। इसलिए छन्द का अर्थ देनेवाले 'पिंगल' शब्द का प्रयोग देश्य मिश्रित अपभ्रंश के लिए होने लगना कोई असंभव और आकस्मिक घटना नहीं है। इस दृष्टि से 'प्राकृत-पैंगलम्' का अर्थ प्राकृत-मिश्रित पिंगल भाषा अथवा पिंगल मिश्रित प्राकृत-भाषा भी हो सकता है। परन्तु यहाँ 'प्राकृत' शब्द का प्रयोग संभवतः देश्य भाषा के लिए ही किया गया है।

३०. भाषा के लिए 'पिंगल' शब्द का प्रयोग कितना पुराना है, यह ठीक ठीक बता सकना मुश्किल है लेकिन पिंगल के आचार्य नाग देव के नाम पर तत्कालीन देशी बोली के लिए 'नागवानी' नाम सोलहवीं सदी के आस-पास प्रचलित हो गया था। *'तुहफ़त उल-हिन्द'* के व्याकरण वाले खंड में मिर्ज़ा खाँ ने 'नागवानी' और 'पातालवानी' दो शब्दों का प्रयोग किया है।[1] 'पातालवानी' इसलिए कि नाग देव पाताल लोक में ही रहते हैं। इस प्रकार उस भाषा का नाम छन्द से चलकर आचार्य तक और आचार्य से उनके पौराणिक स्थान तक पहुँच गया। १८ वीं सदी के पूर्वार्ध के हिन्दी कवि और आचार्य भिखारीदास ने भी ब्रज, मागधी, अमर (संस्कृत), यवन; पारसी (फ़ारसी ?) के साथ 'नाग-भाखा' का उल्लेख किया है जिसका अर्थ संभवतः पिंगल ही है।[2] परन्तु यहाँ 'नाग भाखा' और 'ब्रज भाखा' दोनों का उल्लेख साथ-साथ करने से ऐसा प्रतीत होता है कि 'नाग-भाखा' 'ब्रज भाखा' से भिन्न है। ऐसी हालत में यह युक्तिसंगत नहीं है कि पिंगल को पुरानी ब्रजभाषा स्वीकार किया जाय।' तात्पर्य यह कि पृथ्वीराज रासो की भाषा को जो 'पिंगल' कहने की पुरानी परंपरा है, उसके आधार पर उसे पुरानी ब्रजभाषा कहना प्रमाणित नहीं होता।

३१. अब यह देखना चाहिए कि तेसीतोरी ने जो पृथ्वीराज रासो की भाषा को 'प्राकृत-पैंगलम्' की भाषा-परंपरा में रखते हुए उसे विकसित अवस्था की भाषा

१. मिर्जा खान्स ग्रैमर ऑव दि ब्रजभाखा—ज़ियाउद्दीन, विश्वभारती, १९३५ ई०

२. ब्रज मागधी मिलै अमर, नाग यवन भाखानि।
सहज पारसी हू मिलै, षट विधि कहत बखानि ॥ (शुक्ल: इतिहास, पृ० ३८२ से उद्धृत)

कहा है', वह कहाँ तक सही है।

(क) 'प्रकृत-पैंग लम्' में उद्वृत्त स्वर के स्वतन्त्र अस्तित्व को सुरक्षित रखने की प्रवृत्ति प्रबल दिखाई पड़ती है। स्वर-संकोचन के द्वारा उद्वृत्त स्वर को पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त कर देने के उदाहरण प्रा० पैं० में बहुत थोड़े मिलते हैं।

उवआर	*(= उपकार), ४७०*
सहआर	*(= सहकार), ४६१*
सुअरिस-वअणा	*(= सुसदृश-वदना), ४६६*
हिअअ	*(= हृदय) ५४१*
कामराअस्स	*(= काम राजस्य) ४४२*
णाअरी	*(= नागरी) ४४३*
छाअण	*(= छादन), २८३*
जुवअण	*(= युवजन), ३८६*
पाआ	*(= पादा), ५४५*
णिलअ	*(= निलय), २७६*

उद्वृत्त स्वर को सुरक्षित रखने की यह प्रवृत्ति प्राकृत-अपभ्रंश की है और इस विषय में प्राकृत-पैंगलम् में उसका पूरा निर्वाह दिखाई पड़ता है। इसके विपरीत पृथ्वीराज रासो को दो ऐसे स्वरों का सह-अस्तित्व स्वीकार्य नहीं है। नव्य-भारतीय आर्य भाषाओं की ध्वनि-प्रवृत्ति के अनुसार रासो में ऐसे स्वरों के संकोचन की ओर विशेष झुकाव है। इस प्रकार रासो की भाषा प्राकृत-पैंगलम् के बाद की प्रमाणित होती है। स्वर-संकोचन की जो प्रवृत्ति प्रा० पैं० में आरम्भ-भर हुई थी, वह रासो तक आते-आते पर्याप्त प्रबल हो गई।

(ख) क्षति-पूरक दीर्घीकरण के द्वारा व्यंजन-द्वित्व के सरलीकरण की प्रवृत्ति भी प्राकृत-पैंगलम् में बहुत कम है। *णीसास* (४५३), *णीसंक* (१२८), *जासु*

१. पुरानी राजस्थानी; पृष्ठ ६, ना० प्र० सभा, १६५५ ई०

(१४१), कहीजे (४०२) करीजे (४०२) जैसे थोड़े से शब्दों को छोड़कर यहाँ प्रायः निम्नलिखित प्रकार के व्यंजन-द्वित्व वाले उदाहरण ही अधिक मिलते हैं।

अप्पणा	(४०१)	*दुव्वरि*	(४५३)
किज्जइ	(५४५)	*पक्खर*	(२६२)
गव्वाआ	(४८३)	*पव्वअ*	(३७८)
जक्खण	(३०४)	*पोम्म*	(५५०)
जक्खण	(३०४)	*बप्पुडा*	(४०१)
जज्जल	(१८०)	*मिच्च*	(४०५)
जोव्वण	(२२७)	*भित्तरि*	(५४५)
णच्चइ	(५२३)	*सरिस्सा*	(३८६)
थप्पणा	(४०१)	*हम्मीर*	(१८०)

व्यंजन-द्वित्व की प्रवृत्ति भी प्राकृत-अपभ्रंश की है और यहाँ भी प्राकृत-पैंगलम् का झुकाव उस प्रवृत्ति के निर्वाह की ओर है। इसके विपरीत पृथ्वीराज-रासो में छंदोऽनुरोध-जनित व्यंजन-द्वित्व को छोड़कर अन्यत्र यह प्रवृत्ति इतनी प्रबल नहीं है। यह भी रासो की भाषा की विकसित अवस्था का प्रमाण है।

(ग) प्राकृत-पैंगलम् का झुकाव आदि और अनादि असंयुक्त *न* को *ण* में परिवर्तित कर देने की ओर विशेष है ; जैसे—

कोधानल	<	*कोहाणल*	(१८०)
नभ	<	*णह*	(,,)
वदन	<	*बअण*	(,,)
सुलतान	<	*सुलताण*	(,,)

ऐतिहासिक दृष्टि से इस प्रवृत्ति को प्राकृत-अपभ्रंश का प्रभाव कहा जा सकता है और प्रादेशिक दृष्टि से राजस्थानी वैशिष्ट्य। *ण*-त्व विधान की प्रा० पैं० में इतनी प्रबलता है कि प्राकृत की भाँति शब्द के आदि में भी इसे सुरक्षित रखा गया है। इसके विपरीत पृथ्वीराज-रासो में *ण* को भी *न* बना देने की प्रवृत्ति है। प्राकृत-पैंगलम्

में व्रजभाषा के बीज ढूंढते समय इसका ध्यान रखना चाहिए। रासो में कोई शब्द *ए* से शुरू नहीं होता।

(घ) ध्वनि-प्रवृत्ति में अपेक्षाकृत रूढ़ और प्राचीन होते हुए भी रूप-रचना में प्राकृत-पैंगलम् नव्य भारतीय आर्यभाषा के निकट दिखाई पड़ता है। यहाँ व्रजभाषा के *आ*कारान्त तथा *ओ*कारान्त पुल्लिंग संज्ञा-विशेषण पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

बुड्ढा (५४१), *बुड्ढा* (५१२), *वमुडा* (४०१), *वंका* (५६७), *दीहरा* (२०६), *ओल्ला* (२४६), *पिअला* (४०८), *काआ* (३१८), *माआ* (३१८) इत्यादि इसके प्रमाण हैं।

वस्तुतः ये दीर्घान्त रूप उपान्त्य स्वर के साथ पदान्त के स्वार्थिक प्रत्यय–*अ* <–*क* के संयुक्त होने से बनते हैं। संज्ञा-विशेषणों के पदान्त में स्वर-संकोचन द्वारा –*आ* और –*ओ* करने की दोनों प्रवृत्तियों में से प्राकृत-पैंगलम् –*आकारान्त* की ओर अधिक प्रवृत्त दिखाई पड़ता है। यह आकारान्त सर्वत्र छन्द में मात्रा–पूर्ति के लिए ही नहीं है। सामान्यतः यह विशेषता खड़ी बोली की मानी जाती है। मिर्ज़ा खाँ के अनुसार यह विशेषता उनके समय बोल-चाल की व्रजभाषा में भी थी।[1]

यदि यह सच है तो इससे इतना प्रमाणित होता है कि व्रजभाखा का पदान्त –ओ आरम्भक अवस्था में –*आ* था और एक समय सम्पूर्ण पश्चिमी हिन्दी में –आकारान्त पुंल्लिग संज्ञा-विशेषणों का प्रचलन था।

रासो से इस तथ्य की पुष्टि नहीं होती। रासो में आकारान्त और ओकारान्त दोनों ही प्रकार के पुल्लिग संज्ञा-विशेषण नहीं मिलते। प्रधानता उकारान्त पदों की ही है; आकारान्त पद प्रायः छंद में मात्रा पूर्ति के लिए तुकान्त में अथवा क्वचित–कदाचित तुकान्त के पूर्व भी मिलते हैं।

(ङ) संज्ञा-विशेषणों में प्राकृत-पैंगलम् जहाँ इतना आगे है वहाँ भूत-कालिक कृदन्त अर्थात् क्रिया के निष्ठावाले रूपों के विषय में प्राचीनतर रूपों का ही निर्वाह करता है। निष्ठा के *गयउ भयउ कियउ* रूप ही अधिक मिलते हैं। *गयो, गयौ,*

१. व्रजभाखा व्याकरण, पृ० ४७,

अथवा *भयो*; *भयौ* रूप प्राकृत-पैंगलम् में कम मिलते हैं। कर्मवाच्य के *जाणीओ* (५४७), *भणीओ* (३४८), *कहिओ* (३४३) तथा कर्तृवाच्य के *कंपिओ* (२६०), *झंपिओ* (२६०), *सम्माणीओ* (५०६), *उगो* (३७०) जैसे थोड़े से ओकारान्त कृदन्त रूप अवश्य मिलते हैं जिनमें उद्वृत्त स्वर *ओ* पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त नहीं हो सका है, बल्कि अपनी स्वर-सत्ता बनाए हुए है। निष्ठा के ओकारान्त और औकारान्त रूप व्रजभाषा की विशेषता बतलाए जाते हैं और प्राकृत-पैंगलम् में इनकी कमी है। यहाँ प्राकृत-पैंगलम् के विपरीत पृथ्वीराज रासो में ओकारान्त और औकारान्त निष्ठा-रूप प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। *कियो*, *कियौ*, *रह्यो*, *रह्यौ* दोनों प्रकार के रूप यहाँ पदे-पदे मिलते हैं। निःसन्देह इन दोनों प्रकार के रूपों में ओकारान्त रूपों की प्रधानता है। यह विशेषता जयपुरी और कन्नौजी बोलियों में पाई जाती है जिनमें से एक व्रजभाषा के पश्चिम की है तो दूसरी पूरब की। शायद इसीलिए वार्ड ने पृथ्वीराज रासो की भाषा को *कन्नौजी* कहा है।[१] यह भी सम्भव है कि कन्नौज-नरेश जयचन्द की पुत्री संजोगिता-सम्बन्धी कथा के वर्णन की प्रधानता तथा जयचन्द के साथ चंद के सम्बन्ध अथवा सम्पर्क के कारण ही वार्ड ने यह राय बनाई हो। परन्तु ओकारान्त निष्ठा रूपों की प्रधानता के विषय में यह भी कहा जा सकता है कि यह व्रजभाषा की आरम्भिक अवस्था का सूचक है। बहुत सम्भव है कि व्रजभाषा के आधुनिक औकारान्त रूप ओकारान्त रूपों के परवर्ती विकास हों।

(च) संज्ञा-विशेषणों की तरह निष्ठा के कुछ आकारान्त रूप भी प्राकृत-पैंगलम् में मिलते हैं, जो उसे खड़ी बोली के बीज सुरक्षित रखने का श्रेय देते हैं ; जैसे—

टंकु एक्कु जइ सेंधव पाआ।
जो हउ रङ्को सो हउ राआ॥ (२२४)
सोउ जुहुट्ठिर संकट पावा।
देवक लेक्खिल केण मिटावा॥ (४१३)
सज्जा हूआ। (४८३)

---

१. हिस्ट्री ऑव दि लिटरेचर एंड दि माइथॉलोजी ऑव दि हिन्दूज़, जिल्द २, पृष्ठ ४८२ (गार्साँ द तासी द्वारा उद्धृत, हिंदुई साहित्य का इतिहास; पृ० ७०)

रासो में इस प्रकार के आकारान्त निष्ठा-मूलक क्रियापद नहीं मिलते। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राकृत-पैंगलम् भारतीय आर्यभाषा की उस अवस्था से संबद्ध है जिसमें विभिन्न बोलियों के मिश्रित रूप एक साथ एक दूसरे के समानान्तर विकसित हो रहे थे अथवा संग्रह-प्रकृति की रचना होने के कारण प्राकृत-पैंगलम् में पश्चिमी और पूर्वी विभिन्न बोलियों की रचनाओं का मिश्रण है[1] जब कि रासो बोली-विशेष की रचना है।

(छ) प्राकृत-पैंगलम् में प्राकृत-अपभ्रंश की अपेक्षा परसर्ग अधिक मिलते हैं और जो मिलते हैं वे भी ध्वन्यात्मक दृष्टि से विकसित अवस्था के हैं; जैसे —

करण-परसर्ग :

संभुहि सहुं (१६२)

सम्प्रदान-परसर्ग :

काहे लागी (४६३)

संबंध-परसर्ग :

ता-क जणणि (४७०।
देव-क लेक्खिल (४१२)
वित्त-क पूरल (२८३)
खुरसाण-क ओल्ला (२४६)
ता-का पिअला (४०८)
मेच्छह-के पुत्ते (५७)

अधिकरण-परसर्ग :

मुह महँ (१८०)
ढिल्लि महँ (२४६)

१. हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग, नवीन संस्करण, १६५४, पृ० ६२
बी० सी० मजूमदार को प्राकृत पैंगलम् के कुछ छंदों में जो बंगला भाषा का आभास हुआ है, वह वस्तुतः—अल वाले भूत-कृदन्तों के मागधी तत्व और पूर्वी सर्वनामों के कारण। संभवतः इसीलिए डा० चैटर्जी ने उनके मत का खंडन किया है (बंगाली लैंग्वेज, भूमिका, पृ० ६४)

परन्तु रासो में प्राकृत-पैंगलम् की अपेक्षा परसर्गों का प्रयोग प्रचुर है। इससे रासो की भाषा विकसित अवस्था की प्रमाणित होती है।

यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है कि प्राकृत-पैंगलम् के संबंध-परसर्गों में से कुछ मैथिली की भाँति *क* हैं किन्तु ब्रजभाषा की भाँति *को* अथवा *कौ* परसर्ग का एक भी उदाहरण नहीं है। इससे क्या यह समझा जाय कि 'प्राकृत-पैंगलम्' के इन रूपों में प्राचीन मैथिली के तत्त्व हैं? या फिर यह समझा जाय कि यह *क* परसर्ग परवर्ती *का*, *को*, *कौ* का आरंभिक रूप है?

जो हो, इस विषय में रासो की स्थिति अधिक स्पष्ट है। यहाँ संबंध परसर्ग *को* के कुछ उदाहरण अवश्य मिलते हैं। परंतु आधुनिक ब्रज का *कौ* नहीं मिलता।

संबंध-परसर्ग को लेकर प्राकृत-पैंगलम् और पृथ्वीराज रासो की तुलना से यहाँ जो निष्कर्ष प्रासंगिक है, वह यह कि ये दोनों ही रचनाएँ उस वर्ग की हिंदी से संबद्ध हैं जिनका संबंध परसर्ग—*क* मूलक होता है और इस दृष्टि से ये *रा* परसर्ग वाली पश्चिमी राजस्थानी से भिन्न हैं।

(ज) इतनी दूर तक प्राकृत-पैंगलम् और पृथ्वीराज रासो की भाषा में पौर्वापर्य संबंध प्रमाणित होता है। किन्तु इसके बाद प्राकृत-पैंगलम् में ध्वनि-संबंधी एक प्रवृत्ति ऐसी मिलती है जिससे दोनों के बीच प्रादेशिक अंतर की पुष्टि होती है। प्राकृत-पैंगलम् में प्रायः *ड़* और *र* को *ल* में परिवर्तित कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है, जैसे—

धारा = *धाला* (३१८)
चमर = *चमल* (३२७)
तुर्क = *तुलक* (२६२)
परइ, पड़इ = *पलइ* (३२७)
बहुरिआ = *बहुलिया* (३१३)
गौड़ = *गोल°* (२१६, ४२३)
कलचुरि = *कलचुलि* (२६६)

कन्नडा = *कण्णाला* (४४६)
तुरंता = *तुलंता* (५२०)

इस *ल* के लिए प्राकृत-पैंगलम् की हस्तलिखित प्रति में कोई वशिष्ट चिह्न था या नहीं, इसका उल्लेख उसके विद्वान् संपादक श्री चन्द्रमोहन घोष महोदय ने नहीं किया है; फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि इस *ल* का उच्चारण उस समय बहुत कुछ मूर्धन्य रहा होगा।

वैसे, *र* > *ल* परिवर्तन मुख्यतः मागधी तथा वैकल्पिक रूप से चूलिका पैशाची प्राकृत की विशेषता रही है।[1] इनके अतिरिक्त पुरानी पश्चिमी राजस्थानी में भी *र* > *ल* परिवर्तन के प्रमाण मिलते हैं।[2]

यह निर्णय करना कठिन है कि प्राकृत पैंगलम् की यह *र* > *ल* परिवर्तन की प्रवृत्ति मागधी समझी जाय या पुरानी पश्चिमी राजस्थानी ? जब कि इस पद्य-संकलन की रचनाओं में रूप-रचना की दृष्टि से बिहारी, पूर्वी और पश्चिमी सभी बोलियों के तत्त्व मिलते हैं तो इस ध्वनि-प्रवृत्ति को राजस्थानी कह देना युक्ति-संगत प्रतीत नहीं होता। संपूर्ण रचना में पछाहीं प्रवृत्ति की प्रधानता के कारण ही इस ध्वनि-प्रवृत्ति को चाहें तो राजस्थानी कह सकते हैं।

पृथ्वीराज रासो में भी एकाध स्थान पर *र* > *ल* परिवर्तन के उदाहरण मिलते हैं। लघुतम के कनवज्ज समय में एक स्थान पर *सरिता* के लिए *सलिता* (२०३.१) रूप मिलता है। *सरिता* के लिए *सलिता* का प्रयोग कबीर-ग्रंथावली में भी मिलता है—

बहती सलिता रह गई [४·६]

(झ) सारांश यह है कि पृथ्वीराज रासो की भाषा परंपरा के अनुसार पिंगल होते हुए भी प्राकृत-पैंगलम् की पिंगल से अधिक विकसित है; इसमें प्राकृत अपभ्रंश के रूढ़ रूपों के अवशेष अपेक्षाकृत कम हैं और नव्य भारती आर्यभाषा के नये रूप अधिक हैं।

---

१. र–सोर्ल–शौ। (हेमचन्द्र, प्राकृत व्याकरण द. ४. २८८), रस्य लो वा। (वही, ४·३२६)।

२. तेस्सितोरी, पुरानी राजस्थानी § २६

भट्ट भाषा-शैली और पृथ्वीराज रासो

३२. पृथ्वीराज रासो की भाषा में ध्वनि और रूप की दृष्टि से एक ओर नवीवनता मिलने के साथ ही दूसरी ओर जो प्राचीनता मिलती है, उसका कारण तब स्पष्ट होता है जब हम राजस्थान के अन्य भट्ट कवियों की रचनाएँ देखते हैं। प्राकृत-अपभ्रंश की तरह व्यंजन-द्वित्व वाले शब्दों के प्रयोग नरहरि, गंग आदि भट्ट कवियों की रचनाओं में भी प्रचुर-मात्रा में मिलते हैं। नरहरि और गंग अकबर के समकालीन थे और संभवतः उनके दरबारी कवि भी थे। इस प्रकार ये कवि १६ वीं सदी के उत्तरार्ध में थे। पृथ्वीराज रासो के अंतिम संग्रह और संकलन का समय भी लगभग यही बताया जाता है और उसकी प्राचीनतम प्रतियाँ भी इसी के आसपास की हैं। ऐसी हालत में तत्कालीन 'भट्ट-भणंत' के रूप में भी पृथ्वीराज रासो की भाषा नरहरि तथा गंग की भाषा-परंपरा में आती है।

नरहरि भट्ट के वादु[1] में पृथ्वीराज रासो की शब्द-रचना के समान निम्नलिखित रूप मिलते हैं।

एक्क (२·१), *रिझ्झहि* (२·२), *झग्गरहि* (२·४), *अप्पु* (२·४), *बढ्ढेउ* (२·५), *बोल्लहि* (२·६), *भुल्लहि* (३·५), *अथ्थि* (४·२), *मुढ्ढ* (४·५), *समत्थ* (५·२), *किज्जयै* (६·५), *दिज्जयै* (६·६), *भज्जेउ* (७·२), *धुपत्ति* (७·३), *हत्थहं* (७·३), *वित्थरउं* (७·५), *गोप्पि* (८·४), *सब्ब* (८·५)।

विद्वानों का अनुमान है कि 'ओजपूर्ण शैली को सुसज्जित करने के लिए' भट्ट कवियों ने इन प्राकृताभास रूपों का प्रयोग किया है।[2] किन्तु शौर्य के अतिरिक्त शृंगार के प्रसंग में भी इस शैली का व्यवहार देखकर किसी अन्य युक्तिसंगत कारण की संभावना प्रतीत होती है। भट्ट वस्तुतः पेशेवर कवि होते आए हैं और पेशे की परंपरा के कारण इनमें छंद-अलंकार के साथ-साथ भाषा की प्राचीन परंपरा भी अधिक सुरक्षित रहती है। संभवतः इसीलिए इनकी रचनाओं में प्राकृताभास शब्दों की अधिकता मिलती है। पृथ्वीराज रासो की भाषा में पिंगल के साथ प्राचीन प्राकृताभास शब्दों की बहुलता के लिए यह व्याख्या प्रस्तुत की जा सकती है।

---

१. डा० सरयूप्रसाद अग्रवाल—अकबरी दरबार के हिंदी कवि, १९५० ई०, परिशिष्ट।

२. डा० धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा § ३३

प्रथम अध्याय

ध्वनि-विचार

लिपि-शैली और ध्वनि-समूह

३३. पृथ्वीराज रासो की भाषा में सामान्यतः निम्नलिखित ध्वनियाँ प्राप्त होती हैं—

स्वर : अ आ इ ई उ ऊ (ए॒) ए, (ओ॒) ओ।
ऐ औ।

व्यंजन : क ख ग घ
च छ ज झ
ट ठ ड ड़ ढ ढ़ ण
त थ द ध न न्ह
प फ ब भ म म्ह
य र ल व
श स ह

३४. ह्रस्व ए॒ और ह्रस्व *ओ॒* के अस्तित्व के लिए कोई ठोस प्रमाण नहीं है। अन्य प्राचीन पांडुलिपियों की तरह रासो की भी किसी प्रति में इन स्वरों के लिए विशिष्ट लिपि-चिह्न का न मिलना स्वाभाविक है। छंद-प्रवाह में ए से सर्वत्र दीर्घ ए का ही भान होता है; जैसे सभावाली प्रति के *ग्यारह सै एकानवै* (१०२), तथा *एक रवी मंडल भिदाहि* (१८३) में *एक* और *एकानवै* दोनों शब्दों में ए के दीर्घ उच्चारण की रक्षा की गई है; यहाँ तक कि *रवि* का *रवी* कर दिया गया है किन्तु ए को ह्रस्व नहीं किया गया है। परंतु उसी पंक्ति में आगे *इक करिहै आनंद* पाठ है जिससे *एक* के *इक* उच्चारण का पता चलता है। इससे मालूम होता है कि ए का ह्रस्व उच्चारण भी होता है जो बहुत कुछ इ के निकट था; इसलिए लिखते समय उसे इ के द्वारा व्यक्त करते थे। एक > *इक्क* > इक परिवर्तन से भी इस मत को

पुष्टि होती है कि अपभ्रंश-काल से ही आदि ए का उच्चारण संभवतः स्वराघात के कारण ह्रस्व हो गया था। ह्रस्व ए के उच्चारण की पुष्टि अप० *एह* (हेम० ८.४.३३०) > *इह* (१४.१)* > *यह* (५७.२) से भी होती है। ए के ह्रस्व उच्चारण को वर्तमान काल की तिङन्त-तद्भव क्रियाओं के पदान्त–इ का पूर्ववर्ती–*अ*–के साथ संयुक्त होकर–ए तथा–ऐ हो जाना भी प्रमाणित करता है। इस प्रकार पृथ्वीराज रासो में ह्रस्व ए के अस्तित्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

३५. ह्रस्व *ओ* के लिए भी रासो में कोई स्वतंत्र चिह्न नहीं है। परंतु यहाँ भी ध्वनि-परिवर्तन की प्रवृत्ति के सहारे ह्रस्व *ओ* की संभावना मानी जा सकती है। दूरवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम के लिए अपभ्रंश में *ओइ* होता था जिसे हेमचन्द्र ने संस्कृत *अदस्* का आदेश कहा है (प्राकृत व्याकरण, ८.४.३६४)। इसके लिए स्वयंभू के पउम-चरिउ (७.३, ५,६; १८.१.३,६) में *उहु* रूप मिलता है। प्राकृत-पैंगलम् (१३६) में *ओ* का प्रयोग हुआ है। रासो में *उह* (३०७.३ , ३०६.४), *वह* (३०९.६) दो रूप मिलते हैं।

ओ > *उ* > *व* परिवर्तन से स्पष्ट है कि अपभ्रंश-काल से ही *ओ* का उच्चारण ह्रस्व हो चला था। इस तथ्य की पुष्टि निष्ठा के उकारान्त तथा ओकारान्त क्रियापदों से भी होती है।

इस प्रकार ए की भाँति ओ के भी ह्रस्व उच्चारण का अनुमान रासो में लगाया जा सकता है।

३६. अनुनासिक स्वर भी रासो में मौजूद हैं। इन्हें लिपि-शैली के परंपरागत अनुस्वार के द्वारा व्यक्त किया गया है। छंद-प्रवाह से परिचित व्यक्ति अनुस्वार और अनुनासिक में अंतर कर सकते हैं, यह सोचकर ही लिपिकारों ने दोनों ध्वनियों को एक ही चिह्न से व्यक्त किया है। किन्तु जैसे कि डा० चैटर्जी ने *उक्ति*

---

* यहाँ और आगे भी जहाँ ग्रंथ-नाम न हो और संदर्भ-संकेत के लिए केवल संख्याएँ हों तो पृथ्वीराज रासो (कनवज्ज समय, लघुतम रूपान्तर) समझा जाय। संख्याओं में से पहली पद्य संख्या है और दूसरी पंक्ति-संख्या।

व्यक्ति-प्रकरण की प्राचीन कोसली में 'संक्रामक अनुनासिकता' लक्षित की है[1], रासो में भी इसी प्रकार की सानुनासिकता मिलती है। सभा की प्रति में *सगुंन, भांन, प्रमांन, प्रयांन* (४१२।१)* से यह सानुनासिकता प्रमाणित होती है। यहाँ परवर्ती दन्त्य अनुनासिक ध्वनि के प्रभाव से पूर्ववर्ती ध्वनि भी अनुनासिक हो गई है। ऐसी अनुनासिकता के प्रमाण कबीर ग्रंथावली के *बांन, रांम, कांम* आदि शब्दों में भी दिखाई पड़ती है।

इसके अतिरिक्त वर्गीय अनुनासिक का द्वित्व व्यंजित करने के लिए पूर्ववर्ती ध्वनि-चिह्न के ऊपर अनुस्वार देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है; जैसे *संमुह, तंमुह*, (४१२।१)।

३७. ड़ के लिए रासो की प्रतियों में कोई स्वतंत्र चिह्न नहीं है। ड के द्वारा ही ड़ को भी व्यक्त किया गया है। रासो (३·४,५) के *उडि* (*उड़िय*), *बडगुज्जर* (*बड़-गुज्जर*) जैसे शब्दों से पता चलता है कि ड़ के उच्चारण का अस्तित्व अवश्य था। अपभ्रंश के बाद नव्य भारतीय आर्यभाषा में यह नई ध्वनि है।

३८. धारणोज की लघुतम रूपान्तर वाली प्रति में तो नहीं, किन्तु सभा की प्रति में *ब* और *व* का अन्तर स्पष्ट है। इन दोनों ध्वनियों को दो भिन्न चिह्नों द्वारा स्पष्टता के साथ व्यक्त किया गया है। *रवि* के लिए *रबि* कहीं लिखा न मिलेगा और न तो *बोल°* के लिए कहीं *वोल°*। फिर भी इसमें पूरा सन्देह है कि *व* का पूर्ववर्ती उच्चारण उस समय तक सुरक्षित रहा होगा। *पूर्व* के लिए *पुब्ब* (१३·१, १४·२) शब्द का मिलना ही बतलाता है कि प्रा० भा० आ० का *व* इस भाषा में *ब* हो गया था। ऐसी स्थिति में श्रुति-परक उच्चारण को छोड़कर *व* के मूल और पूर्ण उच्चारण की संभावना नहीं प्रतीत होती।

य की स्थिति भी यही है। संपूर्ण कनवज्ज समय में *य* से शुरू होने वाले शब्द कुल १६ हैं जिनमें से १४ तत्सम शब्द हैं और वे भी प्रायः संस्कृत श्लोकों में प्रयुक्त

१. उक्ति०, १९५३ ई०, स्टडी ३२१

* पत्र-संख्या। पृष्ठ

हुए हैं। *य* से शुरू होनेवाले तद्भव शब्द निकटवर्ती निश्चयवाचक सर्वनाम *यह* और *येह* हैं। इनके अतिरिक्त आदि *य* प्रायः *ज* में बदल गया है; जैसे *यदि* > *जदि* >*जइ* (१४१'४)।

य श्रुति और संयुक्त व्यंजन के एक भाग के रूप में ही सुरक्षित दिखाई पड़ता है।

३६. व्यंजन-द्वित्व सूचित करने के लिए सभा की प्रति में कोई चिह्न नहीं है। मालूम होता है, लिपिकार ने उनका सही उच्चारण पाठक के छंद-बोध पर छोड़ दिया है।

भट (*भट्ट*), *पुबह* (*पुब्बह*), *उतर* (*उत्तर*), *कनवज* (*कनवज्ज*), *पिषन* (*पिष्षन*), *दिलीपति* (*दिल्लीपति*) (४२३।१) इत्यादि शब्द इस प्रवृत्ति के उदाहरण हैं। लिपि में द्वित्व चिह्न का अप्रयोग देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ऐसे स्थलों पर प्रथम अक्षर पर स्वराघात की प्रवृत्ति रही होगी।

४०. *न्ह* और *म्ह* : क्रमशः दन्त्य और ओष्ठ्य अनुनासिकों की ये महाप्राण ध्वनियाँ रासो में सामान्य रूप से मिलती हैं। इनका उदय संभवतः अपभ्रंश काल से ही हो गया था। बहुत संभव है, ये उससे भी पहले रही हों।

छंद-सम्बन्धी ध्वनि-परिवर्तन

४१. रासो में प्रयुक्त तद्भव शब्दों में होनेवाले ध्वनि-परिवर्तन के नियमों का अध्ययन करते समय आरंभ में ही चिरपरिचित शब्दों के ऐसे रूपान्तर सामने आते हैं कि ध्वनि-विज्ञान के विद्यार्थी की कठिनाइयाँ बढ़ जाती हैं। साहित्य के समीक्षक नियमित और अनियमित सभी प्रकार के रूपान्तरों को 'कवि की स्वेच्छा' कहकर आगे बढ़ जाते हैं, किन्तु इससे समस्या हल नहीं होती। कवि की स्वेच्छा का ही शास्त्रीय नाम 'छन्दोऽनुरोध' है। छंदों के अनुरोध से ही कवि यथास्थान प्रचलित शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन करने को विवश होता है। इसलिए नियमित ध्वनि-परिवर्तन के वैज्ञानिक अध्ययन से पूर्व छंद-संबंधी ध्वनि-परिवर्तनों को अलगाकर विचार कर लेने से सुविधा होगी।

छंद-संबंधी परिवर्तन सर्वथा कवि की स्वेच्छा पर निर्भर नहीं होते। अनियमित से प्रतीत होनेवाले उन परिवर्तनों का भी यदि व्यवस्थित रीति से विश्लेषण किया जाय तो निश्चित नियमों का पता चलेगा। रासो में छंद-संबंधी ध्वनि-परिवर्तन के निम्न-लिखित नियम दिखाई पड़ते हैं।

४२. *लघु अक्षर को गुरु* बनाने के लिये रासोकार ने प्रायः तीन उपायों से काम लिया है :—

(क) *स्वर का दीर्घीकरण*—

उघरिय (उद् + √ घट्)	=	ओघरियो	(३१६·३)
कमलनु	=	कमलानु	(३३६·१)
चल्यो	=	चालिउ	(१·२)
जुड़े	=	जुरे	(२६०·३)
पँवार (परमार)	=	पावार	(३३४·१)
मधुर	=	माधुर	(३४४·२)
महिलनु	=	महिलानु	(३३६·२)

(ख) *व्यंजन-द्वित्व*—

(१) *समास-रचना में*

जति गति सु	=	जतिग्गतिस्सु	(१३४·१)
दह दिसि	=	दहद्दिसि	(७६·३)
मद गज	=	मदग्गज	(१८२·२)
नव जल	=	नवज्जलु	(२७२·२)
हय गय	=	हयग्गय	(७६·३)

(२) *वीप्सा अथवा पुनरुक्ति में*

कलक्कला	(१३३·१)	तलतलस्सु	(१३८·१)
कसिक्कसि	(७६·१)	घनिध्धनी	(१३२·३)
कहक्कत	(३११.४)	लहल्लक	(७५·१)

खरक्खर (३०४·३)
गहुग्गह (१६६·१)

(३) *एक ही शब्द के अन्तर्गत*

क : अलक्क (५१·२, ११८·२); उरक्की (१५६.३)
करक्कस (१३४·३), कनक्क (१७५·२)
किरक्कि (१३६·१), ठक्क (२८८६·२),
कटक्क (२८२.१) धनुक्क (११८·१), पायक्क (१७·२)

ख : दिक्खण (१·२), मुक्ख (१७७·३),
विक्खहर (३१५·७)

ग : सरग्गि (१३२·३)

च : परच्चए (६८·३), सविच्चित (२८६·१)

ज : कमधज्ज (३०३·२), कनवज्ज (१३·३),
फर्वाज्ज (२०८·१), सुज्जल (३७),
हज्जारखी (२५४·१), सुज्जान (६४·५),
सावज्ज (२२६·१)

ट : निकट्ट (२६५·२), कमट्ठ (२४४·२)

त : उत्तरिय (६·१), तडित्तह (७७.४), तारत्त (५०·३),
धावत्त (३२०·२) निरत्त (१३६·२), परवत्त (६६·३)
भत्त (२४७·२), अगणित्त (२३१·१)

द : नारद्द (२२३.४), सरद्द (४१.१), सवद्द (११६.१)

न : करन्नु (१७४.२), चरन्न (१७४.४), मन्न (१७४.२)
मोहन्न (५४.१), गमन्न (६८.३), श्रवन्न (११८.२)
हिरन्नहि (३४३.२), त्रिन्नयन (२१६.४), रावन्न (२१५.१)

प : उप्पमा (५२.३), तरप्प (१७२.२), तलप्प (१६०.३)
धुप्पदं (१३६.३), त्रिप्पु (१८२.२), मधुप्प (२७१.४)

ब : साहिब्ब (१०२.२), सब्ब (१०२.२), अब्बीर (६४.३)
तब्ब (२२३.३)

भ : कुकुम्भ (५४.४)

म : कम्मान (२६१.३) दाहिम्मो (२६६.२), द्रुम्म (२५२.२)
दाडिम्म(८८.१) सनम्मुख (२७८.६),
रेसम्म (२३५.१)

ल : कुल्लए (२४३.१), गुहिल्लय (३.३),
तबल्ल (२२३.३), पल्ल (२४२.१), पहिल्ले (२६६.१)
हल्लय (३.४), त्रिबल्ली (३१.४), मिल्लान (१४५.१)

व : चुव्वई (२३६.२)

स : निकस्सि (२८६.२),रस्स (८०.२)

ध्यान से देखने पर पता चलता है कि शब्दान्तर्गत व्यंजन-द्वित्व सबसे अधिक क, ज, न, और ल में हुआ है। कारण स्पष्ट है; क्योंकि कंठ्य स्पर्श, तालव्य घर्ष-स्पर्श, दन्त्य अनुनासिक और पार्श्विक व्यंजन ध्वनियाँ सरलता से द्वित्व हो सकती हैं।

(ग) *शब्दान्त में अनुस्वार*—जिस प्रकार तुलसीदास ने रामचरित मानस में अधिकांशतः तुकान्त में मात्रापूर्ति के लिये *किसान* से *किसाना* जैसे आकारान्त रूप कर दिए हैं तथा कहीं-कहीं तुकान्त को अनुस्वार से युक्त कर दिया है जैसे :—

चन्द्रहास हर मे परितापं (सुन्दर कांड)

उसी प्रकार रासो में भी तुकान्त में मात्रा पूर्ति के लिये अनुस्वार जोड़ दिया गया है। इसके उदाहरण पदे पदे मिलते हैं, फिर भी देखिए छंद सं० २४६.

अनुस्वार की वृद्धि कभी-कभी समास में भी दिखाई पड़ती है;

जैसे—कामं कला (१४०.२)

४३. गुरु अक्षर को लघु बनाने के लिए रासो में निम्नलिखित पद्धतियाँ अपनाई गई हैं :—

(क) *ह्रस्वीकरण* :

अपूर्व > अपुव (३३६·५)
आबद्ध > अबद्ध (२९१·२)
कांति > कांति (३४०·१)
काया > कया (२९९·३)
ढिल्ली > ढिल्ल (२५३·१)
द्वितीय > दुतिय (३१८·४)
भ्रांति > भंति (३१५·६)
मानो > मनो (३०८·२)
राठोर > रठोर (३०५·१)

(ख) *व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण* :

अपुव्व (अपूर्व) > अपुव (३३६·५)
ढिल्ली > ढिली (३३५·१)
अप्पन (आत्मन्) > अपन (३०२·२)
चालुक्क (चालुक्य) > चालुक (२७७·२)
दिज्जइ > दिजइ (२७९·१)

(ग) *अनुस्वार का अनुनासिकीकरण*

कंपइ > कँपे (२९५·३)
गयंद > गयँद (३११·१)
चंपति > चँपति (३०६·२)
चंपिउ > चँपिउ (३०५·२)
पुंडीर > पुँडीर (२०९·१)
बंध > बँध (३४६·४)
संयोग > सँजोग (३४१·२)
हिंदुवान > हिंदुवाण (२७७·१)

४४. छंद-सम्बन्धी परिवर्तनों में गुरु से लघु बनाने की प्रवृत्ति उतनी नहीं है जितनी लघु से गुरु बनाने की। यह प्रवृत्ति मध्ययुग के अन्य हिन्दी काव्यों में भी मिलती है। सन्देश रासक में भी इन पद्धतियों का आश्रय लिया गया है।[१] रासो में छन्द-सम्बन्धी ध्वनि-परिवर्तनों पर विचार करते हुए बीम्स को इतनी अव्यवस्था दिखाई पड़ी कि उन्होंने रासो के *डिंगल-भाषा* नामकरण का कारण इस अव्यवस्था को ही ठहराया। बीम्स के अनुसार "वर्तमान युग के भाट चंद की शैली को 'डिंगल-भाषा' कहते हैं क्योंकि यह छंदः शास्त्र के बँधे नियमों का पालन करने वाली पिंगल के विरुद्ध है।[२] डिंगल नामकरण का जो कारण बीम्स ने बताया है, उसके बारे में यहाँ कुछ भी कहना प्रासंगिक नहीं है। लेकिन चंद छंदों में अव्यवस्था देखकर उनका संकुचित (लज्जित) होना युक्ति-संगत नहीं है। स्वयं रासो के 'आदि पर्व' में ही मात्रा-सम्बन्धी ये वाक्य कहे गए हैं—

> छंद प्रबंध कवित्त जति, साटक गाह दुहत्थ।
> *लहु गुर मण्डित* खंडियहि, पिंगल अमर भरत्थ॥ ८१॥
> युत अयुत जुक्ति विचार विधि, वयन छंद छुट्यौ न कह।
> *घटि वढ्ढी मती कोई पढइ*, तौ चंद दोस दिज्जो न वह॥ ८२॥

रासो के छंद सम्बन्धी परिवर्तन वस्तुतः भाषा के लय-प्रवाह के अनुसार ही है और ध्वनि-परिवर्तन का यह भी एक नियमित ढंग है।[३]

स्वर-परिवर्तन

ऋ :

४५. रासो की लिपि-शैली में *ऋ* वाले तत्सम शब्द प्रायः *री* के द्वारा व्यक्त किए गए हैं। इससे मालूम होता है कि उस समय तक *ऋ* स्वर नहीं रह गया था और उसका उच्चारण सामान्यतः इ के निकट समझा था। लेकिन

---

१. डा० हरिवल्लभ भायाणी, संदेह रासक § १६, § १७,

२. बीम्स स्टडीज़ इन दि गैमर ऑव चंद वरदायी जे० ए० एस० बी० जिल्द ४२, भाग १, १८७३ ई०।

३. एलेन, फ्रोनेटिक्स इन एंशिएंट इंडिया § ३·२३

तत्सम शब्दों के अतिरिक्त रासो में अनेक ऐसे अर्ध-तत्सम शब्द प्रयुक्त हुए हैं जिनमें ऋ अन्य स्वरों में परिवर्तित हो गया है। यह परिवर्तन रासो की कोई अपनी विशेषता नहीं है बल्कि प्राकृत-अपभ्रंश की परंपरा का निर्वाह मात्र है। ऋ के परिवर्तन के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं।

ऋ < अ

गृह > घर (२७६.५, ३०२.२, ३१६.२, ३२६.२)

ऋ > इ :

अमृत > अमिय (३११.३)

कृत > किय (१०५.१)

हृदय > हिय (७२.२)

नृत्य > नित्त (१३०.२)

ऋ > ई :

मृत्यु > मीचु (२७६.२)

ऋ > उ :

मृत > मुअ (३२०.६)

पृच्छ > पुच्छ (४७.३ ११६.४)

ऋ > ए :

गृह > गेह (५८.३, ६७.४, ६२.२, १७३.३, २७३.२)

अन्त्य स्वर :

४६. रासो में अन्त्य स्वर के लोप तथा ह्रस्वीकरण की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। *अन्त्य स्वर के ह्रस्वीकरण* की प्रवृत्ति अपभ्रंश-काल से ही व्यापकता प्राप्त कर चुकी थी।[1] भाषावैज्ञानिकों ने लक्षित किया है कि ठेठ अपभ्रंश के

१. अल्सडोर्फ : अप० स्टडी, पृ० ७; भायाणी : संदेश रासक; ग्रैमर § ४१; टर्नर : 'फ़ोनेटिक वीकनेस आफ टर्मिनेशनल एलिमेंट्स इन इंडो आर्यन', जे० आर० ए० एस०, १९२७, पृ० २२९–३९

सभी शब्दों का अंत ह्रस्व स्वर से हुआ है। संभवतः आदि अक्षर पर स्वराघात होने के कारण ही अन्त्य स्वर के उच्चारण में दुर्बलता आई है। इस नियम के अन्तर्गत आने वाले रासो के शब्द निम्नलिखित हैं--

गंग > गंग (१६२.१, १७३.२, २४३.१)

धारा > धार (५१.४)

भाषा > भाष (८०.१, ८७.२)

योद्धा > जोध (८०.२, २५८.२)

वल्गा > वग्ग (१५५.१, २५६.१)

रजनी > रयणि (३७०.१)

रेखा > रेख (१३४.३)

सेना > सेन (१००.४,८५.८,२६०.१,२६२.१,१०३.४)

शय्या > सेजु (७४.४)

शोभा > सोभ (३४.१,३५.१,६६.१,७६.१,११५.१,)

लज्जा > लाज (१२१.२, १२२.२, १५२.१)

राज्ञी > रानि (१४५.४)

भुजा > भुज (२०८.३, ३२६.४)

मात्रा-संबंधी स्वर-परिवर्तन

४७. बीम्स का अनुसरण करते हुए कुछ विद्वानों ने रासो के शब्दों में स्वर-परिवर्तन संबंधी अराजकता तथा स्वच्छंदता की बात दुहराई है।[1] किसी भाषा की ध्वनि-प्रवृत्ति को ठीक से न समझ पाने पर प्रायः उसमें अराजकता ही दिखाई पड़ती है। प्राकृत वैयाकरणों ने भी अपभ्रंश के बारे में इसी प्रकार के विचार व्यक्त किए हैं।[2] परंतु खोज करने पर उस अराजकता में भी निश्चित् नियमों की प्राप्ति होती है प्राकृत-अपभ्रंश की तरह रासो में स्वर-परिवर्तन दो प्रकार के मिलते हैं।

१. बिपिन बिहारी त्रिवेदी, चंद वरदायी और उनका काव्य पृ० २६७.

२. स्वराणां स्वरा: प्रायोपभ्रंशे। (हेम० प्राकृत व्याकरण, ८।४।३२६), त्रिविक्रम (३.३.१), मार्कण्डेय (१७.६)

(क) मात्रा - संबंधी

(ख) गुण - संबंधी

मात्रा-संबंधी परिवर्तन के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

आ > अ :

आनंद°	>	अनंदने	(२४२·२)
आयास	>	अयास	(१६५·२)
आरंभ	>	अरंभ	(२०६·३)
अर्धांग	>	अरधंग°	(२६·३)
आरोह	>	अरोह	(५१·२)
आलाप	>	अलाप	(१८२.१)
आवास	>	अवास	(१६५·१, १८५·२)
आसाढ़	>	असाढ़	(११५·२)
आहार	>	अहार	(१५४·१)
कटारी	>	कट्टरी	(१३४·१, १३५·२)
कालिंदी	>	कलिंदी	(५१·१)
चाँदनी	>	चंदणी	(२०७·१)
ताम्बूल	>	तंबोल	(१४८·२)
	>	तमूल	(१४६·१)
ताराजन	>	तराजन	(८७·३, २०६०४)
पाताल	>	पयाल	(२२·२, २४२·२)
राजपुत्र	>	रजपूत	(३·६, १४६·३)

ई > इ :

जीव	>	जिय	(३४६·२)
जीवन	>	जियण	(२७७·५)
जीवन	>	जियन	(६·४)

तीरभुक्ति तिरहुत्ति* (१००.२)

ऊ > उ :

भूत हुअ (३०२.४)

४८. मात्रा-संबंधी स्वर-परिवर्तन के जो उदाहरण यहाँ दिए गए हैं, उनमें से अधिकांश स्थलों पर आदि अक्षर में ही स्वर की मात्रा परिवर्तित हुई है। म० भा० आ० के अध्येताओं ने लक्षित किया है कि मात्रा-संबंधी परिवर्तन प्रायः आद्य अक्षर के स्वर में ही होता है † और वह भी दीर्घ से ह्रस्व की ओर होता है। आद्य अक्षर में स्वर का गुणात्मक परिवर्तन बहुत कम होता है।

गुण-संबंधी स्वर-परिवर्तन

४९. स्वरों का गुण-संबंधी परिवर्तन मात्रा की अपेक्षा अधिक जटिल और विशेष अध्ययन का विषय है। रासो में यह परिवर्तन निम्नलिखित ढंग से हुआ है--

°अ° > इ :

तुरंग > तुरिय (३०९.१)

अ° > इ :

रणस्तम्भ > रिणथंभ (२७७.४)

शय्या > सिज्जा (६४.३)

°अ° > उ :

अंजलि > अंजुलिय (१७०.३)

°इ > अ :

ध्वनि > धुन (२२८.२)

* संभवतः इसका अर्थ *तीर-हुँति* (तार अर्थात् तट से या के पास) है। इस स्थिति में भी *तीर* > *तिर* परिवर्तन प्रस्तुत नियम के अंतर्गत आ जाता है।

† डा० एल० एम कात्रे, प्राकृत लैंग्वेजेज़, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १९४५, पृ० ४७

इ° > उ :

द्विज > दुज (७३·४, १७७·८)

बिन्दु > बुंद (३०४·४)

इ° > ऊ :

इक्षु > ऊख (२०७·२)

द्वितीय > दूव (१७७·१)

°ई° > अ :

निरीक्ष्य > निरखि (४८·१, ६४·३)

°उ > अ :

चक्षु > चख (२७·३, ३२·३, ११०·४, ३०३·२)

मुकुट > मुकट (१४९·३)

°उ° > इ :

कौतुक > कोतिग (२०५·४)

पुरुष > पुरिख (१२०·३)

°उ° > ओ :

सुवर्ण > सोवन्न (५४·१, ५८·३)

°ऊ° > ओ :

ताम्बूल > तंबोल (१४८·२)

मूल्य > मोल (३७·२)

नूपुर > नोपुरं (१३२·२)

ए° > इ :

एष > इह (१४·१, ३२·२, १०९·२)

एक > इक्क (६·२, ११०·४, १७१·२, १३८·४)

°ए° > इ :

नरेन्द्र > नरिंद (६९·२, ११२·१, १३८·४)

°ए° > उ :

देवालय > दुवाल (२०३ [illegible])

°ओ° > आ :

छोड़ (छुट्) > छांडि (१४५·४)

°ओ° > ऊ :

क्रोध > कूह (३३१·१)

°औ° > उ :

मौक्तिक > मुतिय (३१·३)

°औ° > ओ :

कौतुक > कोतक (३१८·५)

५० स्वरों के गुण में परिवर्तन की विभिन्न स्थितियों के अध्ययन से परिवर्तन के कारणों का भी पता लगाया जा सकता है। कहीं तो यह परिपर्तन समीपवर्ती स्वर की अनुरूपता के कारण हुआ है जैसे *विंदु > वुंद* और कहीं स्वराघात को उपस्थिति तथा अनुपस्थिति के कारण। किन्तु परिवर्तन के कारणों की अपेक्षा उसकी स्थितियों का अध्ययन विशेष उपयोगी है।

उद्वृत्त स्वर

५१. प्राकृत-अपभ्रंश में मध्यग व्यंजनो के लोप से शब्द के उच्चारण में विवृत उत्पन्न हो जाती थी और उस स्थान पर प्रायः किसी ह्रस्व स्वर की ध्वनि सुनाई पड़ती थी। भाषावैज्ञानिक उस स्वर को उद्वृत्त स्वर कहते हैं। भारतीय आर्य-भाषा विशेषतः म० भा० आ० और आ० भा० आ० में उद्वृत्त स्वर का इतिहास अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उसे स्वतन्त्र रूप से सुरक्षित रखने, य व श्रुति में परिवर्तित कर देने और पूर्ववर्ती स्वर के साथ संयुक्त करने के अनुसार आ० भा० आ० की किसी रचना की भाषा की परख होती है।

पृथ्वीराज रासो में उद्वृत्त स्वर की ये तीनों अवस्थाएँ मिलती है।

(क) *उद्वृत्त स्वर का स्वतन्त्र अस्तित्व सुरक्षित रखना*—रासो में यह

प्रवृत्ति विरल दिखाई पड़ती है। जो थोड़े से उदाहरण मिलते हैं उन्हें प्राकृत अपभ्रंश काल का अवशेष समझना चाहिए।

चुतुष्षष्ठि > चउसट्ठि (३१३·५)

यदि > जइ (१४१·४)

राज > राउ (१३·३, १७०·२, २७०.३, ३२५·१)

वात > वाउ (३०२·२)

(ख) *पूर्ववर्ती स्वर के साथ उद्वृत्त स्वर की संधि*—दो स्वरों का सह-अस्तित्व रासो को स्वीकार नहीं है। प्रायः उन्हें स्वर-संकोचन के द्वारा अथवा संधि के द्वारा संयुक्त कर देने की ओर झुकाव अधिक है। यह प्रक्रिया शब्द के अन्तर्गत तथा शब्दान्त दोनों स्थितयों में दिखाई पड़ती हैं।

शब्दान्तर्गत :

तृतीया > *तिईज > तीज (१·१)

पादातिक > *पाआइक > पाइक > पायक्क (१७·२)

राजपुत्र > *राअउत्त > रावुत > रावत (३२०·१)

ज्वालापुर > *जालाउर > जालोर (२७७·२)

सुवर्ण > सोनि (१७५·४)

श्रवण > स्रोन (५५·३, ५६·१, २६३·१)

शाकंभरी > *सअंभरी > संभरि (१५·२, १४२·१, २७०·६)

मयूर > मऊर > मोर (७१·३, १७७·४)

संमुख > संमुह > साम्हो (४·१, ४२·२)

शब्दान्त में :

कलियुग > कलऊ (८८·२)

कंचुक > कंचुअ > कंचू (५२·१)

समय > समै (६५·४)

जय > जै (१६०·४)

राज > राअ > रा (२५७·३, २७७·५)
ऐरावत > *ऐरावअ > ऐराव (१६·२)
जंगलपति > जंगलवइ > जंगलवै (३११·२)

पदान्त में :

उद्वृत्त स्वर के संकोचन का प्रभाव रूप-रचना के क्षेत्र में विशेष दिखाई पड़ता है। इसके द्वारा विकारी रूपों तथा क्रियापदों के रूपों में बहुत परिवर्तन हो गया।

(१) तृतीया विभक्ति में °अइं > °एँ—
हत्थइं > हत्थैं (२२६·४)
तइं > तैं (२७७·१, २,३,४)

(२) वर्तमान काल के तिङन्त क्रिया-पद में —°अइ > °ऐ

कहै	(१४९·३, ३०८·१) = कहइ		
चलै	(३·४, ३०८·१) = चलइ		
आवै	(१०४·१, १५९·४)		
कंपै	(२३८·२)		
सुनै	(४२·१)		
जंपै	(२९९·२)	रहै	(७४·४, १४५·५, २७४·५)
गिनै	(५७·२)	झंपै	(२३७·१)
छुट्टै	(५१·३)	जानै	(२·२, २६१·४)
है	(१०९·१)	रक्खै	(२७६·१)

(३) विधि और कर्मवाच्य के क्रिया-पद में— °अइ > °ऐ
जग्गिजै (१८·१) लिक्खियै (१६·२, १६·४)

(४) भविष्यत् के क्रिया-पद में— ० अइ > ऐ
जानिहै (९४·५) भिड़िहै (६·२)

(५) भूत कृदन्त, पुंल्लिग, में— ० अउ > ओ

आयो	(८३'४)	चल्यो	(१४'२, ३'५)
पायो	(८३'३)	फूल्यो	(१५'१)
गयो	(८३'१)	ऊयो	(१२६'२)
भयो	(२६६'२, ३०६'२, ३११'४, ३१८'५)		
भो	(३२८'१)		

(६) भूत कृदन्त, स्त्रीलिग, में— इय > ई

भई	(३४६'४)	चली	(११३'१, २०५'२)
करी	(२८६'१, २८९'१)	चढ़ी	(१६४'२)
थक्की	(१५८'१)	थट्टी	(१८१'१, १८६'३)
धाई	(२२७'१, ३४०'२)		

(७) भूत कृदन्त, बहुवचन, में ०इअ > ए

चढ़े	(२८७'१)	लिये	(१०२'२)
कढ़े	(२८७'२)	चमके	(२०७'१)
उये	(१५'२)	चले	(१८९'१)

(ग) *उद्वृत्त स्वर का य श्रति में परिवर्तन*—रासो में स्वर-संकोचन के बाद श्रुति का स्थान आता है। व श्रुति की अपेक्षा रासो में य श्रुति अधिक मिलती है। इस प्रवृत्ति को प्राकृत-अपभ्रंश परम्परा का निर्वाह समझना चाहिए। इसका बिचार व्यंजन-प्रसंग में किया जायगा।

व्यंजन-परिवर्तन

क. असंयुक्त व्यंजन

५२. *महाप्राणीकरण:* रासो में आदि और अनादि अल्पप्राण व्यंजन को महाप्राण कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

स्कंधक > खंधउ (३२०·४)
कंधार > खंधार (३२४·२)
स्कम्भ > खंभ (४२·२)
गृह > घर (२७६·५)
√ ज्वल् > झलकंत
√ स्था° > ठक्की (२२६·२)
स्थितकी > ठुक्की (६६·१)
अंकुर° > अंखुली (२४१·१)
वल्गा > वाघ (३२४·३)

५३. *घोषीकरण* : अघोष व्यंजनों में से कुछ को रासो में घोष बना देने के उदाहरण मिलते हैं, जैसे,

अनेक > अनेग[1] (२८५·१)
एक > एग[2] (१८६·१)
कौतुक > कोतिग (२०५·४)
चातक > चातग (१६१·४)
प्रकट > प्रगट (३१०.१, ३२६·२)

यहाँ केवल क के घोषीकरण के प्रमाण मिलते हैं । संभव है, घोष बनाने की प्रक्रिया इससे अधिक व्यापक रही हो ।

५४. *मूर्धन्यीकरण* : कुछ दन्त्य ध्वनियाँ रासो में मूर्धन्य रूप में प्रयुक्त मिलती हैं ।

थ > ठ :

ग्रंथि > गंठि (१७७·२, १७८·२)

---

१. तुलनीय संदेश रासक; कड्ढिय कुडिल अणेग तरंगिहिं (१७७·२)

२. वही, एगु इकट्टु कट्टु मह दिन्नउ (१८०.४)

त > ड :

गर्त > गड्ढे (१५५·१)

द > ढ :

दिल्ली > ढिल्ली (४२·१, १००·१, १८६·४, १६८·३)

परंतु अनुनासिक न का मूर्धन्य ण में परिवर्तन बहुत कम हुआ है। इससे स्पष्ट है कि रासो की प्रवृत्ति सभी ध्वनियों को मूर्धन्य करने की ओर नहीं थी।

५५. *ण-त्व विधान* : रासो में थोड़े से तत्सम तथा अर्ध-तत्सम शब्दों के अतिरिक्त निम्नलिखित स्थलों पर न > ण परिवर्तन हुआ है—

कथन	कहणो (२८०·१)
श्मशान	मसाण (२६६·१)
हिंदुवान	हिंदुवाण (२७७·१)
रहना (√रत्न्°)	रहणो (२८०·२)
भानु	भाणु (२८७·२)
भानु	भाणं (२६६·२, २८५·२)
मने (मनसि)	मणि (२३८·१)

अर्ध-तत्सम अवशेष :

रजनी	रयणी (२६७·१)
वदन	वयण (२२८·२)
चंद्रिका	चंदणी (२७०·१)

५७. ण > न :

अगनित (३१७·६)	कारन (४५·२)
अरुन (३१८·५)	किरन (४५·२)
कंकन (७६·६)	गन (२७·१, १८०·१)

कर्न (७६.३)	गुन (८७.३, ९०.१, १६८.४)
मोहिनी (२७३.२)	निर्वान (३१७.५)
चरन (२४.१)	पानि (५२.३, १७१.३, १९०.१)
तरुन (४६.२, ३३३.४)	पान (३३.१, १४५.६)
तीन (८६.२, १०१.३	पूरन (७५.२)
दक्खिन (१५०.२)	प्रनाम (८६.२)
दच्छिन (२०८.३)	प्रमान (४२.२)
दप्पन (५३.१)	प्रवीन (१३७.३)
धरनि (६८.२, २९९.३)	प्रान (१४१.४, १७४.४)

ण > न की ओर विशेष झुकाव से प्रमाणित होता है कि रासो की भाषा राजस्थानी की अपेक्षा ब्रजभाषा के अधिक निकट थी।

५८ *मध्यग–म–की स्थिति* : अपभ्रंश की तरह रासो में भी मध्यग म को विकल्प से वँ कर देने की प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है।

कुमारी	कवँारि (१७८.१)
तोमर	तोवँर (२३५.२, २३६.६)
पामार	पावाँर (३.४)
प्रमाण	प्रवान (५.२)
भ्रमर	भवंर (३०१.२)
सामंत	सावंत (१२६.१, १४९.६, ३२२.२)

५९. *मध्यग तथा अन्त्य व की स्थिति* : भाषावैज्ञानिकों ने अन्त्य व के लोप और उ में परिवर्तित हो जाने को ब्रजभाषा की विशेषता बतलाई है।[1] फलस्वरूप रूप-रचना के क्षेत्र में अपभ्रंश के पूर्वकालिक प्रत्यय *इवि* और *अवि* ब्रजभाषा में केवल इ के रूप में अवशिष्ट रह गये। इसके अतिरिक्त *राव* > *राउ*

१. भायाणी, संदेश रासक, ग्रैमर § ३३, सी, पृ० ४८

हो गया। इस प्रकार ध्वनि तथा रूप-रचना दोनों ही दृष्टि से ब्रज में **–व,– –व** का ध्वनि-परिवर्तन महत्वपूर्ण है। रासो में वे दोनों विशेषताएँ लक्षित की जा सकती हैं।

६०, *मध्यग तथा अन्त्य स की स्थिति :* रासो में अन्त्य—**स** का परिवर्तन प्रायः ह में हो गया है। संख्या वाचक विशेषणों में तत्सम–*श* पहले–*स* हुआ फिर–**ह** हो गया ; जैसे

दश > दस > दह (७६. ३, १६३. २);

एकादश > ग्यारस >ग्यारह (१.१) द्वादश > द्वादस > बारस > बारह (३३६. ३) त्रयोदश > तेरस > तेरह (३१८.६)

वस्तुतः यह अन्त्य–स स्वरान्तर्गत अथवा मध्यग ही कहा जायगा।

केसरी > केहरी (७?. २) इसी प्रवृत्ति का परिणाम है।

षष्ठी विभक्ति में °स्य > °स्स > °ह परिवर्तन इसी नियम के अन्तर्गत हुआ था ; जिसके फलस्वरूप में रासो में षष्ठी के निम्नलिखित रूप मिलते हैं—

अंगह (१९२. १) असमनह (८. २)

कनवज्जह (९१. ४) तडित्तह (७७. ४)

दरबारह (८३. १) निसानह (२० २. १)

भविष्यत् के तिङन्त-तद्भव रूपों में भी °ष्य° > स्स > ह की प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

भिद्दिहै (६. २)

मानिहै (९४. ६)

मंगिहइ (१२३. २)

६१, *अन्य मध्यग व्यंजनों की स्थिति :* प्राकृत-अपभ्रंश की भाँति रासो में भी **क ग च ज त द** तथा **प** अल्पप्राण स्पर्श व्यंजनों के लोप और उनके स्थान पर **य व** श्रुति के उच्चारण के उदाहरण प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। रासो में आए हुए इस प्रकार के शब्दों को म० भा० आ० का अवशेष कहा जा सकता है। इस विषय में रासो की कोई अपनी विशेषता नहीं है।

क :			
	अरिक	अरिय	(१३. २)
	आकाश	आयास	(२९९. ५, ३११. ३)
	दिनकर	दिनयर	(४५. १, ३०५. २)
	मणिकार	मनियार	(७०. ९)
	लोक	लोय	(३४७. ४)
	सकल	सयल	(१४२. २, ९४. ४)
ग :			
	उद्गते (उद्+<गम्)	उये (१५. २)	
	नगर	नयर	(३२. १, ६०. ४, ७०. १,) (१५०. २, १६२. १)
	मृगाङ्क	मयंक	(१७६. २)
	मृगेन्द्र	मयंद	(५३. ४)
च :			
	लोचन	लोयन	(३११.६)
	वचन	वयण	(२२८.१)
ज :	कविजन	कवियन	(३२.१)
	गज	गय	(५७.१, ८१.१, २२२.४)
	गजेन्द्र	गयंद	(५३.३)
	गुणिजन	गुनियन	(८६.१)
	निज	निय	(२९.३, ४५.१, १३९.२)
	प्रजल्प्य	पयंपि	(१७९.१)
	भुजंग	भुवंग	(४२.२, २७६.२)
	रजनी	रयणी	(२६७.१)
त :	कातर	कायर	(३३०.४)
	घात	घावु	(२०२.१)

पाताल	पायाल	(२२·२,२४२·१)
रतन	रयन	(३२०·१)
वात	वाय	(१६·४)
सुत	सुवन	(१०६·२)

द् :

पद्दल	पयदल	(२५४·२)
पादातिक	पायक्क	(१७·२)
मदमत्त	मयमत्त	(२५९·४)
रुदंत	रुवंत	(१८५·२)
हृदय	हिय	(७२·२)

प :

गोपाल	गोवल्ल	(१०१४)
जंगलपति	जंगलवै	(३१९·१)
भूपाल	भुवाल	(३१७·२)
राजपुत्र	रावत	(३२०·१)
रूप	रूव	(१६·२,४४·१,४८·

६२. *मध्यग महाप्राण स्पर्श व्यंजन :* : शब्द के अन्तर्गत स्वरों के बीच में आनेवाली महाप्राण ध्वनियों का प्रायः महाप्राणत्व ही शेष रह जाता है। यह प्रवृत्ति भी प्राकृत अपभ्रंश काल से ही आरम्भ हो गई थी। इस प्रकार के अनेक तद्भव शब्द रासो में भी पाए जाते हैं। नीचे मध्यग ख ग; थ ध तथा भ के उदाहरण प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

ख :

दुःख	दुह	(२०३·२,३३८·४)
सुख	सुह	(३३८·४)

घ :

सुघट	सुहर	(५·७·१,२३२·५)

थ :

अथ	अह	(३४६·३)
अथवा	अहवा	(१९७·२)
यूथ	जूह	(३१५·२,३३१·८)
नाथ	नाह	(१७३·३)
पृथिवी	पुहवि	(१४३·१)

ध :

अधिस्थित	आहुट्टिय	(२७१·२)
क्रोध	कोह	(३१८·३)
विधि	विहि	(४५·२)
विधु	विहु	(३३६·५)

भ :

तीर-भूत (भुक्ति ?)	तिरहुति	(१००·२)
दुर्लभ	दुल्लह	(४६·२)
प्र + √भू	पहुच	(७२·१)
लभ्	लह	(१६३·२)

६३. *व्यजन संबंधी-विशेष परिवर्त्तन* : रासो में व्यंजन संबंधी कुछ विशेष परिवर्तन भी लक्षित किए जाते हैं उदाहरण निम्नलिखित हैं—

क > ह :

चिकुर > चिहुर (३०७·१)

ज > ग :

कनवज > कनवग (३१२.६)

ट > र :

भट > भर (१२५.६, ३१८.५, ३२२.२, ३२२.४)

र > ल :

सरिता	सलिता	(२०३.१)

इन परिवर्तनों का कारण स्पष्ट नहीं है किन्तु पुरानी हिंदी के अन्य काव्यों में भी इस प्रकार के विशेष व्यंजन-परिवर्तन दिखाई पड़ते हैं।

संयुक्त व्यंजन

६४. संयुक्त व्यंजनों में से निम्नलिखित के परिवर्तन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

क + ष = क्ष
व्यंजन + य
व्यंजन + र
र + व्यंजन

क्ष की कुछ स्थितियों को छोड़कर शेष संयुक्त व्यंजनों में प्राकृत-अपभ्रंश की भाँति रासो में भी पूर्व-सावर्ण्य तथा पर-सावर्ण्य के द्वारा प्रायः व्यंजन-द्वित्व हो गया है। रासो में जहाँ छंदोऽनुरोध से व्यंजन-द्वित्व नहीं हुआ है, वहाँ व्यंजन-द्वित्व का यही कारण है। नीचे इनमें से प्रत्येक के कुछ महत्त्वपूर्ण उदाहरण उद्धृत हैं।

(१) क्ष > क्ख :

दक्षिण	दक्खिन	(१५०.२)
पक्षधर	पक्खर	(२२८.१)

क्ष > ख :

अक्षि	अंखि	(१२०.३)
अलक्ष्य	अलख	(३३२.६)
इक्षु	उख°	(२०७.२)
क्षण	खिणि	(४.२)

क्षीण   खीन   (५३.४)

क्षेत्र   खेत   (२६२.१, ३१३.१)

चक्षु   चख   (२७.३, ३२.३, ११०.४, ३०३.२)

नंक्ष्यति (√ नश्) > नंख°   (१२०.२)

क्ष > च्छ :

दक्षिण   दच्छिन   (२०८.३)

क्ष > छ :

क्षिति   छिति   (२८.१)

क्षीर   छीर   (१७४.३)

क्षोभ   क्षोह   (५८.४)

(२) व्यंजन + य

नृत्यति   नच्चए   (६८.४)

नित्य   निच्च   (१३०.२)

वाद्यते   बज्जई   (१५७.३)

मध्य   मज्झ   (५२.४, ३३४.३)

(३) व्यंजन + र

चक्र   चक्क°   (२६७.१)

अग्र   अग्ग   (२५४.२)

जाग्र°   जग्गिजै   (१८.१)

वज्र   बज्ज   (१४८.२)

गात्र   गत्त   (२७१.३)

छत्र   छत्त   (२४३.२)

पत्र   पत्त   (२३.१, ६८.४, ६४.१, ६७.२)

भद्र   भल्लि   (१०३.१)

अभ्र   अब्भ   (१२६.२)

सहस्र   सहस्स   (२६८.२)

(४) र + व्यंजन

शर्करा	सक्कर	(६०.२)
मार्ग	मग्ग	(१४.१ २१.३, २७४.२)
गुर्जर	गुज्जर	(३०२.१, ३१७.१)
कीर्ति	कित्ति	(२७७., ३२८.२)
अर्ध	अद्ध	(३८.१, २०४.३)
दर्पण	दप्पन	(५३.१)
निर्मल	निम्मल	(५३.१)
दुर्लभ	दुल्लह	(३५.१)
पूर्व	पुब्ब	(१३.१)
सर्व	सव्व	(२७४.१, ३००.१)

६५. *व्यंजन-द्वित्व का सरलीकरण :* प्राकृत-अपभ्रंश से रासो की विशेषता इस बात में है कि उसने परंपरागत व्यंजन द्वित्व को सरल करके उसे एक व्यंजन के रूप में उपस्थित किया। भाषा वैज्ञानिकों ने एक स्वर से इस प्रवृत्ति को भारतीय आर्यभाषा की आधुनिक प्रवृत्ति कहा है।[1] पंजाबी को छोड़कर यह प्रवृत्ति प्रायः सभी आधुनिक आर्यभाषाओं में पाई जाती है।[2] रासो में जहाँ व्यंजन द्वित्व का सरलीकरण नहीं हो सका है, उसे प्राकृत अवशेष कहा जाय अथवा पंजाबी का प्रभाव, यह स्पष्ट नहीं है। परन्तु मेरी समझ से तो प्राकृत अवशेष कहना अधिक युक्तिसंगत प्रतीत होता है।

रासो में सरलीकरण की यह प्रक्रिया दो रीतियों से की गई है :—

(क) क्षति-पूरक दीर्घीकरण-सहित ; और

(ख) क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित

१. तेस्सितोरी, पुरानी राजस्थानी, पृ० ७ (सभा संस्करण); भायाणी. संदेश रासक, ग्रैमर, §३६ ; चैटर्जी, उक्ति व्यक्ति प्रकरण, स्टडी, §३५

२. चैटर्जी, इंडो आर्यन एंड हिंदी, पृ० ११४

(क) *क्षतिपूरक दीर्घीकरण* : दो व्यंजनों में से केवल एक को सुरक्षित रखने के लिए आवश्यक है कि दूसरे की क्षति उसी अक्षर में कहीं अन्यत्र पूरी की जाय। यदि पूर्ववर्ती अक्षर का स्वर ह्रस्व हो तो स्वाभाविक है कि परवर्ती व्यंजन-द्वित्व की पूर्ति उसे दीर्घ करके की जाय। इस प्रकार व्यंजन-द्वित्व से पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर को दीर्घ की भाँति उच्चारण करने की प्रक्रिया को ही भाषा वैज्ञानिकों ने 'क्षति-पूरक दीर्घीकरण' नाम दिया है। रासो में इस ध्वनि-प्रवृत्ति के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

अष्ट > अट्ठ > आठ (९७.२)
उद्गतो > उग्गयो > उग्गो > ऊग्यो (१२६.२)
कार्य > कज्ज > काज (९.४,२९.१,१९५.२,२२९.१)
क्रियते > किज्जइ > कीजइ (६०.४)
कृत > किन्ह > कीन (२७२.४)
छुट् > छुट्टि > छूटि (१५३.२)
यस्य > जस्स > जासु (६७.१,५८.३,२६९.१)
डिम्भ > डींभ (८६.३)
दर्दुर > दद्दुर > दादुर (११५.२)
दीयते > दिज्जइ > दीजइ (१५४.४)
निद्रा > निद्द > नींद (२७०.२)
लक्ष > लक्ख > लाख (२३.२)
वल्गा > वग्ग > वाघ (३९४.३)

(ख) *क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित* : व्यंजन-द्वित्व के पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर को जब दीर्घ नहीं करते और परवर्ती व्यंजन-द्वित्व में से केवल एक रह जाता है तो उसे 'क्षतिपूरक दीर्घीकरण-रहित' सरलीकरण कहा जायगा। रासो में इस प्रकार के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

आत्म > अप्प > अपु (२८.१)
अलक्ष्य > अलक्ख > अलख (३३२.१)

उच्च > उच (२७·२)
उत्संग > उच्छंग > उछंग (१७३·२)
उत्थित > उट्ठिय > उठे (२०४·१)
उद्धृत > उद्धिय > उढिय (३·५)
उत्तुंग > उत्तङ्ग > उतंग (२२५·१)
उत्पाटयति > उप्पारइ > उपारे (२६०·१)
उद्गमति > उग्गइ > उगे (१५·२)
कृष्टति > कड्ढइ > कढे (२८७·२)
कान्यकुब्ज > कन्नउज्ज > कनवज (१·२, १९८·३)
चक्षु > चक्खु > चख (२७·३,३२·३,११०·४,३०३·२)
? > चड्ढिउ > चढिउ (१३·४)
चालुक्य > चालुक्क > चालुक (२७७·२)
चित्त > चितु (१८४·२)
युद्ध > जुद्ध > जुध (२४७·१)
तुच्छ > तुछ (१६३·३, २४८·२)

जहाँ पूर्ववर्ती अक्षर दीर्घ स्वर से युक्त होता है, वहाँ क्षतिपूर्ति के लिए दीर्घीकरण की आवश्यकता नहीं रहती। ऐसे शब्द में होने वाले सरलीकरण को भी 'दीर्घीकरण-रहित' के ही भीतर लिया जा सकता है। रासो में इसके भी उदाहरण मिलते हैं, जो निम्नलिखित हैं—

चैत्र > चैत्त > चैत (१·१)
योद्धा > जोद्धा > जोध (८०·२, २५८·२)
वाद्य° > वाज्ज° > वाजने (२५७·३)

स्वर-भक्ति

६६. प्राकृत-अपभ्रंश में संयुक्त व्यंजन के क्लिष्ट उच्चारण को सरल करने के लिये संयुक्त-व्यंजन के बीच में प्रायः स्वरागम कर दिया जाता था और यह

स्वर संयुक्त-व्यंजन में से पूर्ववर्ती व्यंजन के साथ जुड़ कर पूर्ण अक्षर की रचना करता था। भाषाशास्त्रियों ने इस प्रक्रिया को 'स्वर-भक्ति' की संज्ञा दी है। रासो में म० भा० आ० की इस परंपरा का निर्वाह पाया जाता है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

अचलश्वर	अचलसुवर	(३१२.२)
अर्धांग	अरधंग	(२६.३)
अस्नान	असनान	(१०.१)
यत्न	जतन	(१९३.१)
तल्प	तलप्प	(१९०.३)
तीर्थ	तीरत्थ	(१९२.१)
तुर्क	तुरक	(२७५.५)
दर्शन	दरसन	(२९.१)
दुर्दैव	दुरदेव	(१६६.१)
द्वार	दुवार	(५७.१)
धर्म०	धरम्म०	(१३०.१)
पर्वत	परवत्त	(६९.३)
प्रणाम	परनाम	(८५.४)
स्पर्श	परस	(११२.३, १९०.१, ३३१.२)
प्राकृत	पराकृति	(३४५.४)
पार्थ	पारत्थि	(२७४.५)
पूर्ण	पूरन	(७५.२)
मुक्ति	मुकति	(७८.१)
वर्ण	वरन	(१०७.२, ३१२.२, ३२०.५)
वर्ष	वरस	(११०.१)
स्वप्न	सपन्न	(१२७.१, १४४.१)
शब्द	सबद्द	(५.१, १०५.१)

स्वर्ग	सरग्गि	(१३२·३)
सर्व	सरव	(१७९·२)

सानुनासिकता

६७. संयुक्त व्यंजन तथा व्यंजन द्वित्व का सरलीकरण करने के लिए जिस प्रकार क्षतिपूरक दीर्घीकरण होता है, उसी प्रकार क्षतिपूरक सानुनासिकता भी होती है। यह क्षतिपूरक सानुनासिकता कभी तो दीर्घीकरण सहित होती है और कभी दीर्घीकरण-रहित। रासो में इसके लिए सानुनासिकता के स्थान पर अनुस्वार का प्रयोग किया गया है। अनुनासिक स्वर का अस्तित्व रासो की लिपि-शैली के कारण स्पष्ट नहीं है। इसलिए छंद-प्रवाह को ध्यान में रखते हुए ऐसे सरलीकरण को ***'क्षतिपूरक अनुस्वार'*** के ही अन्तर्गत समझना सुरक्षित है। 'क्षति-पूरक अनुस्वार' के कतिपय उदाहरण निम्नलिखित हैं।

अश्रु	अंसु	(७६·१)
कर्ष	खंच*	(२५१·१)
जल्प्	जंप	(८५·१, ११०·६, १७७·१, १६६·६)
दर्शन	दंसन	(२५·४, ४५·१)
वक्रिम	वंकिम	(१४८·१)
मध्य	मंझ	(७१·१)
√मृग्	मंगन	(१०५·२)
मुग्ध	मुंध	(२७१·४)
निद्रा	निंद	(१३६·२)
पक्षी	पंखी	(१५६·१)
प्र + √जल्प्	पयंपि	(१७६·१)

* खंच की व्युत्पत्ति विवादास्पद है। होर्नले ने इसका सम्बन्ध √कृष् से जोड़ा है परन्तु ष् से च् परिवर्तन की व्याख्या युक्तिसंगत प्रतीत नहीं होती।

रेफ-विपर्यय

६८. रासो में कुछ शब्द ऐसे मिलते हैं जिनमें किसी व्यंजन से संयुक्त पूर्ववर्ती र (र + व्यंजन) विपर्यासित होकर पूर्ववर्ती व्यंजन के साथ परवर्ती अंश की तरह संयुक्त हो जाता है; जैसे

गंधर्व > गंध्रव (२३·१, २७·१)
पर्यंक > प्रजंक (३४४·२)

लघुतम रूपान्तर में इस प्रकार के शब्द बहुत कम हैं। इसके विपरीत वृहत् रूपान्तर में ऐसे शब्दों की बहुलता है। रेफ-विपर्यय की यह प्रवृत्ति आज भी पंजाबी बोलचाल में पाई जाती है। *परमात्मा* का उच्चारण पंजाबी लोग *प्रमात्मा* करते हैं। इस विषय में आधुनिक राजस्थानी की क्या स्थिति है, मुझे नहीं मालूम। संभवतः राजस्थानी में यह प्रवृत्ति नहीं है। इसलिए रासो में रेफ-विपर्यय की इस प्रवृत्ति को किसी अन्य संतोषप्रद व्याख्या के अभाव में पंजाबी प्रभाव का परिणाम कहा जा सकता है। संभव हैं, कुछ लोग इसे छंदोऽनुरोध का परिणाम कहें, लेकिन जैसा कि बीम्स ने कहा है, रासो की प्रत्येक ध्वन्यात्मक विशेषता को हम छंदोऽनुरोध की ओट में नहीं छिपा सकते। छंदोऽनुरोध लंगड़ी दलील है और इस युक्ति की शरण, चारो ओर से निराश होकर, अंत में ही लेने की सलाह दी जा सकती है।

फ़ारसी शब्दों में ध्वनि-परिवर्तन

६९. लघुतम कनवज्ज समय में फ़ारसी शब्दों की संख्या तीस के आसपास है, जिनमें से निम्नलिखित शब्द तद्भव रूपमें ही प्रयुक्त हैं—

आब (२७६·६, २७९·२)
दरबार (७९·४, ८५·२, १४२·२)
सवार (१७४·३)
साल (१०·३, २२·३, ३४४·३)

साहब (१०२'३)

स्याह (१३३'४. १७५'४)

शेष निम्नलिखित ध्वनि-परिवर्तन के साथ प्रयुक्त हैं

(१) आदि अक्षर के स्वर में स्वराघात के कारण मात्रा-संबंधी परिवर्तन—

आसमान[२]	>	असमनह	(२०२'२)
सेहरा	>	सेहरउ	(२२०'६)

(२) श–स :

शमशेर	>	समसेर	(२०६'३)
शहनाई	>	सहनाइ	(२२५'१)
शाह	>	साह	(१७'१, ३२५'३)
शोर	>	सोर	(१८६'२)

(३) व्यंजन-द्वित्व :

तुर्क	>	तुरक्की	(१२७'३)
फ़ौज़	>	फवज्जि	(२०८'१)

(४) सम्प्रसारण तथा स्वरभक्ति :

तख़्त	>	तखत	(१८६'४)
तुर्क	>	तुरक	(२७५'५)

(५) फारसी की संघर्षी ध्वनि ख़ ग़ ज़ और फ़ उस समय हिन्दी में नहीं थी, इसलिए रासो में स्वभावतः उनका ग्रहण स्पर्श व्यंजन के रूप में किया गया। फलतः,

तख़्त	>	तखत
तेग़	>	तेग
ज़िरह	>	जिरह
हज़ार	>	हज्जार
फ़ौज	>	फवज्ज

(६) शब्द के द्वितीय अक्षर में स्वर का गुणात्मक परिवर्तन—

नफ़ीरी	>	नफेरी	(२२६'१)
साबित	>	साबुत	(२७६'५)

वृहत् रूपान्तर में अरबी-फारसी शब्दों की संख्या बहुत अधिक हैं; परन्तु चूँकि मैंने उसे अपने अध्ययन का आधार नहीं बनाया है, इसलिए उन शब्दों पर यहाँ विचार करना अप्रासंगिक होगा। उन शब्दों पर स्वतन्त्र रूप से अन्यत्र विचार करना ही अधिक उचित होगा।

———

द्वितीय अध्याय

रूप-विचार

१. रचनात्मक उपसर्ग और प्रत्यय

७०. *उपसर्ग* : रासो की शब्द-रचना में तत्सम और तद्भव दोनों प्रकार के उपसर्ग दृष्टिगोचर होते हैं। सम्प्रति तद्भव उपसर्गों पर ही विचार करना उपादेय है।

(१) अ- > *आ*-(अधिक, पूरा, चारों ओर और तक); द्वितीय अक्षर पर स्वराघात के कारण आदि अक्षर के दीर्घ *आ* का ह्रस्वीकरण हो गया है।

अनंदने (२४२·२) आनन्द°
अरंभ (२०१·२) आरम्भ
अरोह (५१·२) आरोह
अबद्ध (४०·२) आबद्ध

(२) उ-> उत्-(ऊपर)

तत्सम शब्दों में सन्धि-प्रक्रिया से उत् का त् परवर्ती स्वर अथवा व्यंजन के साथ जुड़कर सुरक्षित रहता है किन्तु रासो के तद्भव शब्दों में इस उपसर्ग के अन्त्य त् का लोप हो गया है।

उखारे (२६०·२) उत् + √ खा
उझकि (१०३·३) उत् + √ झक्
उटंकि (६४·४) उत् + √ टकि
उठत (३२०·२) उत् + √ स्था
उडि (३·५) उत् + √ डा
उतंग (२३·३) उत् + तुंग
उपारे (२६०·१) उत् + पाटयति
उलट्टि (१३६·१) उत् + लुट्

(३) ऊ-> अव-(नीचे, हीन, अभाव)

ऊघट्ट (१५७·१) अव + √ घट्

(४) ओ-< अव-

ओघरियं (३११·२)

(५) दु-< दुस्-(कठिन)

दुसह (१४६·२) दुस्सह

(६) निद-< निर्-, निस्- (बाहर, निषेध)

निकस्सि (२८६·२) निष्कासित

निबरंत (३३३·२) निर् + √ वृ

निसंक (१८६·१) निस् + शङ्क

(७) प- < प्र- (अधिक, आगे, ऊपर)

पठावहि (१६८·३) प्रस्थापयसि

पयंपि (१७६·१) प्रजल्प्य

पयाणहि (२८७.२) *प्रयाणस्मिन्

पसर (१२८.२) प्रसार

पहार (३३५.२) प्रहार

पहुच (७१.१) *प्रभूतक[1]

(८) स- < सम्- (साथ, पूर्ण)

सजुत्त (१०६·१) संयुक्त

सपत्तिय (३२१·१) सम्प्राप्तिक

(९) सा- < सम्-

सामुही (२५२·२) < सम्मुख°

७१. रचनात्मक प्रत्यय—कृदन्त और तद्धित।

-अ <-क : (स्वार्थिक)

---

१. भुवः पर्याप्तौ हुच्च। (हेमचन्द्र, प्राकृत व्याकरण, ८-४-३९०)

रूपान्तर—उ और *य-* ।

अग्गलउ (१०७·२) सेहरउ (३२०·२)
गुज्जरउ (३०३·१) कियउ (१४५·३)
पक्खरउ (१४६·४) अच्छरिउ (३११·३)
अंगुलीय (१७१·१) किन्तिय (२२६·१)
अरिय (१३·२) ढिल्लिय (३१५·५)
अलिय (१२८·१) छत्रपतिय (३१३·५)
अनुरत्तिय (१६३·४) त्रीय (७·१)

–अ <–क्त : भूत कृदन्त । कुछ लोग इसे भ्रम से शून्य प्रत्यय समझते हैं ।

हंक (३१०·१)
गह (३१३·१)

–अंत (*तत्सम*) :—वर्तमान कृदन्त, विशेषण; रासो में वर्तमान काल की समापिका क्रिया के रूप में प्रयुक्त ।

अप्पंत (१६·१) झलकन्त (१२·४)
कसन्त (७५·३) गसन्त (२७१·१)
जरन्त (७०·३)

–अत <–अंत :

देखत (८६·३) दिखत (८४·१)
कहत (१४६) परत (३३५·१)

–अता <–अंत :

कहता (२१५·१)
लहता (२१५·२)

–अ <–अक : स्वार्थिक से उत्पन्न और संज्ञा तथा विशेषण शब्दों की रचना करने वाला ।

भला (१४६·६) पत्ता (११८·१)
अड्डा (२५१·१) तुरिया (१६२·४)

पगुरा (२७४·४) वानरा (२१७·२)

— आ < — क्त + क : भूत कृदन्त। लिंग-वचन से अनुशासित। यह खड़ी बोली तथा पुरानी ब्रजभाषा की मुख्य विशेषता है।

हुआ (१८३·१)
किया (१८५·२)
चल्या (१५३·२)

— ई < — इका[1] : तद्धित। मुख्य स्त्री-प्रत्यय।

अखुली (२४१·१)
अगुली (३३·१)
अंधियारी (२७·१)
अच्छरी (१९३·२)
घरी (२०६·४)

— ई < — ईय : तद्धित। विशेषण।

तुरक्की (१५७·३)
दच्छिनी (१००·४)
पच्छिमी (१५८·१)
जंगुली (२७७·५)

— क्क[2] < ? : कृदन्त। त्वरा-सूचक।

झमक्कहि (३४३·२)
पहुक्कहि (३४३·२)

— त्तिन > — त्व : तद्धित। भाववाचक संज्ञा बनाने वाला प्रत्यय। इसका प्रचलन अपभ्रंश-काल से ही हो गया था[3]। आधुनिक हिंदी में

१. चैटर्जी, बंगाली लेंग्वेज, § ४१९
२. भायाणी, संदेश रासक, ग्रैमर § ४६
३. त्व-तलोः प्पणः ॥ अपभ्रंशे त्व तलोः प्रत्ययोः प्पण इत्यादेशो भवति। वड्डप्पणु परि पाविअइ [३६६·१]॥ प्रायोधिकारात् वड्डत्तणहो तणेण [३६६·१]॥ (हेम० प्राकृत व्याकरण, ४४३७)

इसके स्थान पर—प्पन का प्रचलन है जो अपभ्रंश काल में विकल्प से व्यवहृत होता था। रासो के बृहत् रूपान्तर में भी -प्पन पाठ ही मिलता है। परंतु—त्तनु के प्रचलन की पुष्टि *रामचरित मानस* की कुछ प्राचीन प्रतियों से होती है। ना० प्र० सभा से प्रकाशित और शंभूनारायण चौबे द्वारा सम्पादित मानस में *'केहि न सुसंग बडत्तनु पावा'* (१-१०-८) पाठ सुरक्षित रखा गया है। वस्तुतः *-त्म* और *-त्व* के *-त्त* और *-प्प* दोनों ही विकार म० भा० आ० काल में हुए जैसे *आत्म-* > *अत्त, अप्प-*। इनमें से संभवतः *-त्त* वाला रूप प्राचीनतर है।

अमलत्तिनु	(२६·३)
कवित्तनौ	(२७६·६)
धीरत्तनु	(१८२·१)
बडित्तनौ	(२७९·५)

-न < *-अनीय* : क्रियार्थक कृदन्त। इसका संबंध अपभ्रंश *-अण* (हेम० ४·४४१) से है।

कहन	(३७·४)	कहना
गहन	(२१२·१)	ग्रहण
दिक्खन	(९१·४)	देखना
मग्गन	(११२·२)	मांगना
चाहन	(१३६·१)	चाहना (देखना)
मरन	(३३४·२)	मरना
जान	(२६१·४)	जाना

- नो (णो) < *-अनीय* : क्रियार्थक कृदन्त। *-न* का ओकारान्त रूप। *-नो* पुरानी ब्रजभाषा की अपनी विशेषता है[१]। आधुनिक कन्नौजी और जयपुरी में यह अब भी बोला जाता है। आधुनिक ब्रजभाषा में **नौ** होता है। बोल-चाल की ब्रजभाखा में मिर्जा खाँ ने *-ना* रूप भी सुना था।

१. मिर्ज़ा खाँ, ग्रैमर ऑव ब्रजभाखा, पृ० ४६

कहणो (२८०'१)
गहणो (,,)
रहणो (२८०'२)
वहणो (,,)

– *नी* < –*इन्* : तद्धित, स्त्रीलिंग द्योतक।

चंदणी (२७०'१) चांदनी
त्रित्तनी (२२६'२) नर्तकी

– *र* < –(अप०) ड, ड़ : तद्धित, स्वार्थक।

पंगुर (१८४'१) पंगु राज (जयचंद)
मज्झर (३३७'२) मज्झ, मध्य
हत्थरे (२२१'१) हाथ में

– *री* < –*र* : तद्धित, गुण वाचक, 'वाला' अर्थ द्योतक।

मुंछरिया (२०७'४) मूँछवाला

– *हार* < –*कार ?* : तद्धित, 'वाला' अर्थ-द्योतक। इसकी व्युत्पत्ति अभी तक अनिश्चित है। होर्नले ने इसका संबंध सं० – *अनीय* से जोड़ा है[1] जो संतोषषप्रद नहीं समझा जाता। संभव है, –*कार* < –*आर* में –*ह*–श्रुति के आगम से इसकी रचना हुई हो।

निसाहार (२२३'१) निशावाला; पूरा वाक्य इस प्रकार है :—

'निसानं निसाहार वज्जे' अर्थात् रातवाले निसान बजे।

२. संज्ञा

७२ *लिंग* :

व्याकरण की दृष्टि से रासो में प्रयुक्त संज्ञा शब्दों में लिंग-निर्णय के लिए एक ही उपाय है कि स्त्रीलिंग संज्ञाएँ—इकारान्त तथा—ईकारान्त होती हैं, जैसे—

१. गौडियन ग्रैमर; § ३२१

अच्छरी (१७३·२) *चंदगी* (२७०·१), *अंगुरी* (३३·१), *भिल्ली* (२६०·२), *घरी* (२०६·४), तथा

सुंदरि (१७०·१), *पुत्ति* (१६६·१), *संजोगि* (३३८·३) इत्यादि।

इसके अतिरिक्त स्त्रीलिंग संज्ञाएँ कृदंत विशेषण के अन्वय से भी स्पष्ट हो जाती हैं। स्त्रीलिंग संज्ञाओं के साथ अन्वित होनेवाले कृदंत भी प्रायः–इकारान्त तथा–ईकारान्त होते हैं, जैसे—

भई विपरीत गति (३४६·४)
सुनि सुंदरि वर वज्जने
चढ़ी अवासन उट्टि। (१६५·१)
दिक्खति सुंदरि दर बलनि। (१६५·१)
जब दस कोस दिली रहिय। (३३५·२)
भिरत भंति भइ विक्खहर। (३१५·६)
भई रारि। (३२३·१)

कृदंत विशेषणों के अतिरिक्त स्त्रीलिंग संज्ञाएँ संबंध परसर्ग—*की* के अन्वय से भी पहचान में आ जाती हैं, जैसे—

इहि मरन कीरती पंग की। (२७७·५)

कभी कभी ये संज्ञाएँ निकटवर्ती अथवा दूरवर्ती निश्चयवाचक के स्त्रीलिंगवत् रूप से भी विविक्त होती हैं, जैसे—

पंगुराइ सा पुत्ति (१६६·१)
ति अच्छरी (१७३·३)

जहाँ अचेतन पदार्थों में –इकारान्त और – ईकारान्त रूप दृष्टिगोचर होते हैं, वहाँ ये प्रत्यय लिंग–बोध कराने के साथ कभी-कभी आकार की लघुता भी प्रकट करते हैं, जैसे *थारि* (१७१·२) अर्थात् थाली। आकार में जो थाली से बड़ा पात्र होता है, उसे थाल कहते हैं।

स्त्रीलिंग संज्ञाओं में इकारान्त तथा ईकारान्त प्रत्यय का प्रभाव इतना बढ़ा कि संस्कृत के अनेक आकारान्त स्त्रीलिंग शब्द भी आ० भा० आ० में ईकारान्त हो गए। रासो में इस प्रकार के अनेक शब्दों में से एक है—

सुलच्छिनिय (११६·३) < सुलक्षणा

वचन

७३. एकवचन से बहुवचन बनाने के लिए रासो में मुख्यतः *-न* प्रत्यय जोड़ा गया है, जो ब्रजभाषा की अपनी विशेषता है। मिर्ज़ा खाँ ने १७ वीं सदी में ही इसे लक्षित किया था। उनके अनुसार *कर* और *पग* के बहुवचन रूप **करन** और *पगन* होते हैं।[1] आरंभिक १४ वीं सदी की मैथिली रचना 'वर्ण रत्नाकर' में जहाँ *-न्ह* वाले बहुवचन की प्रधानता है, एक उदाहरण *-न* प्रत्ययान्त का भी मिला है।

मयूरन चरइतें अछ (२१ अ)

'वर्ण रत्नाकर' की ही तरह अन्य पूर्वी रचनाओं में *-न्ह* वाले बहुवचन की प्रधानता है। यहाँ तक कि पूर्वी प्रदेशों के कवियों की ब्रजभाषा में भी यदा-कदा *-न्ह* का प्रयोग दिखाई पड़ जाता है। तुलसीदास की ब्रजभाषा में लिखी 'गीतावली' में भी *वीथिन्ह* (१·१) जैसे प्रयोग मिल ही जाते हैं।[2]

इनके विपरीत रासो में *-न्ह* का प्रयोग खोजे नहीं मिलता; अधिकांशतः बहुवचन *-न* प्रत्ययान्त हैं; जैसे—

नृप नयनन ति सँजोगि। (३४·१२)
पुरिखन (१२०·३), राइन (१२५·१)
अवासन (१६४·२)

-न के अन्य विकृत रूप *-नु* और *-नि* भी मिलते हैं और बिना भेद-भाव के इन सबका प्रयोग सभी कारकों में होता है; परन्तु *-नु* मुख्यतः कर्म-

१. ब्रजभाखा ग्रैमर, पृ० ४१
२. डा. धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा, § १५०

सम्प्रदान-सम्बन्ध बहुवचन में प्रयुक्त होता है और *–नि* करण तथा अधिकरण में जैसे :—

मुक्के मीननु मुत्ति (१६३·२)
राजनु समझावहि (१६२·२)
सुगंधनि (११३·२) गयंदनि (२२२·४)
दर बलनि (१६५·१)

७४. *–न* से पूर्ववर्ती स्वर कभी-कभी अकारण ही दीर्घ कर दिया जाता है। रासो की इस विशेषता को बीम्स ने काफी पहले लक्षित किया था।[1] बीम्स के बाद होर्नले का भी ध्यान इस विशिष्ट रूप की ओर गया था।[2] रासो से उन्होंने *महिलानं द्रव्यान* शब्द उद्धृत किए हैं। संयोग से रासो के हमारे पाठ में भी *महिलानु* शब्द प्राप्त हुआ है; उसके अतिरिक्त *कमलानु, दिवान* (*देवान*) और *हिंदुवाण* शब्द भी मिले हैं। इनका पूरा प्रयोग इस प्रकार है।

१. दिव मंडन तारक सयल, सर मंडन कमलानु।
जस मंडन नर-भर सयल, महि मंडन महिलानु॥ (३३६)
२. दिव दिवान गो देवरउ। (३२०.५)
३. तैं रक्खे हिंदुवाण। (२७७·२)

इनमें से केवल *कमल* शब्द ही अकारान्त हैं और *–न* जुड़ने पर उसका अन्त्य स्वर दीर्घ *–आ* हो गया।

शेष शब्द आकारान्त तथा उकारान्त हैं। इसलिए *महिला* का *महिलानु* तथा *हिंदु* का *हिंदुवाण* होना कोई आश्चर्यजनक नहीं है। किन्तु *कमल* का *कमलानु* होना अवश्य विचारणीय है।

इस प्रकार के प्रयोग ब्रजभाषा के अन्य कवियों में भी मिलते हैं।[3]

---

१. कम्पैरेटिव ग्रैमर. जिल्द २, २१६, २०७, २८२

२. गौडियन ग्रैमर. पृ० १६५.

३. डा० धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा § १५०

तुरकान (भूषण० २४)
सखियान (नरोत्तम १००)
दुखियान (भारतेन्दु)

सामान्य स्थिति में *तुरकन*, *सखियन*, *दुखियन* होना चाहिये। इसे केवल छंद का अनुरोध कहकर नहीं टाला जा सकता। मिर्जा खाँ ने भी *कुलिटान* रूप का उल्लेख किया है जो संभवतः *कुलटा* का बहुवचन है।[1]

७५. *–न* बहुल रूपों के अतिरिक्त रासो में *–ह* प्रत्ययान्त बहुवचन रूप भी मिलते हैं।

देखि अरि दंतह कट्टइ (३०९·४)
(देखकर शत्रु दाँत काटते हैं)
कँपे काइरह (२९५·३)

अपभ्रंश में ये रूप विशेषतः संबंध–सम्प्रदान, एकवचन में प्रयुक्त होते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रत्यय या तो *–हिं* का ही दुर्बल रूप है या फिर –हँ का निरनुनासिक रूप। क्योंकि *–ह* वाले बहुवचन रूप अन्यत्र देखने में नहीं आये। 'वर्ण रत्नाकर' में भी *–आह* वाले ही रूप मिलते हैं।[2]

पुरानी रचनाओं में अभी तक संदेशरासक ही ऐसा है जिसमें-*अह* अथवा *ह* वाले कर्ता बहुवचन के रूप खोजे जा सके हैं[3] जैसे—

अबुहत्तणि अबुहह णहु पवेसि (२१ ख)

परंतु मेरे विचार से *अबुहह* यहाँ प्रथमा बहुवचन नहीं, बल्कि षष्ठी बहुवचन है। वाक्य का सीधा अर्थ है कि अबुधत्व के कारण अबुधों *का* प्रवेश नहीं है। लेकिन भायाणी ने उसे घुमाकर इस प्रकार रखा है—

१. ब्रजभाखा ग्रैमर, पृ० ४१
२. इंट्रोडक्शन § २६
३. संदेश रासक, ग्रैमर, §५१ (२)

'अबुधत्वेन, अबुधाः (मत्काव्ये) न खलु प्रवेशिनः

वस्तुतः *अबुहह पवेसि* (*पवेसु*) रूप-रचना की दृष्टि से षष्ठी विभक्ति द्वारा संबद्ध है परंतु कारक की दृष्टि से कर्ता का अर्थ देता है। इसे षष्ठी की व्यापकता का प्रमाण समझना चाहिए।

७६. प्रत्ययों के अतिरिक्त संज्ञाओं का बहुत्व द्योतित करने के लिये रासो में *जन* या *गण* जैसे बहुलता-द्योतक शब्दों का भी विशेषणवत् प्रयोग किया गया है, जैसे

अरिजननु (३३.५)
तरायन (२०६.४)
हयगन (१८०.१)

समूह वाचक शब्दों से बहुवचन बनाने की प्रवृत्ति 'वर्ण रत्नाकर' में भी मिलती है, जैसे, *नायिका-जन* (२१ ख)। यही वजह है कि कुछ विद्वानों ने बहुवचन प्रत्यय *-न* की व्युत्पत्ति इसी *जन* से मानी है।

कारक

७७. रासो के संज्ञा शब्दों में कारक-रचना के तीन आधार दिखाई पड़ते हैं—

(१) निर्विभक्तिक शब्द-मात्र का प्रयोग सभी कारकों में ;

(२) अपभ्रंश की विभक्तियों का ध्वन्यात्मक ह्रास के साथ अथवा यथावत निर्वाह। जैसे—उ; इ, ए, एँ ऐँ; ह हि, है; न, नि, और नु।

(३) अपभ्रंश के परसर्गों का निर्वाह तथा नये परसर्गों की रचना। जैसे,

सहु, सूं, सो
वग्ग, तन, लग्ग
ते, तैं, हुति
का, की, के, कहुं, कइ, को, कूं
मज्झ, मंझ, मह, महि, मधि, इत्यादि।

अनुपात की दृष्टि से निर्विभक्तिक पदों की संख्या सबसे अधिक है;[1] और परसर्गों की संख्या सबसे कम। परन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है (§ ३१ ख), प्राकृत-पैंगलम् तथा अन्य अवहट्ट रचनाओं की अपेक्षा रासो में परसर्गों तथा उनके प्रयोग का अनुपात कहीं अधिक है। अवहट्ट की कारक-रचना से रासो की एक विशेषता और है कि विभक्ति और कारक में अव्यवस्था अधिक है जिसके कारण बहुत सी विभक्तियाँ निर्विशेष रूप से सभी कारकों में प्रयुक्त होती हैं। विकारी विभक्ति का रूप[2] (ऑब्लीक केस) का प्रादुर्भाव इसी अव्यवस्था का परिणाम है। फलस्वरूप एक वचन में—हि[3] और बहुवचन में न विभक्ति विकारी रूप में प्रायः सभी कारकों में प्रयुक्त दिखाई पड़ती है। परन्तु इन दोनों के संयोग से आधुनिक ढंग के एक विकारी रूप—ओं का निर्माण इस समय तक नहीं हुआ था। रासो में विकारी रूप—ओं कहीं नहीं मिलता।

७८. *कर्त्ता कारक* : (क) सामान्यतः इस कारक के लिए रासो में निर्विभक्तिक शब्द मात्र का प्रयोग होता है; जैसे—

जंप्यो प्रिथिराज (३३६.२)
चहुवान गउ (३०२.६)
सिर तुट्टै (१८९.१)
भुल्यो पुहवि-नरिंद (१६३.१)
विंट्यो चहुवान (२६८.१)

(क) अकारान्त प्रातिपदिकों के अतिरिक्त इकारान्त और उकारान्त प्रातिपादिक भी अपने मूल रूप में ही कर्त्ता कारक का अर्थ देते हैं; जैसे—

१. होर्नले का भी यही निष्कर्ष है कि चंद, कबीर, बिहारी लाल वगैरह की पुरानी हिंदी में विभक्ति-प्रत्यय बिल्कुल नहीं या बहुत कम इस्तेमाल किया गया है। (गौडियन ग्रैमर, पृ० २१६)

२. डा० चैटर्जी ने इसके लिए तिर्यक् शब्द का प्रयोग किया है (दे० भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, हिन्दी अनुवाद, १६५४ ई०)

३ उक्ति व्यक्ति-प्रकरण, स्टडी, ५६ [७]

अरब्बी लरै (१०६'१)

इम जंपइ चंद वरद्दिया (३०२'६)

(ग) अपभ्रंश[1] की भाँति रासो में भी कर्त्ता कारक में संज्ञा के रूप प्रायः उकारान्त दिखाई पड़ते हैं।

कहै चंदु (२३६'६)

पर्‍यो माल चंदेलु (३१७'१)

चंपिअ वद्दल वाउ (२०२'२)

रह्यो स्वामि सिर सेहरउ (३२०'६)

उकारान्त कर्त्ता कारक की व्यापकता अपभ्रंश के बाद पुरानी पश्चिमी राजस्थानी[2], पुरानी व्रजभाषा तथा मध्यप्रदेश की कुछ पूरबी बोलियों में भी दिखाई पड़ती है जिसे चैटर्जी ने पुरानी व्रजभाषा का प्रभाव माना है।[3]

कभी-कभी यह –उ विभक्ति स्वार्थिक प्रत्यय –अ < –क द्वारा प्रवर्धित प्रातिपदिक में जुड़कर स्वतंत्र स्वर के रूप में भी आता है; जैसे–

बड हथ्थहि बड गुज्जरउ जुज्झि गयउ बैकुंठ (३०३'१)

(घ) कर्त्ता कारक, बहुवचन के रूप एकवचन की ही तरह निर्विभक्तिक और उकारान्त होते हैं, परन्तु बहुवचन के उकारान्त रूप हमारे पाठ में बहुत कम मिलते हैं।

भिरहिं सूर सुनि सुनि निसान। (१०'२)

गजराज विराजहिं। (२८३'१)

विहरे जनु पावस अंभ उठे। (२०४'२)

इत्तने सोर वाजिन्न बज्ज। (२२२'२)

(ङ) बहुवचन के लिए कहीं-कहीं रासो में आधुनिक खड़ी बोली के–एकारान्त विकारी रूप भी प्रयुक्त हुए हैं; जैसे–

---

१. स्यमोरस्योत्। (हेम० ४'३३१)

२. तेसितोरी, पुरानी राजस्थानी; ५७ (१)

३. उक्ति व्यक्ति०, स्टडी, ५६ [२]

वाजने वीर रा पंग बाजे । (२५७·४)

(वीर पंग राज के बाज़ने अर्थात् बाजे बजे)

अनंदने निसाचरे । (२४२·२)

(निशाचर आनन्दित हुए)

७६, *कर्म कारक* : (क) कर्त्ता की तरह कर्म कारक में भी सामान्यतः शब्द का मूल रूप अथवा –उ विभक्ति व्यवहार में लाई जाती है । कर्म की –उ विभक्ति को कर्त्ता के रूप का ही विस्तार समझना चाहिए ।

बज्जपति बज्ज गहि । (१४८·२)

अमिय कलस लियो । (२११·२)

इह अप्पउं ढिल्लिय तखत । (१९८·१)

अंगना अंग चंदनु लावहिं । (१९२·२)

दिव दिवान गो देवरउ । (३२०·५)

(देव-देवता देवल को गए)

(ख) बहुवचन में कर्म कारक के लिए—हि विभक्ति का प्रयोग किया गया है । लिपि-शैली की अनियमितता के कारण यह कहना कठिन है कि यह –हि सानुनासिक था या निरनुनासिक । हमारी प्रति में यह निरनुनासिक ही है ।

कीर चुनहि मुकताफलहि । (९८·४)

कर्म कारक बहुवचन में कहीं कहीं –इ विभक्ति भी मिलती है, जो संभवतः –हि का ही प्राणत्व-रहित रूप है ।

त्रिप जोइ फवज्जइ वंट लियं (२११·२)

(ग) कर्म-कारक, बहुवचन की सर्वाधिक प्रचलित विभक्ति –न है जिस पर वचन-वाले प्रकरण में विचार किया जा चुका है । मूलतः यह विभक्ति संस्कृत के षष्ठी बहुवचन—आनाम् का घृष्ट रूप है ।

मुक्के मीननु मुत्ति (१६३·२)
सत्थियनु (१५२·१)
अन्य रूप :
पुरिखन (१२०·३), राइन (१२५·१)
दरबलनि (१६५·१) सुगंधनि (११३·२)

८०. करण कारक—(क) निर्विभक्तिक रूप :

अप्पिग हत्थ तंबोल (१४७·१)

(क) कारण, एक वचन की अपनी विभक्ति –इ तथा –ए है जिसे अपभ्रंश तृतीया का अवशेष समझना चाहिए ।

कनवज दिख्खन कारणइ (१·२)
मनो राम रावन्न हत्थे विलग्गी । (१२७·४)

(ग) बहुवचन में अन्य कारकों की तरह करण में भी –न, –नि तथा –नु का प्रयोग होता है और कभी-कभी—एँ का भी ।

नृप नयन ति सँजोग । (३४१·२)
सुगंधनि (११३·२)
असु लाजनु राजनु समझावहि । (१६६·२)
सज्धि आवज्झ हत्थैं करेरी । (२२६·४)

८१. अपादान कारक—(क) निर्विभक्तिक :

टुट्टियं जानु आकास तारा । (   )
(मानो आकाश से तारा टूटा)
धर सिर छंडि फनिंद । (१८४ अ)
(फणीन्द्र ने धरा को सिर से छोड़ दिया ।)

(ख) सविभक्तिक : सभी कारकों के लिए प्रयुक्त होने वाली *हि* विभक्ति अपादान में भी व्यवहृत होती है ।

हेमहि कड्ढहि तार । (७६'२)

हेम से तार काढ़ता हैं ।

८२. *संबंध कारक*— (क) निर्विभक्तिक : संबंध कारक के निर्विभक्तिक रूपों को विविक्त करने के विषय में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि ऐसे स्थलों पर प्रायः तत्पुरुष समास की संभावना दिखाई पड़ती है ।

दिल्लिय तखत (१९८'३)

हय पुट्टिय (१९९'३)

रवि रत्थ (२१४'२)

गवरि कंत (२१३'३)

(ख) सविभक्तिक : अपभ्रंश की *ह* विभक्ति का प्रयोग[1] रासो में तत्कालीन अन्य रचनाओं से कहीं अधिक मिलता है । कभी कभी इसका रूप एकारान्त भी हो जाता है ।

तडित्तह ओप (७७'४)

बिंबह फल (७८'४)

कनवजहे (३'१)

(ग) संबंध बहुवचन की अपनी विभक्ति *–न* या *–नि* है जो विकारी रूप में अन्य कारकों के लिए भी प्रयुक्त होती है ।

मद गंध गयंदनि सुक्कि गयो (२८८'४)

पंखिण सद्द भयं (२८८'३)

८३. *अधिकरण कारक*—(क) निर्विभक्तिक :

परत देखि चालुक्क धर (३२१'१)

दिखिय त्रिपति तन चोट (३२१'२)

सपत्तिय त्रिपति रन (३२१'२)

जिनके मुख मुच्छ (२०७'४)

---

१. होर्नेले, गौडियन ग्रैमर, प० ६६६

(ख) सविभक्तिक : एक वचन में अपभ्रंश की इ, ए विभक्तियों का निर्वाह किया गया है।

करि कंकन (७६'३), एकइ समइ (११३'२), दिसि (१२४'२)
सिरि मंडि (१३१'१), सरग्गि (१३२'३), प्राति १४२'१)
गवक्खइ अक्खी (१९१'१) तथा आसने सूर वड्ढे (९८'१)
कंधे धरंता (२१६'२)

-ए कहीं कहीं -ऐ भी हो गया है—

सीसै धरो जास गंगा (२२४'४)

(ग) अपभ्रंश तृतीया-सप्तमी, बहुवचन की विभक्ति *-हिं*[1] का प्रयोग रासो में भी प्राप्त होता है किन्तु यहाँ उसके निरनुनासिक रूप *-हि* का प्रयोग बहुवचन के साथ ही एकवचन में भी हुआ है।

सरद्दहि (७६'४)
कवियहि संपत्ते (८७'१)
चहुं दिसहि (११०'५)
सिंघासनहि (१२६')

(घ) संबंध कारक की *-ह* विभक्ति का प्रयोग अधिकरण में भी हुआ है।

अंगह चंदन लावहि (१९२'१)
भयउ निसानह घाउ (२०२'१)
ज्यों भइव रवि असमनह (२०२'२ ५)

८४. *भावे षष्ठी :* संबंध और अधिकरण की *-ह* विभक्ति का प्रयोग रासो में *भावे* भी हुआ है, जैसे

खग्गह सीसु हनंत खग्ग खप्पुरिव खरक्खर (३०४'५)
(शीर्ष पर खड्ग के हनते ही खड्ग खर-खर करता हुआ धस गया।)

---

१. भिस्सुपोहिं। (हेम० ४'३४७)

धरनह् कन्हह परत ही प्रगट पंगु त्रिपु हंक्क (३०१'१)

(धरणी पर कन्ह के पड़ते ही नृप ने पंगु को प्रकट रूप से ललकारा)

यहाँ *खग्गह* और *कन्हह* की *-ह* विभक्ति भावे षष्ठी (Genetive absolute) की तरह प्रयुक्त हुई है ।

परसर्ग

८५. प्राचीन विभक्तियों और विकारी रूपों का प्रयोग जहाँ रासो की भाषा की प्राचीनता सूचित करता है, वहाँ परसर्गों के बहुल प्रयोग उसकी भाषा की आधुनिकता प्रमाणित करते हैं । पुरानी ब्रज के कर्तृ-करण परसर्ग नै *(ने)* को छोड़कर रासो में प्रायः सभी परसर्ग मिलते हैं । ने का प्रयोग रासो के वृहत् रूपान्तर में भी खोजे नहीं मिला । रासो के प्रथम वैयाकरण और सम्पादक बीम्स को भी बड़ी मुश्किल से तीसरे समय में ने के प्रयोग वाली निम्नलिखित पंक्तियाँ मिलीं—

बालप्पन पृथ्वीराज नें
निसि सुपनंतर चिह्न ।
लै जुग्गिनिपुरह
तिलक मथ्थ करि दीन्ह ॥
(३।३।१-४)

परंतु उन्हें लगा कि यहाँ ने का प्रयोग कर्तृ-करण की अपेक्षा सम्प्रदान में हुआ है ।[१] सम्प्रदान अर्थ में नें का प्रयोग पश्चिमी राजस्थानी की विशेषता है और इस एक प्रयोग के आधार पर संपूर्ण रासो की भाषा में कोई निर्णय देना जल्दबाजी होगी । परंतु इतना निश्चित हैं कि रासो में ने का अभाव है और यह अभाव भी एक महत्वपूर्ण तथ्य हैं । इससे यह प्रमाणित होता है कि रासो की भाषा उस समय की है जब ब्रजभाषा में ने, नें अथवा नैं का विकास नहीं हुआ था और इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि ने का विकास पश्चिमी बोलियों में बहुत बाद में हुआ । यह ध्यान देने योग्य है कि १४ वीं सदी के 'प्राकृत पैंगलम्' में भी ने अप्रयुक्त है ।

[१] स्टडीज़ इन दि ग्रैमर ऑव चंद वरदाई, जे० ए० एस० बी०, १८७३ ई० ।

बीम्स[१] और होर्नले[२] ने पश्चिमी हिंदी के ने परसर्ग को मारवाड़ी के जिस सम्प्रदान-नैं या ने से संबद्ध किया है, वह स्वयं परवर्ती विकास है। तेसीतरी ने 'प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी' में कर्म-सम्प्रदान-परसर्ग नइँ के उदाहरण जिन रचनाओं से दिये हैं वे स्वयं उन्हीं के अनुसार १५०० ई० के आस पास की हैं।

परंतु पश्चिमी हिंदी के ने परसर्ग के लिए यदि प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी (मारवाड़ी) तक ही जाना है तो कर्म-सम्प्रदान नइँ की अपेक्षा स्वयं कर्तृ-करण में प्रयुक्त नइँ के निकट जाना अधिक युक्तिसंगत होगा। तेसितोरी ने कर्तृ करण नइँ के भी कुछ उदाहरण दिए हैं जैसे—

आदीश्वर-नइँ दीक्षा लीधी (आदि च०)

= आदीश्वर ने दीक्षा ली।

देवताए भगवन्त–नइँ कीधउ ते दीखों (आदि च०)

देवताओं ने वह देखा (जो) भगवन्त ने किया।

परंतु ने के कर्तरि प्रयोग वाली यह रचना भी १६ वीं सदी की है।

तात्पर्य यह है कि रासो में कर्तृ-करण परसर्ग ने का अभाव उसकी प्राचीनता का पक्का प्रमाण है।

८६. की तरह रासो में एक ही परसर्ग अनेक कारकों के लिए प्रयुक्त होता है। एक कारक के लिये विशेष रूप से आने के साथ ही सामान्य रूप से वह अन्य कारकों में भी आता है। कारकों के क्रम से रासो में प्राप्त परसर्गों का वर्गीकरण निम्नलिखित है—

कर्ता कारक : ×

कर्म कारक : ×

करण कारक : सौं, सूँ, सहुं, (सहु); तं

सम्प्रदान कारक : तनु, तन; लागि

---

१. कम्पैरेटिव ग्रैमर, भाग ३, पृ० २७०

२. गौडियन ग्रैमर, पृ० २१६:

अपादान कारक : ते, तैं; हुँति

सम्बन्ध कारक : का, की, के ; को कउ, कहु, कहुं, कूं

अधिकरण कारक : मज्झहि, मज्झे; मज्झि; मज्झ, माझी, मज्झर; मंझ; मधि; महं, महिं

८७. *करण-परसर्ग* : (क) *सहु* < अपभ्रंश *सहुँ* (हेम ४.४१९,५) < सं० *साकम्* (पिशेल § २०६)

धातु सहु (७०.२)

(ख) *सों* < अप० सहुं

इक्क लक्ख सों भिरे (२६६.४)

इह कहि सखिन सों (१६७.१)

(ग) *सूँ* :

लक्ख सूं लर्‌यो अकल्लो (२६६.०२)

राज सूं कहहि (१४६.६)

मग्गन सूं पान (११२.२)

जहाँ तक रासो के *सूं* का संबंध है, इसे मारवाड़ी प्रभाव कहा जा सकता है। आधुनिक मारवाड़ी के साथ पुरानी राजस्थानी में भी *सूं* के प्रयोग मिलते हैं[1]; जैसे—

कुमार सूं (प० ३५), *किरात सूं युद्ध करइ* (आदिच०)

जम सूं जुरने (२१०.४)

किन्तु रासो में प्रधानता *सूं* की अपेक्षा *सों* परसर्ग की ही है और जहाँ *सूं* है, वहाँ उसके समानान्तर दूसरी प्रतियों में *सों* पाठ भी मिलता है जो ब्रजभाषा की प्रकृति के सर्वथा अनुरूप है।

(घ) *ते* : इसकी व्युत्पत्ति विवादास्पद है। चैटर्जी इसे संस्कृत *अन्तः* से संबद्ध

१, पुरानी राजस्थानी, पृ० ७२

करते हैं[1]। केलॉग इसका संबंध संस्कृत प्रत्यय—*तः* से जोड़ते हैं और तेसितोरी—*होन्तउ* (अप०) से।[2] मुझे तेसितोरी की व्युपत्ति ऐतिहासिक और युक्तिसंगत प्रतीत होती है। मूलतः यह अपादान कारक का परसर्ग है; परंतु करण के लिए भी इसका विस्तार हो गया। उसी तरह जैसे आधुनिक खड़ी बोली में मूलतः करणः परसर्ग *से* का विस्तार अपादान के लिए भी हो गया है। जैसा कि केलॉग ने *ते* का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा है कि यह अंग्रेजीके 'बाइ' शब्द का समानार्थक है न कि 'विद्' का[3], रासो में भी *सों* और *ते* के प्रयोग में अर्थ-संबंधी अंतर किया गया है। करण कारक में *ते* के प्रयोग के दो उदाहरण रासो से प्रस्तुत हैं—

पुण्य ते राजकाज (२८·१)

= पुण्य के द्वारा राजकाज,

पानि ते मेरु ढिल्ले (२३४·४)

= पाणि के द्वारा मेरु ढीला हो गया

सों का प्रयोग सामान्यतः 'साथ' के अर्थ में हुआ है जब कि *ते* का प्रयोग 'द्वारा' अथवा 'साधन' के अर्थ में। इस प्रकार केलॉग ने *ते* का जो अर्थ-विवेक किया है, वह प्रस्तुत प्रसंग से भिन्न होते हुए भी *सों* और *ते* के अर्थ-भेद पर विचार करने के लिए संकेत सूत्र प्रस्तुत करता है।

लिपि-शैली की अनिश्चितता के कारण यह स्पष्ट नहीं है कि *ते* सानुनासिक था अथवा निरनुनासिक।

८८ *सम्प्रदान परसर्ग*—(क) *तन, तनु* < अप० *तण*[4]: रासो में इसका प्रयोग *ओर* के अर्थ में हुआ है।

गुनियन तन चाह्यो (८६·१)

पट्टनु तनु देख (३०६·१)

१. उक्ति व्यक्ति० स्टडी § ६३

२. हिंदी ग्रैमर § १७१

३. पुरानी राजस्थानी § ७२ (२)

४. तादर्थ्ये केहिं–तेहिं–रेसिं तणेणाः। (हेम० ४·४२५)

(ख) *लगि* < **लग्गि* < *लग्ने* : इस परसर्ग का प्रयोग अपभ्रंश में नहीं था। तेसितोरी ने 'पुरानी पश्चिमी राजस्थानी' में अपादान के अन्तर्गत *लगइ* और *लगी* दो परसर्गों का उल्लेख किया है[1] जो रूप की दृष्टि से इससे साम्य रखते हुए भी अर्थ की दृष्टि से भिन्न है। वस्तुतः सम्प्रदान के अर्थ में *लगि* अथवा *लागि* का प्रयोग पुरानी पश्चिमी बोलियों में नहीं मिलता, बल्कि पूर्वी बोलियों में मिलता है। यदि *लिए* का संबंध *लगि* से ही है तो खड़ी बोली में इसे पूर्वी-प्रभाव के रूप में स्वीकार करना चाहिए। इस प्रकार रासो में *लगि* के प्रयोग को पूर्वी प्रभाव कहा जा सकता है :—

जीव लगि सत्त न छंडउं। (३०२·३)

रासो में अन्यत्र कई स्थानों पर *लगि* का प्रयोग *तक* के अर्थ में हुआ है जिस अर्थ में आगे चलकर इसीसे विकसित *लौं* का प्रयोग हुआ।

८६ *अपादान परसर्ग*—(क) *हुँति* < अप० (हेम० ४·३५५, ३७३) *होन्तउ* < सं० * भवन्तक :

कविराज दिल्ली हुँति आयो (८३·४)

सभा वाली प्रति में *हुँति* के स्थान पर *तैं* पाठ है। इससे *हुँति* और *तैं* के संबंध—संभवतः पौर्वापर्य संबंध—पर प्रकाश पड़ता है। *हुँति* का प्रयोग कीर्तिलता, पद्मावत, रामचरित मानस आदि अन्य रचनाओं में भी मिलता है। तेसितोरी ने पुरानी राजस्थानी में भी इसके प्रचलन के उदाहरण दिए हैं (७२^{3}११)

(ख) *ते* : रासो में अपादान के लिए *हुँत* की अपेक्षा *ते* का ही प्रयोग अधिक हुआ है।

देवता मग्ग ते स्वर्ग भुल्ले। (१७·४)

दस कोस कनवज्ज ते (२७०·५)

१. पुरानी राजस्थानी, §७२ (६)

परवत्त ते ढाहे (६९·३)

ताप ते ध्यान लग्गे (१८.३)

अंतिम उदाहरण में अधिकरण का सन्देह होता है; और *ताप* के स्थान पर *तप* पाठ सही मालूम होता है।

६० *सम्बन्ध परसर्ग* : विशेष्य-निघ्न होने के कारण संबंध-परसर्ग के रूप संबद्ध संज्ञा के लिंग-वचन के अनुसार विविध मिलते हैं।

(क) आधुनिक खड़ी बोली के समान रूप—*का, की, के*

तजि जीवन का मोहि (१८७·२)

भय की दिसि (२०९·१)

कीरती पंग की (२७७·१)

चहुवान के सार (३०१·२)

नितम्ब स्याम के (११६·२)

सयन्न काम के (,,)

कोट के मुनारे (२५५·४)

(ख) को : रूप की दृष्टि से यह खड़ी बोली के कर्म-सम्प्रदान से साम्य रखते हुए भी अर्थ की दृष्टि से व्रजभाषा संबंध कारक का परसर्ग है। आरंभिक व्रजभाषा में आधुनिक *कौ* का विकास संभवतः नहीं हुआ था; इसीलिये मिर्जा खाँ ने संबंध-परसर्ग के नाम पर केवल *को* का उल्लेख किया है।[1] सामान्यतः इसे कन्नौजी और जयपुरिया का रूप कहा जाता है।

कवि को मन रत्तउ (९०·३)

आदरु किय न्रिप तास को (१०५·१)

(ग) *कउ* – संभवतः यह व्रजभाषा *कौ* का पूर्व रूप है।

सुनि रव प्रिय प्रिथिराज कउ (१६७·३७)

सभा की प्रति में *कउ* के स्थान पर *का* पाठ मिलता है।

---

१. व्रजभाखा ग्रैमर, पृ० ४२

(घ) **कहुं**, *कहु* – वस्तुतः यह कर्म-सम्प्रदान परसर्ग है परंतु रासो के लघुतम कनवज्ज समय में हमें इसके सभी प्रयोग संबंध अथवा भावे षष्ठी के मिले।

कनवज्ज कहुं (१५२·२)

प्रथिराज कहु निसान (२०२·१)

परत धरनि हरसिंघ कहु (३००·१)

सभा की प्रति में प्रथम **कहुं** के स्थान पर *कों*, द्वितीय **कहु** के स्थान पर **को** किन्तु अंतिम *कहु* के स्थान पर **कहुं** पाठ मिलता है। लिपि-शैली की अनिश्चितता के कारण यह कहना कठिन है कि *कहुं* सानुनासिक था अथवा निरनुनासिक। बहुत संभव है, यह सानुनासिक रहा होगा। सामान्यतः इसे अवधी, भोजपुरिया आदि पूर्वी बोलियों की विशेषता के अंतर्गत रखा जाता है। तुलसी, जायसी, कबीर में इसके उदाहरण बहुत हैं।

(ङ) **कूँ** : ब्रजभाषा में *कौं* के साथ *कू* रूप भी मिलता है हमारी सीमा में इसका केवल एक उदाहरण मिला है और उसके लिए भी सभा की प्रति में *कौं* पाठान्तर है।

दल प्रिथिराज कूं (३०५·२)

(च) **कै** : वस्तुतः यह पुरानी बैसवाड़ी का परसर्ग है और स्त्रीलिंग में प्रयुक्त होता है। तुलसी ने लिखा है, *'खल कै प्रीति यथा थिर नाहीं'* (किष्किंधा कांड)। रासो की सीमा में जो दो उदाहरण मिले हैं दोनों ही पुंल्लिगवत् व्यवहृत हुए हैं—

रोस कै दरिया हिलोरे (१०३·२)

रिपु कै सबद (२०५·१)

(छ) *तणी, तण* : संबंध के अर्थ में इसका प्रयोग पुरानी राजस्थानी की विशेषता है; जैसे 'ढोला मारू-रा दूहा' में

राणि राउ पिंगल-तणी (४)

रासो में इसके केवल दो उदाहरण मिले हैं—

रेण सरद तनी = शरद की रजनी (२८४·४)

वर बंबर वैरख छत्र तणी = छत्र की (२८४·१)

६१. *अधिकरण-परसर्ग* – (क) इसके विषय में महत्त्वपूर्ण तथ्य यही है कि पुरानी ब्रज के घिसे रूप – *मैं* और *में* रासो में दृष्टिगोचर नहीं हुए। रासो में इस परसर्ग का अधिक से अधिक घिसा रूप *मह* है ; इसके अतिरिक्त अधिकांश रूप *मज्झ* वाले पुराने ही हैं। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं—

झरंत सु गंग मह	(१६३·४)
मन महि अनुरत्तिय	(१६३·४)
सावंत घन मधि	(१२६·१)
हत्थ माझी	(३२५·४)
पट्टन मंझ	(७१·१)
गन मज्झ	(२३४·२)
घन मज्झि तडित्त	(७७·४)
अच्छरी अच्छ मज्झे	(२२५·२)
ससि मज्झहि	(७७·२)

(ख) इसी प्रकार ब्रजभाषा के *पै* और *पर* रूप रासो में नहीं मिलते। इनके स्थान पर रासो में पुराना रूप *उप्पर* अथवा *उप्परि* ही प्रयुक्त है।

रेनु परए सिरि उप्परहिं (१८०·१)

३. संख्या वाचक विशेषण

६२. *पूर्ण संख्या वाचक*

१ :	इक	(३·६, ६·२, १०२·१, ३१६·१)
	इक्क	(६·२, १००·४, १७७·२, २७६·४ २६६·४ ३३७·२)
	इक्कु	(३·६, १६०·४)
	एकु	(३२०·२)
	एग	(१८६·१)

२	:	दु	(७८·३)
		दुइ	(३१६·१)
३	:	तिन्नि	(८२·२)
		तीन	(८६·२)
		त्रिय	(७·१)
		त्रीय	(७·१)
४	:	चार	(२७०·३)
		चारि	(६०·१)
		च्यारि	(२६६·६)
५	:	पंच	(२७६·३, ३२५·७, ३१७·६)
६	:	खट	(१४२·२, १४४·१)
		छह्	(११०·१, ११३·१)
७	:	सात	(१४६·२, १४४·१)
८	:	आठ	(३०४·६)
१०	:	दस	(१४४·१, २७०·५, २८२·२, ३२०·२)
		दह्	(७६·३, १६३·२ ३१३·२)
११	:	ग्यारह्	(१·१)
१२	:	बारह्	(३३६·३)
		द्वादस	(३३७·४)
१३	:	तेरह्	(३१८·६)
१५	:	दस पंचति	(२८२·२)
१६	:	सोड़स	(१६·१)
		सोलह्	(३२१·६, ३२२·२)
५०	:	पंचास	(१०८·२)
५१	:	इक्कावनइ	(१·१)
६४	:	चउसट्ठि	(३१३·५)

८०	:	असिय	(२३०'२)
		असी	(२७४'६)
१००	:	सइ	(१'१, २६२'१)
		सै	(२७७'४)
		सय	(२०१'१)
		सौ	(२७६.३)
		सत	(२०१, ६६'२, १५१'२)
१०००	:	सहस	(१२५'१, १४२'२, २६८'१)
		सहस्स	(२६८'२)
		सहस्र	(९६'२)
		हज्जार	(२५४'१)

पूर्णाङ्क संख्या बोधक अन्य शब्द :

लक्ख	(८२'२, १३८'३, २७४'६ २९९'२)
लाख	(२३'२)
लाखु	(६७'१)
कोटि	(५८'२, ६१'२, १६६,२, ३२१'१)

(ख) रासो में प्राप्त होने वाले पूर्णाङ्क संख्या बोधक शब्दों में कुछ के रूप विचारणीय हैं *सात*, *आठ*, *ग्यारह*, *बारह* और *तेरह* के वैकल्पिक रूप नहीं मिलते। इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इनके आधुनिक रूप तब तक स्थिर हो चुके थे। *बीस* तक की अन्य संख्याओं में भी *एक*, *तीन*, *चार* *दस* और *सोलह* के आधुनिक रूप विकल्प से प्रचलित थे। इनके अतिरिक्त *सौ* और *लाख* भी आधुनिक रूप में प्रयुक्त होते थे। इनके साथ-साथ प्राकृत

अपभ्रंश के कुछ पुराने अवशेष भी रह गए थे। जैसे *इक्क*, *एग*[1], *दह*[2] *सइ* और *सहस्स* ।

कुछ संख्याओं के रूप अभी विकास की आधुनिक अवस्था तक नहीं पहुंच सके हैं, जैसे *छह* । षष् का अन्त्य *ष्* क्षयान्त प्रवृत्ति के कारण *ह* तो हो गया किन्तु आधुनिक भाषाओं में मिलने वाले रूप तक पहुंचने के लिए *ह* का पूर्णतः लोप नहीं हो सका था।

अन्य रूपों में विशेष विचारणीय *दुइ*, *तिन्नि* और *च्यारि* हैं। व्रज में जहाँ *दोउ* रूप मिलता है, वहाँ रासो में *दुइ* है जो कि पूर्वी भाषाओं की प्रकृति के अनुसार है।[3] 'उक्ति व्यक्ति प्रकरण' से भी प्रमाणित होता है कि पुरानी कोसली में *दुइ* रूप ही होता था (१५|२१)। इस प्रकार या तो रासो के *दुइ* को पूर्वी प्रभाव माना जाय या फिर स्वराघात के कारण आद्य *ओ* की दुर्बलता का परिणाम समझा जाय।

व्रज भाषा की भाँति रासो में भी *चारि* रूप मिलता है परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि *च* में *य* संयुक्त करके उसके तालव्य संघर्षी उच्चारण की ओर विशेष झुकाव था।

तीन के अतिरिक्त *तिन्नि* रूप की व्याख्या के लिए या तो छंदोऽनुरोध की युक्ति दी जाय या फिर उसे पंजाबी प्रभाव माना जाय क्योंकि पंजाबी में *तिन* रूप होता है।[4]

पूर्ण संख्यावचक शब्दों में फारसी *हजार* का *हज्जार* रूप में ग्रहण ध्यान देने योग्य है।

---

१. एगो (हेम० १.१७६)

२. वररुचि : प्राकृत-प्रकाश, २.४४; हेमचन्द्र १.२१९; प्रबन्ध चिन्तामणि—गणिया लब्भइ दीहड़ा के दह अहवा अट्ठ।

३. होर्नले, गौडियन ग्रैमर, पृ० २५४

४. होर्नले, पृ० २५४

९३. *अपूर्ण संख्यावाचक--*

अड्ढ	(२५१·१)
अध	(३३३·२)
अद्ध	(३८·१, २०४·३, ३७०·१)

रासो में प्राप्त होने वाले रूप प्राकृत अपभ्रंश के अवशेष प्रतीत होते हैं। व्यंजन–द्वित्व का सरलीकरण करने के बाद भी *अध* आधुनिक ब्रजभाषा का रूप प्राप्त नहीं कर सका था।

९४. *क्रम संख्यावाचक*

पहिलइ	(२६९·६)
पहिली	(३१५·१)
पहिल्ले	(२९८·१)
दुतीय	(३१८·४)
विय	(३२१·१)
वीय	(३८·२, ५०·४)
तिअ	(३३७·१)
तीज	(१·१)

इनमें से *पहिली* को छोड़कर अन्य सभी रूप प्राचीन अवशेष हैं। रासो में *सर* प्रत्यय वाले *दूसरे* और *तीसरे* रूपों का प्रयोग नहीं मिलता।

९५. *समुदाय वाचक—*

दुहुँ	(१०१·१, २०४·१)	= दोनों
तिहुँ	(२१२·६)	= तीनों
चहुँ	(११०·५)	= चारों

९६. *संख्यावाचक विशेषणों से बनने वाले समास—*

दुसेर :

समसेर दुसेर समाहनि से। (२०६·३

तिहिद्दिया :

बंध्यो तिन्न तिहिद्दिया। (२६६'५)

४. सर्वनाम

९७. *उत्तम पुरुष सर्वनाम :* रासो में निम्नलिखित रूप मिलते हैं—

मूल रूप : **हूँ, मैं, मो।**

विकारी रूप : **मोहि, मो, हम।**

यहाँ दो रूपों का अभाव ध्यान देने योग्य है— *हौं* और *हमारो*। ये दोनों ही रूप प्राचीन ब्रजभाषा में बहुत प्रचलित थे और रासो के बृहत् रूपान्तर में भी अन्यत्र मिलते हैं। बीम्स ने इन रूपों का उल्लेख किया है। किन्तु हमारे पाठ की सीमा में ये दृष्टिगोचर नहीं हुए।

(१) *हूं :*

अहो कंद वरदाय कहूँ हूँ। (९१'३)

कनवज्जह दिक्खन आय हूँ। (९१'४)

प्राचीन ब्रजभाषा की कुछ रचनाओं में **हूं** मिलता है।[1] परंतु इसका विशेष प्रचलन पुरानी और संभवतः आधुनिक मारवाड़ी में विशेष है।[2]

(२) *मैं :*

मैं व गोरि साहिब्ब साहि सरवर साहंतो। (२५७'५)

मैं वस्तुतः तृतीया एक वचन का रूप है और इसका प्रयोग भूतकालिक कृदंत के कर्ता की भाँति होता है, लेकिन यहाँ यह वर्तमान कृदंत के साथ प्रयुक्त हुआ है।

(३) *मो :*

मो रवि मंडल भेदि जीव लगि सत्त न छंडउं। (३०२'३)

१. डा० धीरेन्द्र वर्मा, ब्रजभाषा, § १५६

२. तेस्सितोरी, पुरानी राजस्थानी § ८३

मो वस्तुतः विकारी रूप है, परंतु यहाँ इसका प्रयोग मूल रूप कर्ता की भाँति हुआ है—*मो* छंडउं।

(४) *मो* (विकारी रूप) :

मो सरण मरण हिंदू तुरक (२५.७.५) = मेरी
मो कंपहि सुरलोक (१६८.१) = मुझसे
ते जम्म अंत मो लहे (११६.२) = मुझे

उपर्युक्त तीन उदाहरणों में *मो* का प्रयोग क्रमशः संबंध, अपादान और कर्म-सम्प्रदान में हुआ है। इससे स्पष्ट है कि विकारी *मो* का प्रयोग सभी कारकों में होता था।

(५) *मोहि* :

भय मोहि दिखायो (२७५.१) = मुझे
है इत मोहि (१६६.४) = मुझे

मोहि मुख्यतः कर्म कारक एक वचन का रूप है।

(६) *हम* :

हम बोल रहै (२७४.५) = हमारा
हम तुम्ह दुस्सह मिलन (३०२.२) = हमारा
हम सउ भ्रित सुंदरी एग (१८६.१) = हमारे ?

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि रासो में *हम* का प्रयोग प्रायः आदरार्थ एक वचन में ही हुआ है।

९८. *मध्यम पुरुष सर्वनाम* : प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं—

मूल रूप : तुम
विकारी रूप : तुम्ह, तुम्हइ, तैं, तुज्झ, तोहि

(१) *तुम* :

मिल्यो तुम आइ (१८४.२)

तुम गुज्जर भट भीम (२७५·३)
तिहि सरणागत तुम करो (२७५·५)

इसका प्रयोग कर्त्ता कारक, एक वचन के रूप में हुआ है ।

(२) तुम्ह :

इह तुम्ह मग्ग	(१४·१)	=	तुम्हारा
हम तुम्ह दुस्सह मिलन	(३०२·२)	=	तुम्हारा
तुम्ह सत्थहि सामंत कुमार	(१६६·२)	=	तुम्हारे

तुम्ह का प्रयोग सम्बन्ध कारक, एकवचन में मिलता है ।

(३) तुम्हइ :

रवि तुम्हइ समुहउ उवइ (१४·१)

यहाँ तुम्ह-इ का -इ या तो निश्चयार्थक -*हि* का ही एक रूप है, या फिर इसका सम्बन्ध अपभ्रंश तुम्हइं से है ।

(४) तैं :

तैं रक्खे हिंदुवाण	(२७७·१	=	तैंने, तुमने
तैं रक्खे जालोर	(२७७·२)		
तैं रक्खे पंगुलिय	(२७७·३)		
तैं रक्खे रिणथंभु	(२७७·४)		

तैं का सम्बन्ध अपभ्रंश तइं[1] से है जो मइं की भाँति तृतीया एकवचन का रूप है ।

(५) तुज्झ :

तहि गिन्यो तुज्झ गनि (१·५·४) = तुझे

यह कर्म-सम्प्रदान, एकवचन का विकारी रूप है । ब्रजभाषा में इसका प्रयोग नहीं मिलता । वस्तुतः यह खड़ी बोली का रूप है ।

१. टा-ड्यमा पइ तइ (हेम० ४·३७०)

(६) *तोहि* :

नहि रक्खूं कवि तोहि (१२३·१)
कल्लि समप्पूं तोहि (१२३·२)

यह कर्म-सम्प्रदान एकवचन का रूप है और प्राचीन ब्रजभाषा की अनेक रचनाओं में प्रयुक्त हुआ है।

यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि *मेरो* और *हमारो* की तरह *तेरो* और *तुम्हारो* तथा *तिहारो* रूप अप्राप्त हैं।

९९. *दूरवर्ती निश्चयवाचक* : अपभ्रंशोत्तर काल से ही दूरवर्ती निश्चय वाचक सर्वनाम के रूपों का प्रयोग अन्य पुरुष सर्वनाम के लिए भी होने लगा था। यह प्रवृत्ति ब्रजभाषा की अन्य रचनाओं की तरह रासो में भी पाई जाती है। हमारे पाठ में केवल *वह* के ही उदाहरण प्राप्त हुए हैं, बहुवचन *वे (वै)* तथा विकारी रूप *वा* के उदाहरण अप्राप्त हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ये रूप परवर्ती विकास हैं।

(१) *वह* :

वह रवि रथ लै जुत्तयो (३०९·६)
वह नर निसंक (३०९·५)
वह रुंडमाल हार (३०९·६)

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित दो स्थलों पर *उह* का प्रयोग हुआ है जो संभवतः स्थान वाचक क्रिया विशेषण अव्यय *वहाँ* का अर्थ देता है।

उह हने गयँदह (३०७·३) = वहाँ, उधर
उह मारइ इहु धाइ (३०९·४)

इसके विकारी रूप *उस* (५४·२) का भी केवल एक उदाहरण प्राप्त हुआ है, जो संदेहास्पद है।

१०० : *निकटवर्ती निश्चयवाचक* : रासो में निम्नलिखित रूप प्राप्त होते हैं :—

एकवचन : इह, इहु, यह, येह
बहुवचन : इनि

यह (५७·२) और येह (६२·४) के प्रयोग संदेहास्पद हैं।

(१) इह, इहु :

इह तुम्ह मग्ग समुज्झ	(२३·१)	= यह
इनिहारि इह	(१०९·२)	
इह न सन्थि प्रिथिराज	(१२२·१)	
इह जु इंदुजन	(१३५·२)	
इह कहि सिर धुनि	(१९५·१)	
इह सुनिय लीज	(३१८·२)	
इहु प्रिथिराज नरिंद	(१६६·२)	
इहु पिक्खिउ	(३०७·२)	

(२) इनि :

इनि छिनि	(१६९·३)
वान रक्खहि इनि वारह	(३३६·३)

१०१. *संबंध वाचक* : रासो में प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं :—

संबंध वाचक

एक बचन : *जु, जो, जासु, जिहि,*
एक बचन : *जिन, जिने,*

(१) जु, *जो* :

धरणि रक्खे जु भुअंगह	(२७५·२)
वधू रक्खै जु अप्प कुल	(२८५·३)
जहु रक्खै जो हेम	(२७५·४)
परथो साह जो सूर सारंग गाजी	(३२५·२)

(२) *जास, जासु* : जिसके

सीसै धरो जास गंगा (२२४.४)
राम गोइंद जासु वर (२६९.१)
पलौ नागवर जासु धर (२६९.२)

(३) *जिने* : जिन्होंने

जिने हंकिया पंगुरा (३२२.४)
जिने पारियै पंग खंधार सारो (३२४.४)
जिने नंखिया नैन गयदंत नाना (३२५.२)

(४) *जिन* :

जिनके मुख मुच्छ ति मुंछरिया (२०७.४)

१०२. *नित्य संबंधी* : प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं :—

एक वचन : *सो, तासु, तिहि*
बहु वचन : *ति, ते, तिन, तिनै, तिके,*

(१) *सो* :

सो कविराज दिल्ली हुँति आयो (८३.४)
लिए साथ रजपूत सो (३.६)

दूसरे उदाहरण में *सो* का अर्थ संख्यावाचक *सौ* भी हो सकता है।

(२) *तासु* :

तासु पुत्ति जम्मु छोड़ि ढिल्लिनाथ आचरे (१७३.४)
तासु गेरव मैमंतो (३७५.३)

(३) *तिहि* :

तिहि सरणागत तुम करो (२७५.५)
भयो परत तिहि सद्द (३११.४)
तिहि सद्द सीस संकर धुन्यो (३३३.५)
तिहि उप्परि संजोग नग (३४०.२)

(४) *ति, ते* :

ति अच्छरी (१७३·१)
ते नैन दीसं (४९·१)

(५) *तिन, तिनै* :

राजन तिन सह प्रिय प्रमद (३४१·१)
तिनै देखते रूप संसार भग्गै (१८·४)
ते सज्जए सूर सब्बे तुखारा (१५४·४)

(६) *तिके* : वस्तुतः यह मारवाड़ी बोली में पाया जाता है।[1]

परे सूर सोलह तिके नाम आनं (३२३·२)
तिके उच्चरे सोह अन्नोन्न पारी (६१·४)
तिके दव्व के हीन हीनेति गत्ते (६२·२)

१०३. *प्रश्नवाचक सर्वनाम*—इसके दो भेद होते हैं—प्राणिवाचक और अप्राणिवाचक। रासो में इन दोनों के निम्नलिखित रूप प्राप्त होते हैं।

प्राणिवाचक : को, कौन, किनहि
अप्राणिवाचक : कइ, कहु

उदाहरण :

इह अपुव्व को मानिहै (९४·६)
रहै कौन संता (२१९·१)
किनहि कह्यो प्रिथिराज (८१·१)

तिहि प्रियजन कइ काज (१६५·२) = केहि, किस
कहहि कन्ह यहु काहु (१८३·२) = क्या

१०४ *अनिश्चयवाचक सर्वनाम*—इस सर्वनाम के, रासो में, दो प्रकार

---

१. पकेलॉग, हिंदी ग्रैमर, टेबिल ११

के रूप मिलते हैं। एक तो कोइ (कोई) वाले और दूसरे संख्या-वाचक विशेषण एक से बने हुए हैं। दोनों के उदाहरण निम्न-लिखित हैं—

इह वंस भाजि जानइ न कोइ (३०२·५)
एक करहिं सूर असनान दान (१९·१) = कोई
इक कहहिं लेहि वर इंदुराज (१९·३)
इक कह इंदु फनिंद (१६६·१)
इक कहै दुरदेव है (१६६·१)
इक कहें असि कोटि नर (१६६·२)

१०५. *निजवाचक सर्वनाम—नियं* के अतिरिक्त ***अप्पण, अप्प, अप्पु*** तथा ***अपन*** रूप प्राप्त होते हैं जिनके उदाहरण निम्नलिखित हैं।

त्रिप निय निंद विसारि (१३९·२)
इतो बोझ अप्पण धरो (२७५·६)
अप्पु मग्ग लग्गियइ (२७४·२)
वधू रक्खै जु अप्प कुल (२७६·३)
स्वामि हुइ जाइ अपन घर (३०२·२)

कभी-कभी निजवाचक सर्वनाम का द्वित्व भी हो जाता है, जैसे ***अपना-अपना***। रासो में इसका ***अप्प अप्प*** रूप मिलता है।

जु अप्प अप्प विफ्फुरे (२४५·२)

५. सर्वनाम-मूलक विशेषण

१०६. *प्रकार वाचक* : रासो में इसके ***अस, इसो, तस*** और ***तेसो*** रूप मिलते हैं। उदाहरण निम्नलिखित हैं—

अस कत्थइ (२७९·३)
इसो जुद्ध अनुरुद्ध मध्यान्ह हूवं (२९६·१)

प्रजंक तदून तस (३४४'३)
वरं वीर गुंडीर तेसे सुभंगा (२२४'२)

१०७. *परिमाण वाचक* : रासो में इसके इत्त° वाले रूप मिलते हैं। सोदाहरण सभी रूप निम्नलिखित हैं—

नरिंद इंद इत्त कोरि (१३९२)
इत्तनहि सास घरि वारि रहियो (२३८'३)
इत्तनउ कहत भुजपति उठ्यो (१९६'५)
भयो इत्तने युद्ध (२६६'६)

१०८. *संख्या वाचक* : प्राप्त रूप निम्नलिखित हैं—

कितकु सूर संभरधनी (१०७'?)
कितकु देस दल बंध (१०७'१)
कितोकु इन हथ उग्गलउ (१०७'२)
कते राने (२६७'२)

६. क्रिया

१०९. प्रेरणार्थक—रासो में प्रेरणार्थक क्रिया के जो थोड़े से रूप प्राप्त हुए हैं उनमें एकमात्र प्रेरणार्थक प्रत्यय *–आ–* का प्रयोग दिखाई पड़ता है ; जैसे निम्नलिखित उदाहरणों में *पठावनि*, *दिखायो* और *कनायो* क्रिया रूप *पठ् + आ*, *दिख् + आ*, *कह + आ* से बने हैं।

अम्महि पुच्छन दूत पठावहि (१६८'३)
मरन भय मोहि दिखायो (२७५'१)
होइ के मोहि कहायो (२७५'२)

११०. *वाच्य*—भूतकालिक कृदंत से बने हुए निष्ठा के रूप मूलतः कर्मवाच्य के होते हुए भी अपभ्रंश तथा परवर्ती भाषाओं में कर्तृवाच्य की ही तरह प्रयुक्त होते

हैं। इनके अतिरिक्त *–य–* लगाकर बनाए हुए अन्य प्रकार के भी भाव वाच्य तथा कर्मवाच्य के रूप मिलते हैं।

मनो दिक्खियै रूव ऐराव इंदा। (१६·२) = दिखलाई पड़ता है।
मनो दिक्खियै वाय वड्ढे कुरंगा। (१६·४) = ,,
विनेत्रिय दिक्खिय पूरन काम। (७५·२) = ,,
वुज्झियइ सूर सामंत हुइ। (२७५·६) = बूझा जाता है।
पति सत्थै तन खंडियइ। (२७८·६) = खंडित किया जाता है।
मरण सनम्मुख मंडियइ। (२७८·६) = मंडित किया जाय
अप्पु मग्ग लग्गियइ (२७४·२) = लगा जाय।

वस्तुतः ये सभी रूप प्राकृत-अपभ्रंश के *–ज्ज–* वाले विधि के रूपों से उत्पन्न हुए हैं जिनका अर्थ भाववाच्य की भाँति होता है। इनके अतिरिक्त रासो में *–ज्ज–* > *–ज–* वाले कुछ रूप भी सुरक्षित हैं; जैसे

कहूं जग्गिजै पुण्य ते राज काजं (१८·१)
मरन दिजइ प्रिथिराज (२७६·१)

देख धातु से कर्मवाच्य अथवा भाव वाच्य बनाने के लिए आदि स्वर को परिवर्तित करके *दिख–* अथवा *दीख–* कर देने से भी काम चल जाता है; जैसे

जु दिक्खिहि नारि सकुंज परी (७३·३) = दिखाई पड़ती है।

इसी प्रकार भूतकाल में भी कर्मवाच्य तथा भाव वाच्य के रूप बनाए जाते हैं; यहाँ भाव वाच्य का एक उदाहरण प्रस्तुत है—

दिक्खियग नीर (१२·४) = नीर देखा गया।

आधुनिक हिंदी में भाव वाच्य अथवा कर्मवाच्य बनाने के लिए दो क्रियाओं के संयुक्त प्रयोग की अपेक्षा रहती है और ऐसे संयुक्त प्रयोग में द्वितीय क्रिया प्रायः *जाना* अर्थवाली होती है; किन्तु रासो में भूतकालिक भाव वाच्य के ऐसे भी रूप मिलते हैं जिनमें *जाना* के बिना केवल एक ही क्रिया से काम चलाया जाता है। संयुक्त क्रियाओं की अविकसित अवस्था के कारण ही उस समय ऐसा होता था।

अनेक वर्न जो कहे। (११६.२) = कहे गए हैं

मूल काल

१११. आधुनिक आर्यभाषा की अन्य आरंभिक रचनाओं की तरह रासो में भी ऐतिहासिक दृष्टि से दो प्रकार की कालरचना मिलती है—प्राचीन तिङन्त रूपों से उत्पन्न अर्थात् तिङन्त-तद्भव और प्राचीन कृदन्त रूपों से उत्पन्न अर्थात् कृदन्त-तद्भव। तिङन्त-तद्भव रूपों से तीन मूल काल बनते हैं: वर्तमान निश्चयार्थ, भविष्य निश्चयार्थ और आज्ञार्थ।

कालरचना के लिए प्रयुक्त होने वाले तिङन्त-तद्भव रूप भी तीन हैं: वर्तमान कृदन्त, भूतकालिक कृदंत और भूत संभावनार्थ।

चूँकि ये कृदंत रूप विशेषण होते हैं इसलिए ये लिंग-वचन-पुरुष से अनुशासित होते हैं।

११२. *वर्तमान निश्चयार्थ*—रासो में प्राप्त रूप निम्नलिखित प्रकार के हैं।

	एक०	बहु०
१.	कहउं, कहूं	कहहिं
२.	×	कहहु, कहउ
३.	कहइ, कहै	कहहिं

विश्लेषण करने से निम्नलिखित प्रत्यय लगाए गए प्रतीत होते हैं।

१.	–अउं, –ऊं	–अहिं
२.	×	–अहु, –अउ
३.	–अइ, –ऐ	अहिं

इनमें से प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं—

(१) —*अउं*: ऐतिहासिक दृष्टि से ये रूप प्राचीनतर हैं; अपभ्रंश में ऐसे ही रूपों का प्रचलन था। रासो में इनके अवशेष पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं।

इहि भुवहि ढिल्लि कनवज करउं। (१९८.३)

इह अप्पउं ढिल्लिय तखत (१९८.३)

(२) —ऊं : ये रूप अपेक्षाकृत आधुनिक हैं और अन्त्य स्वर-संकोचन के परिणाम-स्वरूप निर्मित हुए हैं। रासो के अपने रूप यही हैं।

नहि रक्खूं कवि तोहिं (१२३·१)
कल्लि समप्पूं तोहिं (१२३·२)
जाणूं पावस चुव्वइ (२३९·२)

(३) –अहु : रासो के ये रूप अपेक्षाकृत प्राचीनतर हैं।

गेह किमि गंजहु (९२·२)
किनि गुनि पंगुराइ मन रंजहु (९२·३)
तिहि रक्खहु तिय वास (१२४·२)

(४) –अउ : ये रूप बहुत कम मिलते हैं—

संचउ (९३·१), रंचउ (९३·२)

(५) –अइ : इन रूपों को अपभ्रंश का अवशेष समझना चाहिए। इनकी संख्या रासो में बहुत अधिक है।

इम जंपइ चंद वरद्दिया (३०२·६)
धर तुट्टइ खुर धार (३०४·१)
गहव गय कुंभ उपट्टइ (३०९·३)
इस वंस भाजि जानइ न कोइ (३०२·५)

(६) –ऐ : आधुनिक रूप यही हैं और अन्त्य स्वर-संकोचन के द्वारा इनकी रचना हुई है।

इम जंपै चंद वरद्दिया (२९९·६)
दिक्खि सुर लोक सहदेव कंपै (२३७·२)
आव रहै तब लग जियन (२२६·५)
तब लगि चलै कवित्तनौ (२७९·६)

(७) –अहिं : ऐतिहासिक दृष्टि से अन्य पुरुष बहु वचन के ये रूप अपेक्षाकृत प्राचीन हैं। अन्त्य –ह के लोप से -ऐं वाले रूपों के निर्माण की प्रवृत्ति रासो में नहीं मिलती।

इक कहहिं	(६·३)
बल भरहिं सूर सुणि सुणि निसान	(१०·२)
तिन्नि लक्ख निसि दिन रहहिं	(८२·२)
सयल करहिं दरबार	(१४२·२)
गजराज विराजहिं	(२८३·१)

११३. *भविष्य निश्चयार्थ* : रासो में *–ह–* < *–स्स–* < *–ष्य–* वाले रूपों की प्रधानता है। प्रायः स्वर-संकोचन के द्वारा *–इह* > *–है* हो गया है किन्तु कहीं कहीं प्राचीन अवशेष के रूप में, *–हइ* वाले रूप भी मिल जाते हैं।

इक रवि –मंडल भिद्दिहै	(६·२)
राठोर राय गुन जानिहै	(६४·५)
इह अपुव्व को मानिहै	(६४·६)
जु कछु इच्छ करि मंगहइ	(१२३·२)

इनमें से अंतिम उदाहरण मध्यम पुरुष एक वचन का है।

११४. *आज्ञार्थ* : रासो में आज्ञार्थ के *–ओ* प्रत्ययांत रूप ही मिलते हैं।

तिहिं सरणागत तुम करो	(२७५·५)
इतो बोझ अप्पण धरो	(२७५·६)

कृदन्त रूप

११५. *वर्तमानकालिक कृदन्त*—इसके लिए रासो में प्राचीन *–अंत* तथा नवीन *–अत* दोनों प्रकार के रूप मिलते हैं और किसी सहायक क्रिया के बिना ही वर्तमान काल की रचना करते हैं।

(१) –अंत :

झलकंत कनक	(१२·४)	= कनक झलकता है।
राइ अप्पंत दानं	(१६·१)	= राजा दान अर्पित करते हैं।
जराउ जरंत कनंक कसंत	(७५·३)	

(२) –अत :

दिखत चंदवरदाइ (८४·१) = चंद वरदाई देखता है।

सेवते बंध निसुरत्त पाई (१०२·४)

कवि कन्ह कहता (२१५·१)

सकति सुर महिख बलिदान लहता (२१५·२)

११६. *भूतकालिक कृदन्त* : रासो में भूतकालिक कृदंत के विविध रूप मिलते हैं। कहीं तो *–अ* अथवा शून्य प्रत्यय मिलता है; कहीं *–य, –यो, –यौ*; कहीं *–न, –नी, –नो, –नौ*; कहीं *–न्ह, –न्हों*, तथा कहीं *–ध, –धो, –धी* वाले रूप भी मिलते हैं। इनके अतिरिक्त एक रूप और मिलता है जिसके अंत में *–इग* प्रत्यय आता है। संभवतः यह संयुक्त प्रत्यय है। इसमें *–ग गत* > *गअ* का संक्षिप्त रूप प्रतीत होता है। प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

(१) –अ :

झुकित खग्ग चहुवान गह (३१३·१)

= झुकते हुए चहुवान ने खड्ग गहा।

धन्य धन्य प्रिथिराज कहि (३१२·१)

= प्रिथिराज ने धन्य धन्य कहा।

प्रगट पंगु न्रिप हंक (३१०·१)

= पंगु नृप ने प्रगट रूप से हाँका।

उड्ड न्रिप तेज विराज (१२७·१)

= तेज विराज रहा था।

(२) *–य, –यो, –यौ* : ये पुंल्लिग एक वचन के रूप हैं। इनमें से *–यो* वाले रूपों की रासो में बहुलता है किन्तु यत्र-तत्र *यौ* वाले रूप भी मिल जाते हैं। प्राचीन ब्रजभाषा में ये दोनों ही रूप साथ-साथ मिलते हैं। आगे चलकर *–यो* वाले रूप कन्नौजी और जयपुरी में विशेष प्रचलित रहे और ब्रज में *–यौ* वाले रूपों की प्रधानता हो गई।

बंधि खुरसान किय मीर बंदा (१०·३)
कविता किय चंद (१२६·१)
उडिय रेणु (३·५)
कर करार सज्यो समुह (६·१)
उपज्यो जुद्ध (१२·२)
भट्टि पुब्बहि चल्यो (१४·२)
कंचन फूल्यो अर्क बन (१५·१)
चंद गयो दरबारह (८३·१)
दिल्लीसर लक्ख्यौ (१४९·१)
दुसह दारुन अति पिक्ख्यौ (१४९·२)

(३) –इ : स्त्रीलिंग में भूतकालिक कृदंत कर्त्ता के अनुसार *–इकारान्त* हो जाता है ; जैसे

छह सुंदरि एकइ समइ चली। (११३·२)

(४) –ये, –ए : ये रूप बहुवचन के हैं।

उये कलस जयचंद ग्रिह (१५·२)
देवता मग्ग ते स्वर्ग भुल्ले (१७·४)

(५) –न, –न्ह :

मिलि मुद मंगल कीन (२७२·४)
खन तलप्प अलप्प मन कीने (१९०·३)
गुन उच्चारि चारि तब किन्हों (९०·१)
जउ भूखै सक्कर पय दिन्हो (९०·२)
देवि दीन्हो हुंकारो (३११·२)

(६) –द्ध : यह अत्यंत प्राचीन रूप है। अपभ्रंश में भी इसके उदाहरण बहुत कम मिलते हैं। 'प्रबंध चिंतामणि' के एक दोहे में इसका प्रयोग हुआ है—

महु कन्तहु इक्क ज दसा अवरि ते चोरहिं लिद्ध।

बीम्स को भी इसके चार ही उदाहरण रासो में मिले हैं—

बर दीधौ ढुंढा नरिंद। (१·३०५·१)

प्रथिराज ताहि दो देस दिद्ध॥ (१·३०७·६१)

पुत्री पुत्र उछाह। दान मान घन दिद्धिय॥

घाम धाम गावत धमार। मनहु अहि बन मनि लद्धिय॥

यहाँ *लिद्ध* की व्याख्या करते हुए बीम्स ने कहा है कि *लभ्* - धातु के भूत कृदंत रूप *लब्ध* से संबद्ध होने के कारण ही *लद्ध* रूप बना है और सारूप्य सिद्धान्त के अनुसार *दद्ध* भी उसी के वजन पर बन गया।

हमारे पाठ में एक स्थान पर लद्धी और अन्यत्र पाठांतर में *लिद्ध* रूप मिलता हैं—

लिद्ध वैरागिरि सब्ब हीरा (१०२·२)

दिसा देस दच्छिन्न लद्धी उपंगा (२२३·२)

(७) *-इग*[1] : यह रूप रासो की अपनी विशेषता है।

करिग देव दिख्खन नयर (१६२·१)

गंठि छोरि दक्खिन फिरिग (१७८·२)

त्रिप्पु नयन विश्र अंकुरिग (१८२·२)

उभय सहस हय गय परिग (२६८·१)

सोनंकी सारंग परगे (२६६·४)

अन्य उदाहरण :

अनुसारग	(११२४)	डारग	(२२३५)
अप्पिग	(१२३·१, १४८·१)	फटिग	(१२·३)
उठिग	(११२·३)	भ्रमिग	(१३·१)
कहिग	(१३·१)	मलिग	(१४६·२)

1. बीम्स ने रासो में यह रूप लक्षित नहीं किया है।

खपिग	(३१५·७)	मिलिग	(११·३)
गह्हिग	(३३२·४)	संचरिग	(७·२, ३१३·५)
घटिग	(१२·३)	संप्परिग	(३१३·२)
चिडिग	(१६८·२)	सज्जिगे	(६६·१)
झिलमिलिग	(११·३)		

क्रियार्थक संज्ञा

११७. -न और -व दो प्रकार के रूप मिलते हैं। इनमें से -न वाले रूपों का प्रचलन अधिक है। प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं।

(१) -न :

कनवज दिक्खण कारणइ	(१·२)
पुच्छन चंद गयो दरबारह	(८३·१)
कनवज्जह दिख्खन आय हूँ	(६१·४)
फिरक्कि चक्कि चाहनं	(१३६·१)
सुह दुह कहन चंद मन रत्तउ	(३३८·४)

(२) -व :

करिव्व	(३५·१)
गहव गय कुंभ उपट्टइ	(३०६·३)

पूर्वकालिक कृदन्त

११८. रासो का सामान्य पूर्वकालिक कृदंत —इ है, जो व्यंजनान्त और स्वरान्त सभी धातुओं में समान रूप से लागू होता है। आधुनिक ब्रज की भाँति —आकारान्त और —ओकारान्त धातुओं में जुड़ने पर —य होने की जगह —इ ही बना रहता है। कुछ उदाहरण निम्नलिखित है—

सज्जि साह संधै	(१७·१)
वेलि सेवंतिय गुंथिय जाइ	(७२·३)

आइ स जो गुनियन तन चाह्यो (८६·१)
ति कवि आइ कवियहि संपत्ते (८७·१)
अप्पिग पानु समानु करि (१०३·१)
इच्छ करि मंगिहइ (१२३·२)

सहायक क्रिया

'भू' धातु के रूप

११९. रासो में √भू के *–भ–* और *–ह–* दोनों ही प्रकार के रूप मिलते हैं और अनुपात की दृष्टि से दोनों का प्रयोग समान है। किन्तु विकासक्रम की दृष्टि से *–ह–* वाले रूप ही रासो के अपने कहे जायँगे। नीचे इनमें से प्रत्येक के काल-रचनानुसार तिङन्त-तद्भव और कृदन्त-तद्भव रूप दिए जा रहे हैं। यहाँ ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि इस सहायक क्रिया के रूप रासो में संयुक्त काल रचना के लिए प्रयुक्त नहीं हुए हैं।

१२०. *–भ– मूलक कृदन्त*[1] : प्राप्त रूपों में से अधिकांशतः भूतकालिक कृदन्त के हैं।

पुंल्लिंग

भो (३२८·१), **भउ** (३१७·६), **भय** (७५·४)
भयो (२६६·२, ३०६·२, ३११·४, ३१८·४)

स्त्रीलिंग

भइ (३१५·६), **भई** (३२३·१, ३४६·४), **भइ** (३३६·४)
भइत (१२७·१)।

१२१. *–ह– मूलक तिङन्त रूप* :

है (२३·२), हैं (१०९·१)

---

१. इसके तिङन्त-तद्भव रूप रासो में नहीं मिलते।

अहहि (६४·३), आहि (८४·२)
होइ (७१·४, २७७·६, ३०७·२)

उदाहरण :

मुकुट वंध सब भूप हैं (१०६·१)
होइ घरे घरे मंगली (२७७·६)
जिह पंगुर न्रिप आहि (८४·२)

१२२. *-ह- मूलक कृदन्त रूप* : मुख्यतः भूतकालिक कृदन्त के ही रूप प्राप्त होते हैं—*हुआ, हुअ, हुव, हुवो, हूवं* इत्यादि ।

हरखवंत नृप भ्रित हुआ (१८३·१)
खंड खंड हुअ रुंड (३०२·४)
अचल अचेत जु खेत हुव (३१४·१)
उभय हुव स्वेद कंप सुरभंग (१६७·१)
राज सगुन साम्हो हुवो (४·१)
इसो जुद्ध अनुरुद्ध मध्यान्ह हूवं (२६६·१)

७. संयुक्त क्रिया

१२३. ऐतिहासिक दृष्टि से 'संयुक्त क्रिया' भारतीय आर्य भाषा में परवर्ती विकास है । अपभ्रंश-काल से इसका उदय स्पष्ट होता है और आधुनिक भाषाओं के क्रमिक विकास के साथ रूप और अर्थ दोनों ही दृष्टियों से इसमें जटिलता बढ़ती जा रही है । रासो में संयुक्त क्रिया के जो रूप प्राप्त होते हैं, वे रूप और अर्थ दोनों ही दृष्टियों से कम जटिल है । अधिकांश संयुक्त क्रियाएँ पूर्वकालिक कृदंत के योग से बनी है और थोड़ी सी क्रियार्थक संज्ञा के भी योग से निर्मित हुई हैं । इनमें से प्रत्येक के उदाहरण निम्नलिखित हैं ।

(१) *पूर्वकालिक कृदन्त के योग से निर्मित* :

धरि रख्यो वल वानि (३४०·२) :

आनि चंपी दिल्ली धर (३३६·१)
उवर हंस उड़ चलहि (३१३·४)
लेहि बइठो (२०७·१)
जुज्झि गयउ (३०३·१)
हुइ जाइ (३०२·२)
मद गंध गयंदनि सुक्कि गयं (२८८·४)
जाइ निकस्सि (२८६·१)
रहे सूर सामंत जकि (३२१·२)
चलि गयो न मंदिर रह्यो (३३०·५)
कहे, घरि आव बइट्ठो (२८९·२)
त्रिप जोइ फवज्जइ बंट लियं (२११·४)
भाजि प्रिथिराज जाइ जनि (१४९·४)
चल्या तु छूटि प्रवाह (१५३·२)

(२) *क्रियार्थक संज्ञा के योग से निर्मित :*

प्रिद्ध पावै न जानं (२६१·४)
= गृद्ध जाने न पाए
मिट्यो न जाइ कहणो (२८०·१)
= कहना मिट न जाय
गज्जि लग्ग्यो (३३२·१)
= गर्जने लगा ।

रासो की संयुक्त क्रियाओं की रचना में यह विशेषता ध्यान देने योग्य है कि दो क्रियाओं के बीच जोर देने के लिए दूसरे शब्द भी आ गए हैं जैसे *जकि रहे* के बीच में 'सूर सामंत' तथा *छूटि चल्या* के बीच *तु* ।

८. अव्यय

क्रिया विशेषण

१२४. *काल वाचक :*

अब (१८४·३, ३१९·२)
अजहुँति (१८१·१) = आज से
कब (५७·२) ; छिनि (१६९·३) = क्षण भर
जब (१९८·२, २७९·६, ३३४·१)
जब लगि (१०८·२) = जब तक
तब (८०·१, १०८·२)
तब लगि (१०८·२) = तब तक
निन्ति (२२३·४) = नित्य
निन्तु (१३०·२) = नित्य
पुनि (१५२·२) = पुनः
फिर (१२९·१)
सदाहं (२९२·१) = सदा

१२५. *स्थान वाचक :*

अग्ग (२५४·२), अग्गलउ (८४·२)
अग्गे (८४·२), अग्गौं (२७०·१)
अनु (१५१·२)
इत (६९·२)

इत्तु (११.२)
इतो (२७५.६)
उप्पर (३०४.६)
उप्परि (३१५.३, ३४०.२)
उप्परहि (१८०.१)
ओर (४०.२)
कहँ (४७.३)
कित (३०६.२)
कोद (२३४.१) = ओर
जहँ (८३.३, १४२.१, २८१.३)
जहि (६१.२, १४३.२)
जाह (४४.१)
तहाँ (२६६.२, ३२६.४, ३३३.३)
तहि (१४५.४, २३२.२)

२२६. *रीति वाचक :*

असि (२७६.२, ३१५.१ = ऐसा
इम (५५.३, ११०.२, २७०.६, २६६.६, ३३१.२) = ऐसा
किमि (६२.२) = कैसे
जनु (२०४.२ २८३.२,) = जैसे, मानो
जिम (११०.२, १६१.४, २२५.२, २४०.४) = जैसे
ज्यं (५.२) = ज्यों
ज्यूं (१०६.२, २०२.१) = ज्यों
तिम (८.१, ३११.१) = त्यों
मनहु (१४८.१, १८०.१, १८६.२, ३००.१ ३१८.४) = मानो
मनो (३५.१, ४८.२, ११६.२, २५५.२, २६०.२) = मानो

१२७. *निषेध वाचक :*

जनि* (१४६'४) = मत

जिन (२८६'२)

न (७३'२, ८७'४, २८६'३, २६०'२)

नहि (१२३'१, १४६'२)

नहिं (३३०'३), नहीं (३२७'३), नही (२६६'५)

नानु (३१५'१), नाहिं (२२७'२)

बिनु (११२'३, ३३०'१) < बिना

म (४३'१) < मा

मति (२७५'१) < मा ?

१२८. *कारण वाचक*

कत (१५१'२, २८९'२) = क्यों

किनि (६२'३) = क्यों, क्यों न

क्यूं (१५४'४) = क्यों

१२९. *परिमाण वाचक*

कछु (२७८'३)

१३०. *समुच्चय बोधक अव्यय*

अरु (२'२, ८०'२, १६०'१) = और

१३१. *विभाजक*

अह (३४३'३) = अथवा

अहवा (१६७'२) = अथवा

कि (१६५'२) = या

किधुं (१६५'२) = अथवा

---

* तुलनीय—बार बार तू ह्यां जनि आवै। (सूरसागर)

किधौं (८६·३) = अथवा
कै (२·२, ६१·१, १०१·२) = या
कैं (३४५·१) = या

१३२. *केवलार्थक, निश्चयबोधक*

ही (३४·१, ३६·१, ४०·२, ३१०·१)

१३३. *विस्मयादि बोधक अव्यय*

अरी (२८६·२)
अहो (९१·३)

तृतीय अध्याय

वाक्य-विन्यास

१३४. *कारक-संबंधी विशेषता :* वाक्य-विन्यास के अंतर्गत कारकों के प्रयोग-संबंधी विशेषताओं में से षष्ठी विभक्ति की व्यापकता महत्वपूर्ण है। षष्ठी की व्यापकता के प्रमाण संस्कृत से ही मिलते हैं।[1] म० भा० आ० में षष्ठी का क्षेत्र और भी व्यापक हो गया।[2] प्राकृत-अपभ्रंश में षष्ठी का प्रयोग सभी कारकों में होता था।[3] रासो में भी षष्ठी –ह के व्यापक प्रयोग के अनेक उदाहरण मिलते हैं।

(१) कर्म कारक के अर्थ में :

चंद गयो दरबारह (८३·१)

= चंद दरबार को (की ओर) गया।

कनवज्जह दिक्खन आयो (६१·४)

= कनवज्ज को देखने आया।

(२) अधिकरण के अर्थ में :

अंगह चंदन लावहि (१६२·१)

= अंगों में चंदन लगाती हैं

भयउ निसानह घाउ (२०२·१)

= निसान पर घाव (आघात) हुआ।

ज्यूँ भद्दव रवि असमनह चंपिय वद्दल वाउ (२०२·२)

= जैसे आसमान में भाद्रपद के रवि को वादल-वायु ने चाँप लिया।

---

१. षष्ठी शेषे। (अष्टाध्यायी, २।३।५०)

२. सुकुमार सेन, हिस्टारिकल सिंटैक्स आव मिडिल इंडो आर्यन, § ६३–८४

३. हेमचन्द्र, ८।३।१३१–१३४

१३५. षष्ठी के विशिष्ट प्रयोगों में से एक है स्वतंत्र कारक के रूप में 'भावे षष्ठी' का प्रयोग। 'जब शत्रन्त अथवा शानजन्त पद का लिंग वचन और कारक क्रिया के कर्त्ता से भिन्न किसी अन्य कर्ता के अनुरूप होता है तब वह वाक्यांश *भावे* कहलाता है।'[1] जैसे—

खग्गह सीसु हनंत खग्ग खप्पुरिव खरखर। (३०४·३)

= खड्ग के शीर्ष पर हनते ही खप्पर की तरह खड्ग खर-खर [धँस गया]।

धरनह कन्हह परत ही प्रगट पंग त्रिपु हंक्क (३०१·१)

= धरणी पर कन्ह के पड़ते ही नृप ने प्रकट रूप से पंगु को ललकारा।

१३६. वाक्य-रचना की दृष्टि से 'भावे सप्तमी' के भी कुछ विशिष्ट प्रयोग रासो में मिलते हैं—

धरणि मंगल जल पाए (२७८·२)

= जल को प्राप्त करने से (पर) धरणी का मंगल [होता है]।

दीन मंगल कछु दीनइ (२७८·३)

= कुछ दिए जाने से (पर) दीन का मंगल [होता है]

सार मंगली ग्रिह आए (२७८·१)

= गृह में [व्यक्ति विशेष] के आने से (पर) शाला मंगली [होती है]।

१३७. अपभ्रंशोत्तर युग से प्राचीन कर्मवाच्य कर्तृवाच्य की भाँति प्रयुक्त होने लगे और नये ढंग के भाववाच्य तथा कर्मवाच्य विकसित हुए।[2] आधुनिक आर्यभाषा के उदय काल में कर्मवाच्यके भूतकालिक कृदंत रूप तथा विधि के रूपों में सरूपता के कारण दोनों के अर्थ में भ्रम उत्पन्न हो गया। फलस्वरूप दोनों के कार्य

१. तेसितोरी, पुरानी राजस्थानी, § १३७

२. भायाणी, संदेश रासक, ग्रैमर, § ७६

क्रमशः एक से होने लगे। उदाहरण के लिए रासो के निम्नलिखित *खंडियइ* और *मंडियइ* रूप विधि के *खंडिज्जइ* और *मंडिज्जइ* तथा *–इत(क)* वाले भूत कृदन्त के *खंडित(क)* और *मंडित(क)* दोनों ही समझे जा सकते हैं।

पति सत्थै तन खंडियइ (२७८·५)
मरण सनम्मुख मंडियइ (२७८·६)

(१) इन दोनों प्रकार के रूपों के मिश्रण से *–इयै* वाले निम्नलिखित प्रकार के नये रूप बने जो सर्वथा भाववाच्य के लिए प्रयुक्त हुए हैं—

मनो दिक्खियै रूव ऐराव इंदा (१६·२)
मनो दिक्खियै वाय वड्ढे कुरंगा (१६·४)

यह प्रवृत्ति १४ वीं सदी की संदेश-रासक जैसी अवहट्ट रचनाओं से ही आरंभ हो गई थी। संदेश रासक में *अंबरु पुणि रंगियइ, अंगु अब्भिंगियइ, दविणु पुणु भिट्टियइ* और *किम वट्टियइ* (१०१) जैसे विधि के रूप भाव वाच्य की तरह प्रयुक्त हुए हैं।

(२) भूत कृदंत और विधि के तद्भव रूपों के मिश्रण से *–आणय* > *–आनय* वाले नये ढंग के कर्मवाच्य रूप निर्मित हुए जिनकी रचना में प्रेरणार्थक प्रत्यय का भी आभास मिलता है। रासो में *पलायन* के अर्थ वाली क्रिया में इस प्रकार की विशेषता स्पष्ट रूप से लक्षित होती है।

तुरिय पट्टनु पल्लान्यो (३०६·१)
= तुरंग को पट्टन (नगर) की ओर भगाया।
पहु पट्टन पल्लानि (३०७·३)
= प्रभु पट्टन की ओर भागे।

अन्य धातुओं में भी इसका प्रभाव दिखाई पड़ता है; जैसे—

मरन अप्पहीं पिछान्यो (३०६·२)

= मरण को स्वयं पहचाना अथवा मरण स्वयं ही पहचाना गया।

१३८. पद-क्रम : छंद-प्रवाह के कारण रासो की वाक्य-रचना में उद्देश्य-विधेय तथा कर्ता-कर्म-क्रिया का गद्यानुरूप क्रम नहीं निभाया गया है। किन्तु इस क्रम-भंग में भी एक बात स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है कि जिस वस्तु पर अधिक जोर देना है वह वाक्य में सामान्य क्रम का उल्लंघन करके पहले रखी गई है; जैसे

बड़ हत्थहि बड़ गुज्जरउ जुज्झ गयउ बैकुंठ (३०३·१)

यहाँ 'बड़गुजर' का बैकुंठ जाना कवि के लिए उतना महत्वपूर्ण नहीं है जितना बड़े (नृप) के हाथ उसका जूझ जाना। इसलिए *बड़ हत्थहि* का क्रम *बड़ गुज्जर* से पहले रखा गया है।

इसी प्रकार :

मद गंध गयंदनि सुक्क गयो (२८८·४)

गयंदनि मद गंध (=गजेन्द्रानां मदगंध-) के सामान्य क्रम को तोड़ कर 'मद गंध' को पहले रखा गया है।

अमिय कलस आयास लियो अच्छरिउ उच्छंगह (३११·३)

सामान्य क्रम होता : *अच्छरिउ आयास उच्छंगह अमिय कलस लियो*; अर्थात् अछरियाँ आकाश में उत्संगों में अमृत कलश लिए हैं। किन्तु यहाँ 'अमिय कलस' को कवि प्रधानता देना चाहता है, इसलिए उसने कर्म को पहले रखा।

इस प्रकार वाक्य में पदों के क्रम-विपर्यय का मुख्य कारण **अवधारण** प्रतीत होता है।

१३९. अवधारण के कारण रासो में प्रायः मुख्य क्रिया को वाक्य में सबसे पहले रख दिया गया है। कभी-कभी संयुक्त क्रिया के दोनों अवयवों के बीच दूसरे अनेक शब्द रख दिए गये हैं; यहाँ तक कि एक अवयव वाक्य के आदि में है तो दूसरा वाक्य के अन्त में। इस प्रकार के विशिष्ट वाक्य-विन्यास के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं —

रहिउ स्वामि सिर सेहरउ (३२०·६)

= रहा स्वामी के सिर पर सेहरा।

डरे संभरे राइ संसार सारे (२५९·१)

= डरता है संभर-राय (पृथ्वीराज) से संसार सारा।

मिट्यो न जाइ कहणो (२८०·२)

= मिट न जाय कहना

भयो इत्तने युद्ध अस्तमित भाणं (२६६·२)

= हुआ इतने युद्ध में अस्तमित भानु।

गए सुंड दंतीनु दंता उपारे (२६०·१)

= गए दन्तियों के सुंड [और]दाँत उपारे।

१४०. *मिश्र वाक्य :* रासो में वाक्य-रचना प्रायः साधारण वाक्यों की ही है किन्तु कहीं कहीं एकाधिक वाक्यांशों वाले मिश्र वाक्य भी मिल जाते हैं, जैसे—

मीचु लग्गए पाइ कहे घरि आव बइट्ठो (२७६·२)

= मृत्यु पाँव लगे और कहे कि आओ घर बैठो।

आब रहै तब लगि जियन जियन जम्मु साबुत रहै (३७६·५)

= जब तक आब (पानी = प्रतिष्ठा) रहे तभी तक जीवन है····

उह मारइ इहु धाइ देखि अरि दंतह कट्टइ (२०६·४)

= वहाँ मारता है, यहाँ दौड़ता है, यह देखकर शत्रु [आश्चर्य से] अपने दाँत काटते हैं।

चतुर्थ अध्याय

शब्द-समूह

१४१. रासो के शब्द-समूह में पाँच तत्व हैं : संस्कृत तत्सम, प्राकृत-अपभ्रंश के अर्धतत्सम, हिन्दी तद्भव, राजस्थानी देशी तथा फारसी। इनमें से सबसे कम शब्द फ़ारसी के हैं। डा० विपिन बिहारी त्रिवेदी ने बृहत् रूपान्तर के मुद्रित संस्करण से लगभग साढ़े चार सौ अरबी-फारसी शब्दों की सूची दी है।[1] यदि यह मान लिया जाय कि इस सूची में बृहत् रूपान्तर के सभी फ़ारसी शब्द आ गए हैं तब भी अनुपात की दृष्टि से यह संख्या संपूर्ण शब्द-समूह में बहुत कम है। हमारे पाठ (लघुतम कनवज्ज समय) में फ़ारसी शब्दों की संख्या पचास से भी कम है। फारसी शब्दों की सम्भावना 'कनवज्ज समय' के बाद 'बड़ी लड़ाई' में अधिक हो सकती है क्योंकि उसमें पृथ्वीराज और मुहम्मद गोरी के युद्ध का वर्णन है। इसलिए 'कनवज्ज समय' के आधार पर फ़ारसी शब्दों के अनुपात के विषय में कुछ न कहते हुए भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि रासो का शब्द-समूह मुख्यतः भारतीय आर्यभाषा का ही है। विद्यापति की 'कीर्तिलता' की तुलना में 'पृथ्वीराज रासो' में फ़ारसी शब्द अधिक नहीं है। जिन फ़ारसी शब्दों को रासो में अपनाया गया है, उन्हें भी हिन्दी की अपनी उच्चारण पद्धति के अनुसार तद्भव रूप दे दिया गया है। (दे० ६६)

लघुतम कनवज्ज समय में प्राप्त फ़ारसी शब्द निम्नलिखित है —

अरब्बी	(१६०·१)	=	अरब
असमान	(२०२·२)	=	आसमान

१. चंदवरदायी और उनका काव्य, पृ० ३१३–३४६

आब	(२७६·६)	=	आब
कम्मान	(२६१·३)	=	कमान
गाजी	(३२५·३)	=	ग़ाज़ी
जिरह	(२२०·३)	=	ज़िरह
तखत	(१८६·४, १६८·३)	=	तख़्त
तुरक	(२७५·५)	=	तुर्क
तेग	(१८६·२)	=	तेग़
दरिया	(२०४·४)	=	दरिया
दरबार	(७६·४)	=	दरबार
नफेरी	(२२६·१)	=	नफ़ीरी
निसान	(२४०·२)	=	निशान
फवज्ज	(२०८·१)	=	फ़ौज़
मीर	(२४७·२, २६८·२)	=	मीर
समसेर	(२०६·३)	=	शमशेर
सवार	(१७४·३)	=	सवार
सहनाइ	(२२५·१)	=	शहनाई
साह	(१७·१, ३२५·३)	=	शाह
साहब्ब	(१०२·३)	=	साहब
साल	(१०३, २२·३)	=	साल
साबुत	(२७६·५)	=	साबित
सेहरउ	(३२०·६)	=	सेहरा
सोर	(१८६·२)	=	शोर
स्याह	(१३३·४, १७५·५)	=	स्याह
हज्जार	(२५४·१)	=	हज़ार

१४२. शेष शब्द-समूह में लगभग सोलह प्रतिशत संस्कृत-तत्सम हैं। अर्ध-तत्सम, तद्भव तथा देशी शब्दों के विषय में ठीक ठीक कह सकना कुछ कठिन है।

किन्तु इतना निश्चित है कि ठेठ राजस्थानी के देसी शब्द भी हमारे पाठ में अधिक नहीं है। रासो के मुक्क° (मुक्त°), नंष° (√नश्) जैसे कुछ क्रिया पद अवश्य हैं जो आधुनिक राजस्थानी में बहुत प्रचलित है। ऐसे शब्दों पर यथासम्भव 'शब्द कोश' के अन्तर्गत विचार किया गया है। राजस्थानी शब्द-कोश के अभाव में इस समय यह कहना कठिन है कि अमुक शब्द ठेठ राजस्थानी है अथवा सामान्यतः देसी।

———

कनवज्ज समय

अथ राजा प्रिथीराज-प्रयाणरमाभ्यते

दूहा

ग्यारह सइ[१] इक्कावनइ[२] चैत तीज रविवार।
कनवज दिख्खण[३] कारणइ[४] चालिउ[५] सिंभरिवार ॥१॥ १०२

सत[१] सुभट[२] ले[३] संमुहो[४] पंगुराय[५] ग्रिह[६] साज[७]।
कै जानइ[८] कवि[९] चंद अरु कै जानै[१०] प्रिथिराज[११] ॥२॥ ७८

कवित्त

कनवजहे[१] जयचंद चल्यो[२] दिल्लेसुर[३] दिख्यन[४]।
चंद वरदिया[५] साथ[६] वहुत[७] सामंत सूर घन ॥
चाहुवान राठोर[८] जाति पुंडीर गुहिल्लय[९]।
वड गुज्जर पांवर चलै जांगरा सु हल्लय[१०] ॥
कूरंभ[११] सहित भूपति चल्यो[१२] उडिय[१३] रेणु[१४] किन्हो[१५] नभो।
इक इक्कू[१६] लख वीर[१७] आंगमइ[१८] लिये[१९] साथ रजपूत सो ॥३॥ १०४

दूहा

राज सगुन साम्हो[१] हुवो[२] ध्रुव[३] नरसिंघ दहार।
म्रिग दक्खिण[४] खिणि[५] खिणि[६] खुरति[७] चरहि[८] न संभरवारि ॥४॥ १८१

[१] १. सै २. एकानवै ३. देखन ४. कारणैं ५. चल्यौ
[२] १. सित २. सामंत ३. सु ४. संमुहै ५. पंगुराय ६. ग्रह ७. काज ८. जानै ९. ई १०. प्रयान ११. प्रथिराज
[३] १. कनवज्जह २. चल्यौ ३. दिल्लीपति ४. पिष्षन ५. बरद्दिय ६. सथ्थ ७. तथ्य ८. कूरंभ ९. गौर गाजी वडगुज्जर १०. जादव रा रघुवंस पार पुंडीरति पष्पार ११. इत्तने १२. छज्यौ १३. उडी १४. रेन १५. छीनौ १६. लष्ष १७. वर १८. लेषिए १९. चले
[४] १. समूह २. हुअ ३. धुअ ४. दष्छिन ५. छिन ६. खुरहि ७. चलहि

सुर ति[1] साय[2] सारस सबद उदय सबदला भानु।
परनि भज्ज[3] प्रतिहार ज्यौं[4] करहि त कज्ज[5] प्रवान[6] ॥५॥ १८२

कर[1] करार[2] सज्यो[3] समुह हसि न्रिप बुझ्यो चंद।
इक रवि-मंडल भिद्दिहै[4] इक्क करहि ग्रिह दंद[5] ॥६॥ १८३

त्रीय[1] दिवस त्रिय यामिनी त्रयी[1] जाम पल तिन्न[2]।
योजन इक इक[3] संचरिग प्रिथीराज संपन्न ॥७॥ २७२

अइत निसा दिस[1] मुदित तिम उडन्रिप[2] तेज विराज।
कथित[3] साथि कथहे[4] कथा सुक्ख सयन प्रिथिराज ॥८॥ ८२४

पद्धड़ी

उत्तरिय चित्त चिंता नरेस।
वत्तरहि[1] सूर सुरलोक देस ॥
इक कहहिं[2] लेहि वर[3] इन्दुराज[4]।
जस जिवन[5] मरन प्रिथिराज[6] काज ॥ ९ ॥ २९२

एक करहिं सूर असनान[1] दान।
बल[2] भरहिं[3] सूर सुणि[4] सुणि[5] निसान ॥
सर्वरिय[6] साल वंछहि निभान[7]।
वुधु[8] वाल केम मंगइ विधान[9] ॥१०॥ २९३

[५] १. सुनत २. सीस ३. भाज ४. सौ ५. काज ६. प्रमान
[६] १. कल २. कलार ३. सद्यो ४. भेदिहै ५. आनंद
[७] १. त्रयत २. उन्न ३. इकत्त
[८] १. दिन २. उडुपति ३. कथक ४. कथ्थहि
[९] १. वेतरहि २. कहत ३. दल ४. इन्द्रराज ५. जियन ७. प्रथिराज
[१०] १. अस्नान २. वर ३. भरत ४. सुनि ५. क्रन ३. सरवरिय
७. वंछहित भांन ८. मुध ९. जेम इच्छत विहान

गुरु दपत[1] उदित भ्रिग[2] उदित इत्तु[3]।
झिलिमिलिग[4] तार तर[5] तिलिग[6] पत्तु[7]॥
दिखइ[8] इन्दु किरणीण[9] मंदु।
उद्दिमे[10] हीन जिमि भ्रिपति[11] वंदु[12]॥११॥ २९४

धर हरिग सीत[1] सुर मंद[2] मंद।
उप्पज्यो जुध्ध आवध्ध दंद[3]॥
पहु[4] फटिग घटिग सर्वरि-सरीर।
झलकंत कनक[5] दिख्खयग[6] नीर॥१२॥ २९५

भ्रिप भ्रमिग कहगि[1] पहु[2] पुव्व देस।
अरिय[3] नीर[4] नीर उत्तर कहेस[5]।
वर[5] सिंधु[6] विधु[7] कनवज्ज राउ[8]।
तिहि[9] चढ़िउ[10] स्वर्ग[11] धुरि[12] धर्म[13] चाउ॥१३॥ २९८

रवि तुम्हइ[1] समुहउ[2] उहइ[3] इह तुम्ह[4] मग्ग समुज्झ।
भुल्लि[5] भट्टि[6] पुव्वहि[7] चल्यो[8] काहि उत्तर कनवज्ज॥१४॥ ३०१

कंचन फूल्यो[1] अर्क वन रतने[2] किरण[3] प्रहार[4]।
उये[5] कलस जइचंद ग्रिह[6] संभरि सिभरिवार[7]॥१५॥ ३०२

[११] १. दयत २. मित ३. इत्त ४. भलमलिग ५. तरु ६. हलिग ७. पत्त ८. देखियत ९. किरनीन १०. उद्दिमहि ११. न्रपति १२. चंद

[१२] १. चित्ति २. मुद्द ३. दुंद ४. पहु ५. कलस ६. दिखि गमन

[१३] १. जानि २. इह ३. अरि ४. नयर ५. हर ६. सिद्ध ७, दिद्ध ८. राव ९. तिन १०. बढ्यौ ११. अंग १२. धर १३. ध्रंम

[१४] १. तंमुह २. संमुह ३. उद्यौ ४. है ५. भूलि ६. भट्ट ७. पुव्वह ८. चलहि

[१५] १. फुलिया २. रतनह ३. किरन ४. प्रसार ५. सुवै ६. घर ७. संभरि वार

भुजंग प्रयात

कहूँ संभरे नाथ थड्ढे[1] गयंदा।
मनो[2] दिक्खियै[3] रूव[4] ऐराव इंदा॥
कहूँ फेरहीं[5] भूप अच्छे तुरंगा।
मनो दिक्खियै[6] वाय वड्ढे कुरंगा॥१६॥ ३०५

कहूं माल[1] भूदंड सजि साह संधै[2]।
कहूं पिक्खि पायक्क बानैत बंधै[3]॥ ३०६

कहूँ विप्र ता उठि[4]ते प्रातु[5] चल्ले।
मनो देवता मग्गते[6] स्वर्ग भुल्ले॥१७॥ ३०७

कहूँ जग्गिजै पुण्य[1] ते राज काजं।
कहूं देव देवाल ते भ्रित्य साजं॥
कहूँ तापसा[3] तापते[4] ध्यान लग्गै[5]।
तिनै[6] देखते[7] रूप संसार भग्गै[8]॥१८॥ ३०८

कहूँ सोड़सा[1] राइ[2] अप्पंत दानं।
कहूँ हेम सम्मान प्रिथ्वी[3] प्रमानं[4]॥
इते चारु चारित्त संवेग[5] तीरे।
तिनै देखते पाप नट्ठै सरीरे॥१९॥ ३१०

[१६] १. थड्ढे २. मनु ३. गिग्गिरै ४. रूप ५. फेरिहिंत ६. प्रच्छतं
[१७] १. मल्ल २. तें रोस साधैं ३. बाधैं ४. उट्ठंत ५. प्रात ६. सेवते
[१८] १. जग्य जापन्न २. भ्रित्यान ३. तापसी ४. तप्प ते ५. लागै
६. तिनं ७. दिख्यिग्रै ८. भागै
[१९] १. षोड़सा २. राय ३. प्रथ्थी ४. समानं ५. चरित ते]गंग

काव्यं

बंभे[1] कंड[2] कमंडले कलिमले[3] कांतिहरः[4] कः कविः[5] ।
तं तुष्टां त्रैलोक्य[6] तुंग गहनी तुं गीयसे[7] सांमवी[8] ।।
अधं विष्णु अगामिनि अविज्ञले अस्टष्ट ज्वालाहवी[9] ।
जंजाले जग मार[10] पार करनी दरसाइ[11] सा जाह्नवी[12] ।।२०।। ३२०

त्रोटक

त्रिप थिक्कति गंगजि अंग सिता ।
मुनि मंजन नीर जि अंग हिता ।।
तट मंडल जा भमरे भमरं ।
भव संगति जे अमरे अमरं ।।२१।।

गुन ग्रंथ्रव ग्रंथ्रव नीति सुनां ।
दिवि भूमि पयालह दिव्व धुनां ।।
तल ताल तमालह साल वटी ।
विचि अंव गंभीर जंभीर वटा ।।२२।।

कल केलि स जंवु स निंबवरा ।
गत पाप स आपस मे सियरा ।।
सुभ वाय तरंग सुरंग धरे ।
उर हार तु मुत्तिय जासु हरै ।।२३।।

दिन दुल्लभ जा वरमं चरनं ।
भइ बंभ कमंडल आभरनं ।।
गिरि तुंग तुखार सदा धरनं ।
नर पाप विमाप न तो सरनं ।।२४।।

---

[२०] १. ब्रह्मा २. कष्प ३. कलिकले ४. कांताहरे ५. कंकवी ६. त्रयलोक ७. संपद पदं तंबाय ८. सहसंनवी ९. अघ काष्टं ज्वलने हुतासन हवी अध विष्णु १०. तार ११. दरसाय १२. जाहंनवी

सुर ईस सु दीस सु सादरनं ।
मिलि अंभसु रंभसु सागरनं ॥
सुभ दुट्ठिय मग्ग जु मग्ग ।
जसु दंसन जंवुयदीप हलं ।
किस मंगन जाथइ पाप मलं ॥२५॥

हर गंगे हर गंगे हर गंगे ।
तमि तरल तरंगे अघ क्रितभंगे क्रितचंगे ॥
हर सिर परसंगे जटन[1] विलंगे अरधंगे ।
गिरि तुंग तरंगे विहरित[2] दंगे जल गंगे ॥२६॥

गन गंध्रव छंदे जग जस[1] चंदे[2] मुख चंदे ।
मति उच गति मंदे वरसत[3] नंदे गत वंदे[4] ।
वपु अप विलसंदे जमभ्रित जंदे कह गंदे ॥२७॥ ३२६

छिति[1] मति उरमालं मुकति[2] विसालं सहसालं[3] ।
सुर नर टट चालं कुसुमति लालं अलिजालं ।
हिम रिम[4] प्रति पालं हरि[5]चर[6]नालं विधिवालं ॥२८॥ ३२७

दरसन रस राजं जय जुग काजं भय भाजं ।
अमरच्छरि[1] करजं[2] चामर वरजं[3] सुव[4] साजं ॥
अमलत्तिन[5] मंजरि निय तन जंजरि चख पंजरि ।
करुणा[6] रस रंजरि नतम[8] पुनंजरि[9] सा संकरि ॥२९॥ ३२८

करिमल[1] हरि मंजन जनहित सज्जन[2] अरिगंजन ॥३०॥ ३२९

---

[२६] १. जटनि २. विहरति

[२७] १. जै जै २. बंदे ३. दरसत ४. दंदे

[२८] १. षिति २. मुगति ३. सद्कालं ४. रिति ५. हर ६. छुर

[२९] १. अंमर छुर २. करिजं ३. वरिजं ४. सुर ५. अंमर तरु ६. करुना ७. मंजरि ८. जनम ९. पुनंगिरि

[३०] कलिमल २. संजन

उभय कमल[1] सोभा[2] भ्रिंग कंठाव[3] लीला।
पुनर पुहप पूजा वंदते विप्रराज[4]॥
उरिल मुतिय हारं सब्द घंटी ति वंब[5]।
मुकति मुकति भारं[6] नंग रंग त्रिवल्ली[7]॥३१॥ ३२४

चन्द्रायणी

दिख्खिय[1] नयर[2] सुभाइ[3] न कवियन यूं[4] कहइ[5]।
है मनु अच्छि पुरंदर इंदुज इह रहइ॥
चख चंचल तन सुद्धि[6] ति सिद्धिहु[7] मनु हरिह[8]।
कंचन करस[9] झकोलति[10] गंगह जलु भरहि[11]।३२॥ ३३५

नाराच छन्द

भरन्ति नीर सुंदरी ति पान[1] पत्त अंगुरी।
कनंक[2] बक्क[3] जज्जुरी[4] ति लग्गि कड्ढि[5] जे हरी॥३३॥ ३३९

सहज्ज[1] सोभ पंडुरी[2] जु मीन[3] चित्र हो भरी।
सकोल लोज[4] जंघया ति लीन[5] कच्छ रंभया॥३४॥ ३४०

करिब्ब[1] सोभ सेसरी[2] मनो[3] जुवान[4] केसरी।
अनेक[5] छब्बि छत्तिया[6] कहूँ तु[7] चंद रत्तिया[8]॥३५॥ ३४१

[३१] १. कनक २. सिंभं ३. कंठोव ४. विप्रत्रे कामराजं ५. त्रिवलिय गंग धारा मद्धि घंटीव सब्दा ६. भीरे ७. त्रिवेनी
[३२] १. दिख्यौ २. नगर ३. सुहावो ४. इह ५. कहै ६. सुद्ध ७. सिद्धति ८. हरै ९. कलस १०. झकोरति ११. भरै
[३३] १. सु पांनि २. कनक्क ३. बंक ४. जे जुरी ५. कढ़ि
[३४] १. सुभाव २. पिंडुरी ३. मीन ४. लोल ५. सुनीज
[३५] १. कटिंत २. संसुरी ३. बनी ४. बांन ५. अनंग ६. छुत्तियां ७. कहंत ८. बत्तियां

दुराइ कुच्च उच्छरे[1] मनो अनंग ही भरे।
हरंत[2] हार सोहए विचित्र चित्त मोहए ॥३६॥ ३४२

उठंति[1] हत्थ अंचलं[2] रुरंति[3] मुत्ति सुज्जलं[4]।
कपोल उच्च[5] उज्जले लहंति[6] मोल सिंघले ॥३७॥ ३४३

अधर[1] अद्ध रत्तए सुकील[2] कीर वद्धए[3]।
सोहंत[4] दंत आलमी[5] कहंत बीय दालमी[6] ॥३८॥ ३४४

गहग्ग[1] कंठ नासिका विनान[2] राग सासिका।
सुभाइ मुत्ति सोहए[3] दुभाइ[4] गंज लग्गए[5] ॥३९॥ ३४५

दुराइ[1] कोइ[2] लोचने प्रतक्ख काम मोचने।
अवद्ध ओर[3] भौंह ही[4] चलंत सोह[5] सोहही[6] ॥४०॥ ३४६

लिलाट लाट[1] लग्गए[2] सरद चंदु लग्गए[3] ॥४१॥ ३४७

दूहा

ढिल्लिय[1] जुहि[2] अलकै[3] लता स्रवन[4] सुनै[5] चहुवान।
मनु भुवंग साम्हो चढ़ै कंचन खंभ प्रमान ॥४२॥ ३४८

रहहि[1] चंद मम कव्व[2] करि करहि त कव्व[3] विचार।
जि[4] तुम नयरि[5] सुंदरि कही सवि[6] दीठी[7] पनिहार[8] ॥४३॥ ३५०

---

[३६] १. उभरे २. रुलंत
[३७] १. उठंत २. अंचले ३. रुलंति ४. सज्जले ५. लोल ६. लहंत
[३८] १. अरद्ध २. सुक्रील ३. वत्तए ४. सुहंत ५, आलिमी ६. दालिमी
[३९] १. गहंग २. बिनाग ३. सोभए ४. दुभाय ५. लोभए
[४०] १. दुराय २. कोय ३ ओट ४. ए ५. सोह ६ ए
[४१] १. राज २. आड़ए ३. लाजए
[४२] १. ढिल्ली २. सुह ३. अलि की ४. श्रवन ५. सुनहु ४. चहुआन
[४३] १. रहि रहि २. गव्व ३. कवित्त ४. जे ५. नयरि ६. सह ७. दिष्यिय ८. पनिहारि

जांह नदी[१] तट पिक्खियहि[२] रूव[३] रासि वें[४] दासि।
नगर ति[५] नागर नर घरनि रहहिं अवासि[६] अवासि[६] ॥४४॥ ३५२

दंसन[१] दिनयर दुल्लही[२] निय मंडन भरतार।
सहु[३] कारन विहि निम्मर्यो[४] दुह कत्तिज[५] करतार ॥४५॥ ३५३

कुवलय रवि लज्जा रहनि[१] रहि भजि[२] भंग[३] सरन्नि।
सरसइ[४] सुध[५] वरनन[६] कियो दुल्लह तरुन तरन्नि[७] ॥४६॥ ३५५

छंद

पुनरजन्म[१] जेते[२] जानि जग्गं[३]।
मोहिन्नि[४] लें मुत्ति[५] वानी।
मनो धार आहार कहं[६] दुद्ध[७] तानी[८] ॥४७॥ ३५८

तिलक[१] नग[२] निरखि[३] जगि जोति जग्गी।
मनो रोहिनी रूव[४] उर इंदु[५] लग्गी॥
रूप[६] भुव[७] देखि अवरेख ढग्ग्यो[८]।
मनो काम करि चंपि[९] उडि अप्पु लग्ग्यो ॥४८॥ ३५९

पंगुरे अैन ते नैन[१] दीसं।
विचे[२] जोति सारंग निर्वात रीसं[३]॥
तेज ताटंक[४] ता[५] स्रवन[६] डोलं।
मनो अर्क राका उदै अस्त लोलं ॥४९॥ ३६०

---

[४४] १. जाहनवी २. दरस ३. रूप ४. ते ५. सु ६. अवास
[४५] १. दरसन २. दुलह ३. सुह ४. निरमई ५. कत्तरि
[४६] १. रहसि २. भगि ३. अंग ४. सरसि ५. बुद्धि ६. वृंनन ७. तरुन्न
[४७] १. पुनर्जन्म २. [रहे] ३. जग्गे ४. मोहन्न ५. मोती ६. कै ७. दूध ८. तांनी
[४८] १. तिलक्कं २. नगं ३. देखि ४. रूप ५. इंद ६. रुअं ७. भुअं ८. जग्यौ ९. चापं
[४९] १. नयंनं २. मनों ३. रीसं ४. त्राटंक ५. ते ६. श्रोन

जलद[१] जंभीर भइ[२] मध्य[३] जोलं[४]।
दिव्य दरसी[५] तिहां ढील बोलं॥ ३६१
अधर आरत्त तारत्त साई[६]।
चंद विय बीय[७] अरुनै बनाई॥५०॥ ३६२

कपोलं कलंगी[१] कलिंदीव सोहं।
अलक्कं[२] अरोहं प्रवाहे खिमोहं॥
सिता[३] स्वाति छुट्टै[४] जितेहार भारं।
उभै ईस सीसं मनो गंग धारं॥५१॥ ३६३

करं कोक नंदं न[१] कंचू समज्झं[२]।
मनो तित्थराया त्रिवल्ली अलुज्झं॥
उप्पमे[३] पानि अंगून[४] लब्भं।
लज्जि[५] दुर[६] केलि कुज्ज मज्झ गब्भं॥५२॥ ३६४

नखं निम्मलं[१] दप्पनं[२] भाव दीसं।
समीपं समीवं[३] कियं मान रीसं॥ ३६८
नितंबं उतंगं जुरे बे गयंदं।
मध्य[४] रिपु खीन[५] रक्खयो मयंदं॥५३॥ ३६५

सक्कि[१] सोवन्न मोहन्न[२] थंभं।
सीत उसनेह[३] रितु दोख रंभं॥
नारंग रंगीय[४] पींडी छछोरी।
कनक कुंडीनु[५] कुकुम्म[६] लोरी॥५४॥ ३६६

[५०] १. उरज्जं २. भई ३ मज्झ ४. झोलं ५. दर्शा ६. सांई ७. बिंब
[५१] १. कलागी २. अलक्कं ३. सितं ४. बुंदं
[५२] १. ति २. सनुज्झं ३. ओपमा ४. आनंन ५. लाजि ६. दुरि
[५३] १. त्रिम्मलं २. द्रप्पनं ३. सुगीवं ४. मज्झ ५. छीन
[५४] १. वन्न २. सोहन्न ३. उसनेव ४. निरंगो ५. कुंदोरु ६. कुंकुंम

रोहि[1] आरोहि[2] मंजीर सद्दे[3]।
मंद म्रिदु तेज प्राकार[4] वद्दे ॥ ३६७
एडि इम आडंबर[5] स्रोन वावी।
फिरै कच्च रत्तीन मुद्दरत[6] पानी ॥५५॥ ३६८

अंबरं[1] रत्त नीलं सु[2] पीतं।
मनो पावसे[3] धनुख[4] सुरपत्ति कीतं ॥
सुकीवं समीपं[5] न वे[6] सामि जानं।
पंग रवि दरिस अरविंद[7] मानं ॥५६॥ ३६९

दूहा

हय गय दल सुंदर[1] सुहर[2] जे[3] वरनह[4] बहुवारि[5]।
यह[6] चरित्त[7] कब[8] लगि गिनै[9] चलउ[10] संदेह[11] दुवार[12] ॥५७॥ ४४६

छन्द जाति

दिख्खियं[1] जाइ[2] संदेह सोहं[3]।
अर्क सा कोटि संपुन्न[4] दोहं ॥
मंडपै[5] जासु सोवन्न[6] गेहं।
मुत्तियं छित्त[8] दीसै न छेहं ॥५८॥ ३८८

[५५] १. रोह २. आरोह ३. वादे ४. परंकार ५. डंबरं ६. में रत्त

[५६] १. अम्मरं २. त ३. पावसे ४. धनुक ५. समीपं ६. सियं ७. अरव्यंद

[५७] १. सुंदरि २. सहर ३. जं ४. बरनों ५. वार ६. इह ७. चरित्र ८. कहँ ९. कहूँ १०. चलि ११. पहुपंग १२. दुआर

[५८] १. दिष्यियै २. जासु ३. सेहं ४. सापुन्न ५. देहं ६. मंडपै ७. सोवन्न ८. छत्र

स्रोन सत एक महि महिख रत्ती।
प्रात पूजंत नर नय[१] अत्ती॥
पंड भारत्थ विहु[२] वार[३] साजी।
दिख्ख[४] चहुवान कलिकार[५] गाजी॥५९॥ ३६१

तैनु[१] आकास साभो विराजैं[२]
होइ जयपत्त[३] प्रिथिराज[४] राजं॥
दच्छिनै[५] अंग करि नमस्कार[६]।
मध्य ता नयर[७] काजइ[८] विचारं॥६०॥ ३६४

भुजंगी

जे[१] लंगरी जूथ[२] तिनि[३] कै प्रसंगा।
दे[४] दिख्खिजहि[५] कोटि कोपीन नंगा॥
जे[६] जूप के......सू चोप बारी[७]।
तिके[८] उच्चरे सोह अन्नोन्न[९] पारी॥६१॥ ४२५

जकै[१] सारि[२] संभारि खोलंत[३] लख्खे।
तिके[४] दिख्खिये भूप दानिव्व[५] पख्खे॥
जिके[६] छैलु सुघट्ट[७] वेस्या सुरत्ते।
तिके[८] दव्व[९] के हीन हीनेति[१०] गत्ते॥६२॥ ४२६

[५९] १. अनेम २. विय ३. वैर ४. देपि ५. किलकारि
[६०] १. वैन २. ताज ३. जंपत्त ४. प्रथिराज ५. दच्छिनं ६. नमसकारं ७. नैर ८. कीजै
[६१] १. जिते २. रूप ३. दिन ४. तिते ५. दिष्षियै ६. जिते ७. आरी ८. तिते ९. आनंन
[६२] १. जिते २. साधु ३. खेलंत ४. तिते ५. दामंत ६. जिते ७. संघाट ८. तिते ९. द्रव्य १०. हीनंत

जिके[1] पासि के[2] रासि[3] लग्गे सुरूपा ।
मनो मीन चाहंति[4] वग मध्य दूपा ॥
नायिका दिख्खि नर नैन डुल्लै ।
एह सुर[5]लोक मन[6] इंदु भुल्लै[7] ॥६३॥ ४२७

उच्चरे वैन निस[1] के उजग्गे ।
मनो कोकला भाख संगीत लग्गे[3] ॥
उडु[4] अव्वीर सिजा[5] सवारे[6] ।
मनो होइ वासंत भूपाल बारे[7] ॥६४॥ ४२८

कुसुम[1] सा[2] चीर सा[3] कीर सोभा ।
मध्यता काम कंदलि[4] सुशोभा ॥
राग छत्रीस[5] कंठै[6] करंति[7] ।
वीन वाजित्र[8] हाथे[9] धरंति[10] ॥६५॥ ४२९

दिक्खि[1] अभिमान[2] मिरगी[3] ठुक्की ।
मनो मेनका त्रित्त[4]ते तार[5] चुक्की ॥
वर्णंते[6] भाइ[7] लग्गे ति सारे ।
पट्टने[8] गेह[9] दिख्खे सवारे ॥६६॥ ४३०

नाराच

जु[1] लाखु[2] लाखु द्रव्य[3] जासु नित्त[4] इंद[5] उट्ठयइ[6]
अनेक राइ जासु भाइ आवि[7] आवि[7] विट्ठयइ[8] ॥

---

[६३] १. जिते २. कै ३. त्रास ४. चाहंत ५. सुरह ६. सुरं ७. दिष्पि
[६४] १. निसि २. उजग्गी ३. लग्गी ४. उड़े ५. सेज्जा ६. समारे ७. द्वारे
[६५] १. कुसुम्मं २. समं ३. सं ४. कदली ५. छत्तीस ६. कंठं ७. करंतो ८. बाजित्र ९. हथ्थे १०. धरंती
[६६] १. देषि २. असमान ३. म्रग्गी ४. नृत्य ५. ताल ६. वरन्नंत ७. भावं ८. पट्टनं ९. ग्रेह
[६७] १. सु २. लाष ३. द्रव्य ४. नित्य ५. एक ६. उट्ठवै ७. आय ८. विट्ठवै

सुगंध नारि[९] सार[१०] मान सा मृदंग सुब्भवइ[११]।
दच्छिर्नी[१२] समस्त रूव[१३] स्याम अंग[१४] लुब्भवइ[१५] ॥६७॥ ४३२

जि[१] चंद[२] चार[३] धूव[४] देस सेस कंठि[५] गावही।
उपंग वीन तासु चालि[६] वालिता[७] बजावही॥
गमन्न[८] तेय[९] अंग[१०] रंग रंग ए परच्चए।
वीर साउ ओड[११] अंग पख्खि[१२] पत्त[१३] नच्चए॥६८॥ ४३३

सबद्ध[१] सोभ[२] उद्धरे[३] ति[४] त्रिति[५] का वखानए[६]।
नरिंद इंद इत्त[७] कोरि इंद जानए[८]॥६९॥ ४३४

दूहा

अगम हट्ट पट्टन नयर रतन[१] मोति[२] मनियार[३]।
हाटक पट धनु[४] धातु[५] सहु[६] तुछ तुछ दिक्खि सवार॥७०॥ ४३५

मोतीदाम छंद

अमग्गति हट्टति पट्टन मंझ।
मानो[१] द्रिग[२] है[३] फुल्लिय[४] संझ॥
जु नख्खहि मोरित मोर सुढार[५]।
उलिंचि[६] ज[७] कीच सु[८] होइ[९] अगार[१०]॥७१॥ ४३६

९. तार १०. काल ११. सुम्भवै १२. दच्छिनं १३. रूप १४. काम १५. लुम्भवै

[६८] १. सु २. छंद ३. चारु ४. धुवक ५. कंठ ६. पानि ७. वालते ८. गमन्नि ९. ते १०. अनंग ११. अरद्ध १२. पक्खि १३. पात्र

[६९] १. सबद्द २. सुम्भ ३. उच्चरें ४. सु ५. किति ६. बखानिए ७. इत्तनेसु ८. जानिए

[७०] १. रत्न २. मुत्ति ३. मनिहार ४. धन ५. धात ६. सह

[७१] १. मनो २. द्रग ३. देवल ४. फूलिय ५. ठार ६. उलिंच ७. त ८. कि ९. पीक १०. उगार

सुमालय[1] पहुप[2] द्र[3]वे[4] दल चंप।
सुसीत समीर मनो हिय[5] कंप॥
बेलि सेवंतिय गुंथिय[6] जाइ।
दये[7] द्रवु[8] दासी[9] लेहि ढहाइ॥७२॥ ४३७

सुनुद्धि[1] वजाज जु[2] वंचहि[3] सार।
छुवंति[4] न वासर सुज्झहि[5] तार॥ ४३८
जु[6] दिक्खिहि[7] नारि स कुंज पटोर।
मनो दुज देखि न[8] लग्गहि[9] चोर[10]॥७३॥ ४३९

जु[1] मुत्ति[2] जराउ[3] मढ़े बहु भाइ।
सु[4] फट्टहि[5] कीर[6] कहे[7] सुन[8] गाइ॥
जु[9] ले तनु सुक्खु अपुव्व सु साजु[10]।
सु[11] सेजु सुगंध रहै लपटाइ[12]॥७४॥ ४४०
लहल्लक[1] तानुक[2] तान[3] सिपाम[4]।
विने[5] त्रिय दिक्खिय[6] पूरन काम[7]॥
जराउ[8] जरंत कनंक[9] कसंत।
मनो भय वासर जामिनि[10] अंत॥७५॥ ४४१
कसिकसि हेमहि[1] कड्ढहि[2] तार।
उवंति[3] दिनेसहि[4] कर्न[5] प्रकार॥

---

[७२] १. मिलै २. पद्द ३. पद ४. वेदल ५. हिम ६. गुंथहि ७. दियै ८. द्रव ९. दासि

[७३] १. सुबुद्धि २. सु ३. बेचहि ४. छुवंत ५. सूझहि ६. ति ७. देषहि ८. दष्षन ९. लागहि १०. थोर

[७४] १. सु २. मोति ३. जराइ ४. जु ५. कट्टहि ६. कंरि ७. कहै ८. सुनि ९. सु १०. रहै अपनाइ ११. सु १२. पलटाइ

[७५] १. लहंलह २. तानक ३. तानति ४. वाम ५. बनी ६. दीसहि ७. कामभिराम ८. जराउ ९. कनक्क १०. जामिन

[७६] १. हेम सु २. कादहि ३. उगंत ४. कि हंसह ५. कन्न

करि क्करि[६] कंकन अंकन[७] लोभ[८]।
मनो दुज-हीन सरद्दहि सोभ[९] ॥७६॥ ४४२

जरे जुव[१] नग्ग[२] प्रकार ति लाल।
मनो ससि मज्झहि[३] तार विसाल ॥ ४४२
तुलंतु[४] ज तुंज तराजन[५] जोप।
मनो घन मज्झि[६] तडित्तह ओप ॥७७॥ ४४३

जरे जुय[१] नग्ग[२] सुरंग सुघाट[३]।
ति सुंदरि सोह पुवावहि[४] घाट[५] ॥
दु अंगुलि नार[६] निरख्खहि हीर।
मनो फल विंबह[७] चंपति[८] कीर ॥७८॥ ४४४

नखंनख चाहिति[१] मुत्ति[२] न अंसु[३]।
मनो भख छंडि गह्यो[४] रहि[५] हंसु[६] ॥
दह[७] द्दिसि[८] देखि[९] हयग्गय भार।
जु[१०] दिख्खत[११] चंद गयो दरबार ॥७९॥ ४४५

दूहा

भाखन[१] भाख सु मिल्लहि[२] सि[३] देइ[४] सिसिर वन[५] इंद।
रथ न वै न वि रस्स अरु[६] जोध सुपंग नरिंद ॥८०॥ ४५८

---

६. करंकर ७. अंकह ७. जोव ९. सोव

[७७] १. जिव २. प्रान ३. सभ्भझहि ४. रुलंत ५. जुपंतत राजन ६. मद्धि

[७८] १. जिव २. नंग ३. सुघाटि ४. उवावति ५! पाट ६. जोर
७. विवंहि ८. चंपहि

[७९] १. चाहति २. मुत्तिय ३. अंस ४. रह्यो ५. गहि ६. हंस
७. दसो ८. दिसि ९. पूरि १०. सु ११. पुच्छत

[८०] १. भाषनि २. मिलिय ३. दिसि ४. दई ५. वनि ६. नव नव रस
अरु सघन सघ ।

निसि नौबति पल[1] प्रात मिलि हय गय दिख्ख्यो[2] साज।
बिरचि[3] सुहरु[4] करिवरु[5] गह्यो[6] किनहि कह्यो[7] प्रिथिराज ॥८१॥ ४०६

कहे[1] चंद दंदु[2] न करहु रे सामंत कुमार।
तिन्नि[3] लख्ख निसि दिन रहंहि[4] इह जैचंद दुआर ॥८२॥ ४६१

मुडिल्ल

पुच्छन[1] चन्द गयो[2] दरबारह।
हेजम जह[3] रघुबंस–कुमारह॥
जिहि हर[4] सिद्धि सदा[5] वरु[6] पायो।
सो[8] कविराज[9] ढिल्ली[10] हुंति[11] आयो[12] ॥८३॥ ४६४

दूहा

सुनित[1] हेत हेजम उठित[2] दिखत चंद बरदाइ।
त्रिप[3] अग्गे[4] गुदरन गयो[5] जिह[6] पंगुर[7] त्रिप[8] आहि॥८४॥ ४७८

वस्तु

तब सु हेजम तबसु हेजम जंति करि जोड़ि[1]।
सीसु नाइ दस वार सेन[2] छत्तपति[3] ····· ॥
सकल बंध संधन[4] नयन चकित चित्त दिसि दिस गरुट्टो[5]।
तब सु कियो[6] परनाम तिहि वरु[7] करि तिहि[8] प्रतिहार :
जिहि प्रसन्न सरसइ[9] कहहि[10] सु कवि चंद दरबार ॥८५॥ ४८२

[८१] १. मिलि २. देषिय ३. विचरि ४. सुभर ५. करिवर ६. गहिउ ७. कहिय
[८२] १. कहहि २. दंद ३. तीन ४. रहै
[८३] १. पुच्छत २. गयौ ३. जहाँ ४. हरि ५. पास ६. वर ७. पायौ ८. सु ९. कविचंद १०. दिल्लिय ११. तैं १२. आयौ
[८४] १. सुनत २. उठिग ३. न्रप ४. आगे ५. गयौ ६. जहाँ ७. पंगु ८. न्रप
[८५] १. जोरि २. सेत ३. छत्रपति ४. सथ्थन ५. गरिट्ठौ ६. कियौ ७. वर ८. राय ६. ९. सरसति १०. कहै

चन्द्रायणो

आइस[1] जो गुनियन तन चाह्यो[2]।
तीन[3] प्रनाम[4] करिउ[5] सिर नायो[6]॥
किधौं[7] डींभ[8] कवि कव्व प्रमानिय[9]।
सरसइ[10] कव उच्चारहि[11] जानिय[12] ॥८६॥ ४९०

अडिल्ल

ति कवि आइ[1] कवियहि[2] संपत्तो।
नव-रस भाख ज पुच्छन[3] तत्तो॥
कवि अनेक वहु बुधि गुन रत्तो।
कहि न एक कत्रि चन्द समत्ते ॥८७॥ ४६८

षट् भाषा काव्यं

अंभोरुहमानंद जोइ[1] लरि सो दाडिम्म लो बीय लो।
लोयंदे चलु चालु आरु कलऊ विंबाय कीयो गहो॥
के[1] सीरी के[2] साहि[3] वे यन[4] रसो विक्किस[5]की नागवी।
इंदो मध्य सु विद्यमान विहना ए षष्ठ भासा छंदो ॥८८॥ ५०४

ते[1] कवि आइ[2] कवियहि संपत्तउ[3]।
गुण[4] व्याकरण[5] करहि रस रत्तंउ॥
थकि प्रवाह गंगमुख मंती[6]।
सुर नर स्रवण मंडि रहि[7] चंती[8] ॥८६॥ ४६७

[८६] १. आयस २. चाह्यो ३. तिन ४. परनाम ५. कियो ६. नायो ७. कैधौं ८. डिभ ९. परवानिय १०. सरसैं ११. उच्चारहु १२. बानी

[८७] १. आय २. पहि ३. पुच्छहि

[८८] १. लोइ २. कै ३. साइ ४. वैनिय ५. चीकीमि

[८९] १. ति २. आय ३. पहि ४. संपत्ते ५. गुरु ६. व्याक्रंन ७. सरसत्ती ८. रहै ९. बत्ती

गुन उच्चार चारि[1] तव[2] किन्हो[3]।
जउ[4] भूखै[5] सक्कर पय दिन्हो[6]॥
कवि देखत कवि को मन रत्तउ[7]।
न्याइ[8] नयरि[9] कनवज्जि सपुत्तउ[10] ॥९०॥ ५०५

कवि अंगह[1] अंगीकित हीना[2]।
हेम विभा [सिंघासन दीना][3]॥
अहो चन्द वरदायि कहूं हूँ[4]।
कनवज्जह दिख्खन आय हूँ ॥९१॥ ५१३

जे सरसइ[1] जवनहुं[2] त्रिप संचउ[3]।
गजपति गरुव गेह[4] किमि गंजहु॥
किनि गुनि पंगुराइ मन रंजहु ॥९२॥
जो सरसइ जानहु वर रंचउ[1]।
तो अद्रिस्ट[2] वर नहि त्रिप संचउ[3] ॥९३॥ ५१०

कवितु

सघन पत्त घन थट्ट बेलि पसरी प्रवाल वर।
तहां कमल उन्नयो मूल बिन रह्यो फुल्ल धर॥
कंदल थंभ तिह अहहि सिंघ तिहि रह्यो मंडि घरि।
तिहि गज संक न करइ निरखि रिखि रहि उटंकि अरि॥
जैचंद राय सुज्जान गिरि राठोर राय गुन जानि है।
कीर चुनहि मुगताफलहि इह अप्पुव्व को मानिहै ॥९४॥

[९०] १. चार २. तन ३. कीनौ ४. जनु ५. भुष्वै ६. दीनौ ७. रत्तौ
८. न्याय ९. नयर १०. संपत्तौ
[९१] १. एकह २. कीनौ ३. दीनौ ४. कहावहु ५. आवहु
[९२] १. सरसइ २. जानौ ३. चाव ४. ग्रेह ५. मन
[९३] १. रंचौ २. अदिष्ट ३. संचौ

काव्य

किं सांस[1] चुवरेण[2] सेतुस तुसा[3] किं किं त अंदोलिता।
वाला अर्क समान जामतेज अमीलि मोलिता॥
शस्त्रे शास्त्र समस्त खत्त[4] ढह्यिं सिंधू प्रजा ती[5] खलं।
कंठे हारु रुलंति आतिकि[6] समै[7] प्रिथिराज हालाहलं ॥९५॥ ५२४

दूहा

छत्र सरद[1] जवजन बहुल महल वंस विधि नंद।
सत[2] सहस्त्र[3] संखध्वनिअ[4] महल थानि जयचंद ॥९६॥ ५२७
मंगल बुध गुरु सुक्र सनि[1] सकल सूर उड़ दिट्ठ।
आठ[2] पत्त धुव[3] तम[4] तिमइ[5] सुभ जइचंद[6] वइट्ठ ॥९७॥ ५४६

पद्धरि

आसने[1] सूर वड्ढे[2] सनाहं।
जीति छिति राइ किय नासुराहं॥
धम्म[4] दिगपाल धर धरनि खंडं।
धरहि सिर सोभ दुति कनक दंडं ॥९८॥ ५७१
जिनै सज्जिगे[1] सिंधु गाही[2] सुपंगं[3]।
तिमिर तजि तेजु भंज्यो[4] कुरंगं[5]॥
जिने हेम परवत्त ते सवे[6] ढाहे।
एक दिन आठ[7] सुरतान साहे ॥९९॥ ५७२

---

[९५] १. सीसं २. चमरायते ३. सित छ्तं ४. षित्रि ५. प्रयातं ६. आनक ७. समं
[९६] १. सहस २. एक ३. सहस ४. संषहधनी
[९७] १. सवि २. आत ३. धुअ ४. जिम ५. तपै ६. जयचंद
[९८] १. आसनैं २. ठट्ठे ३. एक ४. ध्रम्म ५. धरै
[९९] १. साजतैं २. गाहें ३. सुपंगा ४. भाजै ५. कुरंगा ६. सव्व ७ अट्ठ

जंपियो[1] संच जो चंद[2] चंडं ।
थप्पियं जाइ तिरहुत्ति[3] पिंडं ॥
दच्छिनी देस अप्पो[4] विचारं[5] ।
उत्तरयो सेत वंधे[6] पहारं ॥१००॥ ५७३

कर्न डाहाल दुहुं[1] बान बंध्यो[2] ।
सिंधु चालुक्क कै[3] वार खेध्यो ॥
तीन दिन जुद्ध भरि [भूमि][4] रुडं ।
तोरि ठिल्लंग[5] गोवल्ल[6] कुंड ॥१०१॥ ५७४

छंडियो बंधि इक गुंड जीरा ।
लिये[1] वैरा गिरि[2] सव्व हीरा ॥
गाजनै[3] सूर साहाब साही ।
सेवते बंध निसुरत्त पाई[4] ॥१०२॥ ५७५

भूलि भल्लि[1] छने[2] जाइ[3] रोरे ।
रोस कै सास[4] दरिया हिलोरे ॥
बंधि खुरसान किय मीर वंदा ।
राव[5] राठोर विजपाल नंदा ॥१०३॥ ५७६

वंस छत्तीस आवै[1] हकारे ।
एक चहुवान प्रिथिराज[2] टारे ॥१०४॥ ५७७

दूहा

सुनि[1] न्रिपति[2] रिपु कै[3] सबद तामस[4] नयन सुरत्त ।
दरि[5] दलिद्द[6] मंगन मुखह[7] को मेट्टै[8] विधि पत्त ॥१०५॥ ५७८

---

[१००] १. जंपियं २. चंद ३. तिरहूत ४. अप्पै ५. विचारै ६. बंधं
[१०१] १. दुअ २. बेध्यौ ३. कय ४. भूमि ५. तिल्लंग ६. गोवाल
[१०२] १. लिद्ध २. वैरागरें ३. गज्जने ४ माहीं
[१०३] १. भष्षी २. षनं ३. जोब ४. सोस ५. राय
[१०४] १. आवैं २. षुंमान
[१०५] १. सुनत २. न्रपति ३. कौ ४ तन मन ५. दिय ६. दरिद्र ७. घरह ८. मेटै

आदरु किउ[1] न्रिप तास को कह्यो चंद कवि आउ।
दिल्लीपति जिहि विधि रहइ सु वत कहे समुझाउ ॥१०६॥ ६४८

कितकु सूर संभरधनी कितकु देस दल बंध।
कितोकु[1] रन हथ[2] अग्गलउ[3] पुच्छइ[4] राउ सुचंद ॥१०७॥ ६४८

सूर जिसो गयनह उवै दल बल मरनां[1] आसि।
जब लगि अरि न्रिप वज्जवै[2] तब लगि देइ[3] पंचास ॥१०८॥ ६५०

मुकुट बंध सब भूप है लच्छिन सर्व[1] सुजुत्त[2]।
वरन वइ[3] उ इनिहरि[4] इह[5] ज्यूं चहुवान संउत्त ॥१०९॥ ६५३

कवितु

लच्छन सहित बत्तीस वरस छत्रीस[1] मास छह।
इन दुज्जन संग्रहे[2] राहु जिम चंद सूर गह ॥
उव[3] छुट्टे महि दान दुजन छुट्टे ति दंड वहि[4]।
इक्क[5] गहहि गिरि कंद इक्क[6] अनुसरहिं चरन गहि[5] ॥
चहुंवान चतुर चहुं दिसहि[7] बलि हिंदुवान सब हत्थ जिहि।
इम जंपइ चंदु वरद्दिया प्रिथीराज अनुहार[8] इहि ॥११०॥ ६५५

दूहा

दिक्खिय वाइ तु थिर नयन करि कनवज्ज नरिंद।
नयन नयन वंकुरि[1] परइ[2] मनु [थह दोइ][3] मइंद ॥१११॥ ६५७

---

[१०६] १. किय २. कहिग
[१०७] १. कितक २. हथ्थ ३. अग्गरौ ४. बूझ्यौ
[१०८] १. मारन २. उट्ठवै ३. देय
[१०९] १. सब २. संजुत्त ३. कौन ४. उनहार ५. कहि
[११०] १. छत्तीस २. संग्रहत ३. एक ४. भर ५. एक ६. परि ७. चावद्दिसहि ८. अनुहारि
[१११] अंकुरि २ परिय ३. थह दोइ

बे[1] त्रियन पुरख[2] रस परस बिनु उठिग राय[3] सुरिसान[4]।
धवलग्रिह[5] त्रिय अनुसरिग रिपु मग्गन सूं पान ॥११२॥ ६८७

दूहा

....अत्थ[1]।
छह सुंदरि एकइ समइ चली सुगंधनि कत्थ ॥११३॥ ६९०

दूहा

ता रनवास की दासी सुगंधादिक घनसार म्रिगमद ।
हेम-संपुट सुरलोक वहु चलि अच्छरी समान ॥११४॥ ६९१

नाराच छंद उलाला जाति

विहंग भंग जा[1] पुरा[2] चलंति[3] सोभ नूपुरा[4]।
अनेक भंति सादुरं असाढ सोर दादुरं ॥११५॥ ६९२

सुधा समान मुक्कही उठंति तिंदु संमुही।
नितंब तुंग स्याम के मनो सयन्न काम के ॥११६॥ ६९३

लवन्न भ्रिंग गुंजही सुगंध गंध हत्थही[1]।
वपंति डोर कंकने.............................। ॥११७॥६९६

[धनुक्क भौंह अंकुरे .....] मनो नयन्न बंकुरे।
श्रवन्न मुत्ति तारए अलक्क डंक[1] आरए ॥११८॥ ७११

सबद्द सोब[1] जो खुले रहित्त[2] लज्ज कोकिले।
अनेक वर्न[3] जो कहे ते जम्म अंत मो[4]लहे ॥११९॥ ७?२

[११२] १. जे २. पुरिष ३. राइ ४. निसान ५. ग्रह

[११३] १. तिन कह अथ्थि सु हथ्थ किय जे राजन ग्रह अच्छि।

[११४] दोहा।

[११५] १. जो २. पुरं ३. चलंत ४. नूपुरं

[११७] १. पुंजही

[११८] १. बंक

[११९] १. सोभ २. रहंत ३. वृन्न ४. ना

अडिल्ल

चाहुवान[१] दासिय रिसि[२] कंपिय[३]।
पुर राठोर[४] रहइ[५] दिसि नंखिय ॥
विजर[६] वासु पुरिखन कहि अंखिय[७]।
प्रिथीराज देखत सिर ढंकिय ॥१२०॥ ७१४

दूहा

भय[१] चकि भूप अनूप सह पुरख जु कहि प्रिथिराज।
सुमनु[२] भट्ट सत्थह अछै जिह[३] करंति त्रिय[४] लाज ॥१२१॥ ७१७
एक कहिय[१] विट्ठिय[२] सुभट इह न सत्थि प्रिथिराज।
इनि.............................. जिह करंति त्रिय लाज ॥१२२॥ ७२२
अप्पिग[१] पानु समानु[२] करि नहि रक्खूं कवि तोहि[३]।
जु कुछु[४] इच्छ करि मंगिहइ[५] कल्लि समप्पूं तोहि[६] ॥१२३॥ ७२३
हक्कारिउ रखत[१] त्रिपति कुंकुम कलस सुवास।
पच्छिम दिसि जैचंद पुर तिहि रक्खहु तिय वास ॥१२४॥ ७२४
आइस[१] राइन[२] सत्थ चलि असी[३] सहस[४] भर[५]सत्थ।
भिर भुम्मिहि तिल्लन कहइ[६] मेर तरिअ मुनि वत्थ ॥१२५॥ ७२५
सकल सूर सावंत[१] घन मधि कविता किय चंदु।
प्रिथीराज सिंघासनहि[२] पुर रप[३] ऊयो इंदु ॥१२६॥ ७६०

[१२०] १. चहुआनह २. सिर ३. कंपिय ४. रट्ठोर ५. रही ६. विगर ७.अंकिय
[१२१] १. भैं २. सुमति ३. जिहि ४. तिय
[१२२] १. कहै २. बैटै
[१२३] १. अप्प २. सनमान ३. गोय ४. कछु ५. मंगिहौ ६. सोय
[१२४] १. रावन
[१२५] १. आयस २. रावन ३. अयुत ४. एक ५. भट ६. अग्ग राह सो संचरै
[१२६] १. सामंत २. सिंघासनह ३. पूरिपूरन

भयत[1] निसा दिसि मुदित वनु उड़ त्रिप[2] तेज विराज ।
कथिक[3] सत्य कथहिं[4]त कथा सुक्ख सयन प्रिथिराज ॥१२७॥ ८२४

दूहा

म्रिदु म्रिदंग धुनि संचरिय अलिय अलाप सुध विंद[1] ।
तार[2] त्रिगामउ[3] पसर सुर अउसर[4] पंग नरिंद ॥१२८॥ ८३२
जलन[1] दीप दिय अगर रस फिरि घनसार तमोर ।
जमिनि[2] कपट अन महिल[3] मुख सरद अब्भ ससि कोर ॥१२९॥ ८३४
तत्तु[1] धरम्मह मत्तु[2] जा[3] हर त[4] ह काम सु त्रित्तु[5] ।
काम विरुद्ध न विधि[6] कियो[7] नित्त[8] नितंबिनि नित्तु ॥१३०॥ ८३५
पुप्फंजलि[1] सिरि मंडि प्रभु गुरु लग्गी फिरि वाइ ।
तरुनि तार सुर धरिय चित धरिनि[2] निरक्खिय चाइ ॥१३१॥ ८४५

नाराच छंद

ततंग [थेइ तत्तथेइ तत्तथे] सुमंडियं ।
तथुंग थुंग थै[1] विराम काम डंडियं[2] ॥ ८४९
सरग्गि मप्पि धन्नि धा धनिध्धनी निरक्खियं ।
भवंति जोति अंग तानु[3] अंगु[4] अंगु लक्खियं ॥१३२॥
कलक्कला[1] सुभेद भेद भेदनं मनं मतं ।
रनंकि झंकि नोपुरं[2] बुलंति ते झनं झनं ॥ ८५०
घमंडि धार घुंटिका[3] भवंति[4] भेख लेखयो ।
तुटिन्त खुत्त केस पास पीत स्याह रेखयो ॥१३३॥

---

[१२७] १. भयित २. पति ३. कथक ४. कत्थहि
[१२८] १. व्यंद २. ताल ३. त्रिग्गाम ४. औसर
[१२९] १. ज्वलन २. जमनि ३. महल
[१३०] १. तात २. मंत ३. इह ४. रत्तह ५. चित्त ६. निविद्ध ७. किय ८. न्रत्य
[१३१] १. पुहपंजलि २. धरनि
[१३२] १. थुंगथै २. मंडियं ३. मानु
[१३३] १. कलंकलं २. नूपुरं ३. घंटिका ४. भमंति

जातिग्गति[1] स्सु तारया करिस्सु[2] भेद कट्टरी।
कुसम्ह[3] सार आवधं[4] कुसम्ह[5] उड्डु[5] नट्टरी॥ ८५१
अरप्प रंभ भेख रेख सेखफं[6] करक्कसं।
तिरप्प तिप्प सिक्खयो सुदेस दक्खिनं दिसं॥१३४॥

दिसा दिसंग गीतने धरंति सासनं धमं[1]।
जमाय जोग कट्टरी त्रिविद्धनं पसंचनं[2]॥१३५॥ ८५२

उलट्टि पट्टि नट्टनं[1] फिरक्कि चक्कि चाहनं।
निरत्त तै निरक्खि जानु बंभ जुत्त वाहनं॥ ८५५
विसेस देस छुप्पदं वदं वदं न राजयो।
सुचक्र भेख चक्रवर्ति[2] वालिगा[3] विसाजयो॥१३६॥

उरद्ध मुद्ध मंडली अरोह रोह चालिनं।
ग्रिहं न[1] मुत्ति वत्तिमा[2]मनो मराल मालिनं॥ ८५६
प्रवीन वानि अंधरी[3] मनि द्रम दु[4] कुंडली।
प्रतच्छ[5] भेख यो धर्यो सु भूमि लोअ[6] खंडली॥१३७॥

तलत्तलस्सु तालिना म्रिदंग धंकने घने।
अपा अपा भनंति भेजु पंति जानयो जने॥ ८५७
अलक्ख लक्ख [लक्ख नेनयं] वैन भूखनं।
नरे जुरे नरिंद मास मे ब[1] काम मुक्खनं॥१३८॥ ८५८

[१३४] १. लजंति गत्ति २. कटिस्सु ३. कुसम्म ४. आउधं ५. ओड
६. सेखरं
[१३५] १. सुरंति संग गातनी धरंति सासैने धुने २. नंच संपने
[१३६] १. नाचनौ २. चक्र वृत्ति ३. ता
[१३७] १. ग्रहंति २. दुत्तिमा ३. उद्धरी ४. मुनींद्र मुद्र ५. प्रतष्षि
६. लोइ षंडली
[१३८] १. मेस

दूहा

जाम एक छनि[१] रास घटि अत्तिहु[२] सत्ति न वारि ।
किहु[३] कामिनी मुख रति समर त्रिप निय निंद त्रिसारि[४] ॥१३९॥ ८५६

साटक

सुक्खं सुक्ख म्रिदंग तार[१] जयन[२] रागं कला कोकिलं[३] ।
कंठी कंठ सुवासिनं[४] मनयितं[५] कामंकला पोखनं ॥
उभ्री[६] रंभ पिता[७] गुना हरिहरी सुभ्रीय[८] चवना[९] पता ।
ए[१०] सह सुक्ख सुखाइ तार सह्लिता जैराय राज्यं[११] गता ॥१४०॥ ८६१

काव्य

कांता[१] भार पुरा पुनर मद गजं साखा न गंडस्थलं ।
उच्छं[२] तुच्छ तुरा स पुष्प काननं कलि कुंभ निद्धादलं[३] ॥
मधुरे सा य स काय कुंभर सिता गुंजार गुंजारया[४] ।
तरुने प्रान लटापट प्पगयरा जइ राय संप्राप्तितं[५] ॥१४१॥ ८६२

दूहा

प्राति राउ संपरपतिग[१] जह[२] दर देव अनूप ।
सयल करहिं[३] दरबार जखि सात[४] सहस जिह भूप ॥१४२॥ ८६५
निस बाजब[१] गंगा नदिव ·········· मोह ।
चढ़ित[२] सुखासन संमुहो जहि[३] सामंत समोह ॥१४३॥ ८८७

[१३९] १. छिन २. सत्तमि ३. कहु ४. निवारि
[१४०] १. तल्ल २. जघनं ३. कोकनं ४. सुभासने ५. समजितं ६. उरभी
७. कि ता ८. सुरभीय ९. पवना १०. एवं ११. रात्रं
[१४१] १. कांती २. तुच्छं ३. निंदा ४. गुंजारियं ५. रात्रं गता साम्प्रतं
[१४२] १. संप्रापतिग २. जहं ३. सयन ४. सत्त
[१४३] १. बज्जहिं २. चढ़त ३. जहँ

दस[१] हत्थिय मुत्तिय सयन[२] सात तुरंग पट भाइ।
द्रव्व दरिस[३] बहु संग लिय भट्ट समप्पन जाइ ॥१४४॥ ६००

कवित्त

गयो राज[१] मिल्लान[२] चंद वरदिह[३] ह[४] समप्पन।
दिक्खि[४] सिंघासन ठयो इह जु [इं] दुजन ॥
बहुत कियउ आलापु आउ कनवज्ज मुकट मनि।
एतु[५] दिल्लीसर दत्त दियो तहि गिन्यो तुज्झ गनि ॥
थिर रहै थवाइस विज्जु कर छंडि सि करहि।
... ... पान देहि दिढ़ हत्थ गहि ॥१४५॥ ६१३

दूहा

सुनि तमूल सा पट्ठि करि वर उट्ठिग्ग डिठि वंक।
मनो मोहनि[१] सु मन मलिग[२] मनु नव उदित मयंक ॥१४६॥ ६१६

आर्या

तुलसाइ[१] विप्र हस्तेषु विभूतिः वर[२] योगिनां।
चंडिय पुत्त तवोरह[३] त्राणि[४] देयानि सादरं ॥१४७॥ ६२१

दूहा

भुव[१] वंकिय[२] करि[३] पंगु[४] त्रिप अप्पिग हत्थ तंबोल[५]।
मनहु वज्जपति वज्ज गहि सह अप्पिया सजोर ॥१४८॥ ६२७

[१४४] १. तीस २. सघन ३. बदर
[१४५] १. रावन २. मेल्हान ३. वरदिया ४. देषि ५. इह
[१४६] १. रोहिनि २. मिलिग
[१४७] १. तुलसीयं २. श्रिय ३. तांबूलं ४. त्रयो
[१४८] १. भुअ २. बंकी ३. किय ४. पंग ५. अप्पि ६. तंमोर

कवितु

पहिचान्यो[१] जैचंदु[२] इहति दिल्लीसर[३] लक्ख्यौ ।
नहि न चंद उनिहारि दुसहु दारुन अति पिक्ख्यौ[४] ॥
करि संथिअ[५] करि वारु कहै कनवज्ज मुकट मनि ।
हय गय दल पक्खरउ[६] भाजि प्रिथिराज[७] जाइ जनि[८] ॥
इत्तनउ[९] कहत भुजपति[१०] उठ्यो सुनि नरिंद किन्हों[११] न भउ[१२] ।
सावंत[१३] सूर हसि राज सूं[१४] कहहि[१५] भला[१६] रजपूत सउ ॥१४६॥ ९७५

दूहा

सुनहु सव्व सामंत इह कहै त्रिपति प्रिथिराज ।
जउ[१] अच्छहु खिन खित्त महि दक्खिन[२] नयर[३] विराज ॥१५०॥ १०४७

बुल्लिय[१] कन्ह आयान[२] त्रिप मति मंडन समरत्थ ।
जउ मुक्कहि सत सत्थ अनु[३] तो कत लीन्हसि[४] सत्थ ॥१५१॥ १०५०

जउ मुक्कउँ[१] सत सत्थिअनु तो संभरि कुल लाज[२] ।
दक्खिन[३] करि कनवज्ज कहुँ[४] पुनि संमुह मरनाज ॥१५२॥ १०५१

भय[१] टामक दिसि विदिसि हुइ[२] लोह[३] पखर तिह राउ ।
मनु अकाल तिडिय[५] सघन चल्या तु छूटि प्रवाह[६] ॥१५३॥ १०७८

[१४९] १. पहचान्यौ २. जयचंद ३. दिल्लेसुर ४. पिष्यौ ५. संध्यौ ६. पष्षरहु ७. प्रथिराज ८. जिन ९. इत्तनौ १०. भुअपति ११. किन्नौ १२. भौ १३. सामंत १४. सौं १५. कहै १६. भलौ

[१५०] १. जौ २. देषौं ३. नगर

[१५१] १. बोल्यौ २. अयान ३. सत्थियन ४. लायौ

[१५२] १. मुक्कौं २. लज्ज ३. दिष्षन ४. कौं ५. नज्ज

[१५३] १. भौ २. कहु ३. बहु ४. राव ५. टिड्डिय ६. प्रवाह

भुजंग प्रयात

प्रवासी त[1] तज्जी[2] न लज्जी[3] अहारे।
मनो रव्वि रत्थे जे आने प्रहारे॥
तिके स्यामि[4] संग्राम झेले दुधारे।
तिनै उप्पमा[5] क्यूं[6] व दीजइ विकारे॥ १५४॥ १०७९

तिनै साहियै वग्ग गड्ढे जि लारा।
मनो आवधे हत्थि वज्जंति सारा[1]॥
छुट्टियं तेजि[2] वेठे जि कारा।
ते सज्जए सूर सव्वे तुखारा॥ १५५॥ १०८०

पक्खरे[1] प्रान जे त्राहु चारा।
जके कंध नामे नहीं लौह झारा॥
.... नहीं भूमि भारा।
टुट्टियं जानु आकास तारा॥ १५६॥ १०८१

घट्ट[1] ऊघट्ट[2] फंदै निनारा।
कंठ झुल्लंति गज गाह भारा॥
लोह लाहोर वज्जइ तुरक्की।
तिनै धावतै दीस न धुरी फुरक्की[3]॥ १५७॥ १०८२

पच्छमी सिंध जाने न थक्की।
तिनै साथि सिंधी चले जक्कि[1] जक्की॥ १५८॥ १०८३

---

[१५४] १. प्रवाहंत २. ताजी ३. लाजी ४. स्वामि ५. ओपमा ६. क्यौं
[१५५] १. तारा २. तेज
[१५६] १. पाषरे
[१५७] १. घाट २. औघट्ट ३. खुरक्की
[१५८] १. नाव

पमः[1] पंखी न अंखी मनक्खी[2]।
जे आस कढ्ढे नहीं चंपि भक्खी॥
राग वरणै नहीं सुध उरक्की।
मनो उप्परे[3] ओस[4] आवै धुरक्की॥ १५९॥ १०८३

अरब्बी विदेशी लरै लोह लच्छी।
गणै को कंठ कंठील कच्छी॥
धराखित[1] खुदंतं [रुदंत] बाजी।
दिक्खियै इक्कु इक्कंत[2] ताजो॥ १६०॥ १०८४

पंडुए पंगुरे राइ सज्जे[1]।
दुअण[2] वल[3] वच्छ[4] दिक्खंत लज्जे॥
इहे अपुव्व कवि चंद पिक्ख्यो।
तरनि दुज-राज समतेज दिक्ख्यो॥ १६१॥ १०८५

दूहा

करिग देव दिख्खन[1] नयर गंग तरंग[2] अकुल्ल[3]।
जल छंडहि[4] अच्छहि करइ[5] मीन चरित्तनु भुल्ल[6]॥१६२॥ ११३६

अडिल्ल

भुल्लयो[1] पुहवि नरिंद त जुद्ध विनुद्ध[2] सह।
मुक्के[3] मीननु मुत्ति लहंतु जु लच्छि[4] दह॥
हय[5] तुछ तमोर सरंत जु कंठ लह।
पंक प्रवेसह संत भरंत जु गंग मह॥१६३॥ ११४४

[१५९] १. पवंनं २. मनक्की ३. ओपमा ४. उंच
[१६०] १. १. खेत २. तत्तार
[१६१] १. साजे २. दुअन ३. दल ४. तुच्छ
[१६२] १. दच्छिन २. तरंगह ३. कूल ४. छुटै ५. करि ६. भूल
[१६३] १. भूलौ २. विरुद्ध ३. नंषहि ४. लष्य ५. होइ

दूहा

भुल्यो[1] रंग सु मीन त्रिप पंगु चल्यो हय पुट्ठि।
सुनि सुंदरि वर वज्जने चढ़ी अवासन[2] उट्ठि ॥१६४॥ ११४७
दिक्खति[1] सुंदरि दर[2] बलनि चमकि चढंति अवास।
नर कि देउ[3] किंधुं[4] कामहर गंग हसंत[5] अयास[6] ॥१६५॥ ११४८
इक्क कहै दुर[1] देव है इक कह इंदु फनिंद।
इक्क कहैं असि[2] कोटि नर इहु[3] प्रिथिराज नरिंद ॥१६६॥ ११५८
सुनि वर सुंदर[1] उभय हुव[2] स्वेद कंप सुरभंग।
मनु कमलिनि कल सम हरिअ भ्रित करने तंन रंग ॥१६७॥ ११५६
[सुनि रव प्रिय प्रिथिराज कउ उभद रोम तिन अंग।
सेद कंप सुरभंग भयउ सपत भाइ तिहि अंग ॥]
गुरुजन गुरु वंदिअ नहि[1] सुंदरि।
राजपुत्ति पुच्छे कहुँ सुंदरि[2] ॥
अम्महि पुच्छन दूत पठावहि।
गुन[3] अच्छइ पच्छे करु आवहि ॥१६८॥ ११६८

अडिल्ल

पंगुराइ सा पुत्ति[1] सु मुत्तिय थाज[2] भरि।
जुत्तो[3] जो प्रिथिराज न पूछहि वीति[4] फिरि ॥
जरु इनि छिनि[5] सवनि तत्व विचारु करि।
है अतु मोहि त्रितावत[6] लेउ सजीव वरि ॥१६९॥ ११७१

---

[१६४] १. भूल्यौ २. अपुब्ब
[१६५] १. देषत २. दल ३. देव ४. किधों ५. गंगह संत ६. निवास
[१६६] १. दनु २. अस ३. इक
[१६७] १. सुंदरि २. तन
[१६८] १. निंदरियं २. दुरि दुरि ३. दुत्ति ४. कुन
[१६९] १. पुत्तिय २. थाल ३. जौ हिय ४. तोहि ५. लच्छिन ६. अप जीव

सुंदरि आइस धाइ विचारि त नांव लिय[१]।
जो[२] जल गंग हिलोर प्रतीत[३] प्रसंगु लिय ॥
कमल ति कोमल हस्त[४] केलि कुलि[६] अंजुलिय।
मनो दान दुज अंध समप्पति[७] अंजुलिय ॥१७०॥ ११७४

वृद्ध नाराच

अपंति अंजुलीय दान जान सोभ लग्गए।
मनो अनंग रंग अंग रंभ इंदु पुज्जए ॥
जु[१] पानि वारि वाहु [२]थक्कि थारि[३] सुत्ति वित्तए।
पुनप्पि हत्थ कंठ तोरि पोति पुज्ज आपए ॥१७१॥ ११७७

निरक्खि[१] वैन देखि नैन ता त्रिपत्ति चाहियं।
तरप्प दासि पासि पंक[२] संकि जानि साहियं[४] ॥१७२॥ ११७८

अनेक संगि रंगि रूप जूप [जानि] सुंदरी।
उछंग जान गंग मज्झि[१] सुग्ग[२] खत्ति[३] अच्छरी ॥ ११७९
ति अच्छरी नरिंद नाह दासि गेह[४] पंगुरे।
तासु पुत्ति जम्म छोडि ढिल्लिनाथ आचरे ॥१७३॥

सावंत[१] सूर चाहुवान मान[२] एम जानए।
करन्नु[३] केहरीन पीन[४] इंद मन्न थानए ॥ ११८०
प्रतक्ख हीर जुद्ध धार[५] जे सवार[६] संचही।
चरन्न[७] प्रान मान नोच लंतु देंतु गंठही ॥१७४॥ ११८१

[१७०] १. बुल्लइय २. ज्यौं ३. प्रथीति ४. तिय ५. पानि ६. कुल
७. सु अप्पत
[१७१] १. अपंत २. सु ३. थाल
[१७२] १. सुटेरि २. तानि पत्ति ३. कंपि ४. वाहियं
[१७३] १. मद्धि २. स्वर्ग ३. पत्त ४. ग्रेह ५. अद्दरे
[१७४] १. सपन्न २. मन्न ३. करी न ४. दीप ५. धीर ६. सुवीर ७. वरंत

सुनंत सूर अस्व[1] फेरि तेजि ताम हंकयो।
मनो दरिद्द रिद्धि पाइ जाइ कंठ लग्गयो॥ ११८१
कनक्क कोटि आस[2] धातु रासि वास मालसी[3]।
रुनंति[4] मोरु[5] सोनि[6] सोनि स्याह[7] छत्र कामसी[7] ॥१७५॥

सुधा सरोज मोज[1] मंग लिक्क[2] रंग हल्लए[3]।
मनो मयंक[4] फट्ट पासि काम काल वल्लए[5]॥ ११८२
करिस्स[6] कोस कंकणं जु पानिपत्त[7] बंधए[8]।
भावरी सखी सुलज्ज जुज्झ[9] रुज्झ वज्जए[10] ॥१७६॥ ११८३

अचारु दारु[1] देव सद्द[2] दूव[3] पक्ख जंपहीं[4]।
सु गंठि दिड्ढ[5] इक्क चित्त लोक लोक[6] चंपही॥ ११८४
अनेक सुक्ख मुक्ख सीस जंघ[1] संधि[2] लग्गयं।
कंत कंति अंत अंति[3] तमोरि मोर अप्पयं ॥१७७॥ ११८५

दूहा

वरि चल्ल्यो ढिल्लिय[1] त्रिपति सुत जैचंद कंवारि[2]।
गंठि छोरि दिच्छन फिरिग प्रान करिग मनुहारि ॥१७८॥ १२०६

गाथा

पयंपि[1] पंगुपुत्रीय जयति जोगिनी पुरह।
सरव विधि निसेधाइ[2] तंबूलस्य[3] समाचाय[4] ॥१७९॥ १२०८

[१७५] १. अश्व २. अंग ३. ची ४. रहंत ५. भौंर ६. भौंर ७. स्याम
[१७६] १. मोजयं २. अलक्क ३. हल्लियं ४. मयन ५. घल्लियं ६. करस्सि ७. फंद ८. माज ए ९. झुंड १०. विराज ए
[१७७] १. चारु २. सब्ब ३. दोउ ४. जपियं ५. दिड्ड ६. लीक ७. चंपियं ८. जुद्ध ९. साध १०. अथिथता
[१७८] १. ढीली २. कुमारि ३. दच्छिन
[१७९] १. प्रयाने २. निषेधाय ३. तांबूलं ४. ददतं नृप

दूहा

रेनु परइ सिरि उप्परहि हय गन गज अच्छार ।
मनहु ढग[1] ढग[2] मूल[3] ले रहे[4] ति सव्व मुछार ॥१८०॥ १२४३
मनहु वंध अज हुंति भरे है तिनि जानत थट्ट ।
वचन साह भं[1] गुन[2] करहि सहु जोवइ त्रिप वट्ट ॥१८१॥ १८४
धीरत्तनु[1] ढर ढार सिर[2] वाहु[3] दंतिय उभ रोभ ।
त्रिप्पु नयन विभ्र[4] अंकुरिग[5] मनहु मदग्गज सोभ ॥१८२॥ १२ ६
हरखवंत त्रिप भ्रित[1] हुआ[2] मन मज्झहि जुधि राहु[3] ।
मिलत हस्य[4] कंकम[5] लखिउ कहहि[6] कन्ह यहु[7] काहु[8] ॥१८३॥ १२४८
[गगन रेनु रवि मुंद लिय धर सिर छंडि फनिंद ।
इहु अपुव्व धीरत्त तुहि कंकन हत्थ नरिंद ॥१८४ अ॥] १२४९

छन्द

वरिय वाल सुत पंगुर[1] राइ ।
उहि चितु रक्खि मिल्यो तुम आइ[2] ॥
तजि मुंधइ[3] अब जुद्ध सहाइ ।
सु अब दई आवास वताइ ॥१८४॥ १२५२
जिहि तजि चित्त किया[1] तुम्ह पास ।
छंडिय कन्ह रुवंत[2] अवास ॥
जे सउ भ्रित[3] मज्झि इक भ्रितु[4] होइ ।
त्रिप यूंही हि न मुक्कै कोई ॥१८५॥ १२५३

[१८०] १. ठग्ग २. ठग ३. मूरि ४. रहिग
[१८१] १. स्वामि २. भंग न
[१८२] १. धीरत धीर २. ढिल्लेस वर ३. बहु ४. तन ५. अंकुरे
[१२३] १. भ्रत्त २. हुअ ३. चाव ४. हत्थ ५. कंकन ६. कह्यौ ७. इह ८. काव
[१८४] १. पंगह २. वह व्रत भंग मोहि व्रत जाइ । ३. मुंधहि
[१८५] १. कियौ २. रुदंत ३. सुभत्त ४. भत्त

हम सउ भ्रित्त[१] सुन्दरी एग।
मुक्कि जाइ[२] ग्रिह[३] बंधइ तेग॥
जउ अरि थट्ट कोरि दल साज।
ढिल्लिय तखत देहु[४] प्रिथिराज॥१८६॥ १२५६

इहु[१] त्रिपत्ति बुज्झियै न तोहि।
सुन्दरि तजि[२] जीवन का मोहि॥१८७॥ १२५४

श्लोक

धर्मार्थेषु च यज्ञार्थे[१] कामकालेषु शोभितं[२]।
सर्वत्र वल्लभा बाला रण कालेसु मोहिनी[३]॥१८८॥ १२५५

दूहा

चले सूर सहु सत्थि हुअ रन निसंक मन भौन।
सह अचार मुख म्रिग लहि[१] मनहु करे[२] फिरि गौन॥१८९॥ १२६०

मुडिल्ल

पानि परस अरु द्रिस्टि अलग्गिय।
सा सुन्दरि कामागनि जग्गिय॥
खन[१] तलप्प[२] अलप्प[३] मनु कीने।
जै वहि[४] वारि गये तनु मीने॥१९०॥ १२६२

फिरि फिरि वाल गत्रक्खइ[१] अक्खी[२]।
ता सिख देहि वैन वर सखी[३]॥
विनु उत्तर मोहन मुख रखी[४]।
जिम चातग पावस ऋतु नखी॥१९१॥ १२६४

---

[१८६] १. रजपूत २. एक ३. जाहिं ४. ग्रह ५. बंधहि ६. देहि
[१८७] १. इतनौ २. मुक्कि
[१८८] १. यज्ञकालेषु धर्मेषु २. शोभिता ३. गेहिनी
[१८९] १. मंगलह २. करहि
[१९०] १. खिन २. तलपइ ३. अलपइ ४. वर
[१९१] १. गवक्खनि २. अक्खिय ३. सक्खिय ४. रक्खिय

अंगना[1] अंगह चंदनु लावहि ।
असु[2] लाजनु राजनु समुझावहि ॥
दे अंचल चंचल द्रिग मूंदहि ।
कुल सुहाइ तुरिया जिय खुंदहि ॥१९२॥ १२६३

बहुत जतन संजोग समाए ।
सोम कमल अम्रित[1] दरसाए ॥
उझकि झंकि दिख्ख्यो पुन पत्तिय ।
पति देख्यो[2] मन महि अनुरत्तिय ॥१९३॥ १२६७

श्लोक

गुरु जनो नाम नास्ति तात मात[1] विवर्जितः ।
तस्य काम विनश्यंति जाम[2] चंद्रदिवाकरः ॥१९४॥ १२७२

दूहा

इह कहि सिर धुनि सखिनि सों देखि संजोगि सुराज ।
जिहि पिय[1]जन अंगुलि फिरिय तिहि प्रियजन कइ[2]काज ॥१९५॥ १२७३
सुनि[1] सावंत[2] निसंत[3] कहि पंगु पुत्रि घटि मंत ।
तुम्ह सत्थहि सामंत सुभट ले ढिल्लहि[4] गज दंत ॥१९६॥ १२७८

गाथा

मदन सराल ति विवहा विविहारे देत प्राण प्राणेण ।
नयन प्रवाहि[1] विवहा अहवा[2] कामा कथ दोह ॥१९७॥ १२७९

[१९२] १. अंगन २. अरु
[१९३] १. दिनयर २. दिष्षत
[१९४] १. मनो २. आशा ३. कार्य ४. यावत्
[१९५] १. प्रिय २. किहि
[१९६] १. ए २. सामंत ३. जु सत्त ४. कड्ढै
[१९७] १. प्रवाहति २. अह वांमा

कवित्त

मो कंपहि सुरलोक सत्त पाताल नाग नर।
म म कंपि जंपि[१] सुंदरि सपहु चिडिग[२] कोरि[३] काइर[४] रखत ॥
इहि भुवहि[५] ढिल्लि[६] कनवज[७] करउं[८] इह अप्पउं ढिल्लिय तखत ॥१९८॥ १२३५

सुंदरि सोचि समज्झि गहुग्गह[१] कंठ भरि।
तवहि प्रान[२] प्रिथिराइ[३] सु खिंचिय बाहु करि ॥
दिय हय पुट्ठिय[४] भानु जु सव्व सुलच्छिनिय।
करउ[५] तुरंग सुरंग स पुच्छ नि वच्छनिय ॥१९९॥ १३२२

दूहा

परनि राउ[१] ढिल्लिय समुह[२] रुख कीनी मनु आस।
कहहि चंद न्रिप पंगु रख जुज्झ जुरहि जिम दास ॥२००॥ १३२१

गाथा

सय[१] रिपु[२] दिल्लिय नाथो स एव आला अग्य धुंसनं।
परणेवा[३] पंगु पुत्री ए जुद्ध मंगति भूखनं ॥२०१॥ १३४५

दूहा

सुनि स्रवननि प्रिथिराज कहु[१] भयो निसानह[२] घाउ[३]।
ज्यूं[४] भद्दव रवि असमनह[५] चंपिय बद्दल वाउ ॥२०२॥ १३४६

छंद त्रोटक भ्रमरावली जाति

सलिता जन सत्त समुद्द लियं।
दुइ राइ महा भरयं मिलियं ॥

---

[१९८] १. चंपि २. चढिग ३. कोटि ४. कायर ५. भुजन ६. ठेलि ७. कनवज्ज ८. कौं
[१९९] १. गह गह २. पानि ३. प्रथिराज ४. पुट्ठहि ५. करत
[२००] १. राव २. मुषहि
[२०१] १. सा २. याहि ३. परनेवा ४. मांगंत
[२०२] १. को २. निसानन ३. घाव ४. जनु ५. अस्तमनि

करकादि निसा मकरादि दिनं ।
वर वर्धति सेन दुवाल भवं ॥२०३॥
दुहु राइ रखन्ति तिरत्त उठे ।
विहरे जनु पावस अंभ उठे ॥
निसि अद्ध विधत्त निसान धुरे ।
दरिया दिव जानि पहार नुरे ॥२०४॥
सहवाइ फेरि कलाहालियं ।
रस वीरह वीर चली मिलियं ॥
ढहनं कित घंटनि घंट घुरं ।
कल कोतिग देव पयालपुरं ॥२०५॥
लगि अंबर वंबर डबरयं ।
बिसरी दिसि अट्ठनि धूधरियं ॥
समसेर दुसेर समाह निसे ।
दमके दल मज्झि तरायन से ॥२०६॥
चमके चत्तरंग सनाह घनं ।
प्रतिबिंबित मित्ति स ऊख वनं ॥
दरसे दल वद्दल ढल्लरिया ।
जिनके मुख मुच्छ ति मुंछरिया ॥२०७॥
त्रिप जोइ फवज्जि निवट्टि लियं ।
मुह माहिरि कचव करा उदियं ॥
भुज दच्छिन अंभुअ राउ रच्यो ।
सिरि छत्र समेत जु आनि सच्यो ॥२०८॥
भय की दिसि वाम पंडीर भख्यो ।
कट कंध कवंध गिरंत लख्यो ॥
कूरंमे अरंभ जु अंभ अनी ।
सु घरी कवि चंद सुनी सुमनी ॥२०९॥

दल पुट्ठि न मोरिय राउ सुन्यो।
कवियत्तनि संच सुन्यो सु मन्यो॥
निरवाह चंदेल ति जद्दमने।
हय मुक्कि लरे जम सू जुरने॥२१०॥

तिनि मज्झि त संभरि वायु जिसो॥
भुज अर्जुन अर्जुन राउ जिसो॥
भमराउलि छंद प्रवान थियं।
त्रिप जोइ फवज्जइ वंट लियं॥ २११॥

कवितु

जि दिन रोस राठोर[1] चंपि चहुवान गहन कह।
सै[2] उप्परि सै[3] सहस वीस[4] अगनित्त लख्ख दह॥
तुटि डूंगर थल भरिग भरिग थल जलनि प्रवाहिग।
सह अच्छर[5] अच्छहि विमान सुर लोग[6] विनाइग[7]॥
कहि चंद दंद दुहं[8] दल भयो घन जिम सर सारह धरिग[9]।
भर सेसु हरी हर ब्रह्म तन तिहु[10] समाधि तिहि दिन[11] टरिग॥२१२॥ १७०६

छन्द

सज्जतं धून धूमे सुनंतं।
कंपयइ[1] तीन पुर जेनि पत्तं[2]॥
डंवरु वर[3] डह्कंथं गवरि कंतं।
मानयं जोग जोगादि अंतं॥२१३॥ १३४७

[२१२] १. रट्ठौर २. सौ ३. सैं ४. वीह ५. अच्छरि ६. लोक ७. वनाइग
८. दुहुं ९. भरिग १०. तिहुं ११. तहिन
[२१३] १. कंपियं २. कंपंतं ३. डमरु कर

किम किमे सेस सह[1] भार रहियं।
किमे उच्चासु रवि रत्थ नहियं[2]॥
कमल सुत कमठ नहिं अंभु[3] लहियं।
जुक्कि[4] ब्रह्मान ब्रह्मंड गहियं ॥२१४॥ १३४८

राम रावन्न कवि कन्ह[1] कहता।
सकति सुर महिख वलिदान[2] लहता॥
कंस सिसुपाल जुरि मम[3] प्रभुता।
संकियं एन[4] भय लच्छि सुरता ॥२१५॥ १३४९

चढ्ढियं सूर आजान बाहं।
दुट्टि[1] वन सिंघ तटहीन[2] लाहं॥
गंगजल जमन धर हिल्लिय[3] जूझे[4]।
पंगुरा राय राठोर फोजे[5] ॥२१६॥ १३५०

उप्परे फ़ोज[1] प्रिथिराज राजं।
मनो वानरा[2] लंक लागे हि माजं॥
जग्गिय देव देवा उनिंदं।
दुक्खियं दीन इंदं फनिंदं ॥२१७॥ १३५१

चंपियं[1] भार पायाउ[2] दंदं[3]।
उड्डियं रेन आयास मुद्दं॥
लहै कोनु रखत्त[4] अगणित्त रत्ता।
छत्र छति[5] भार दीसइ[6] न पत्ता ॥२१८॥ १३५२

[२१४] १. सिर २. सहियं ३. अंबु ४. संकि
[२१५] १. किन्न २. धन्न ३. जमन ४. एम
[२१६] १. तुट्टि २. दीसंत ३. हलिय ४. औजे ५. भोजै
[२१७] १. फौज २. बांदरा ३. गाजं
[२१८] १. चापियं २. पायाल ३. दुंदं ४. रावत्त ५. छिति ६. दीसै

आरंभ चत्रा[1] रहै कौन संता।
वाराह रूपी न कंधे धरंता॥
सिरे[2] सन्नाख[3] नव रूप रंगा।
सल्लिवै[4] सीस त्रिन्नयन गंगा॥२१६॥ १३५३

टोप टंकाल[1] दीसै उतंगा।
मनो वज्ज[2] लेखंति[3] बंधी विहंगा॥
जिरह जिग्गीन[4] गहि[5] अंग लायी।
मनो कच्छ[6] रक्खी[7] न गोरक्ख पायी॥२२० १२[illegible]

हत्थरे हत्थ लग्गी पुहायी[1]।
दांव[2] गंजै न थक्कै थकायी॥
राय[3] जल जीन[4] विन्नवन[5] अच्छे।
दिक्खियै मानु[6] नर भेख[7] कच्छे॥२२१॥ १३५५

सब्ब छत्तीस करि कोहु[1] सज्जे।
इत्तने सोर[2] वाजिन्न वज्जे॥२२२॥ १३५६

निसानं निसाहार वज्जे[1] सु-चंगा।
दिसा देस दच्छिन्न लद्धी[2] उपंगा॥
तबल्लं तिदूरं ति जग्गी म्रिदंगा[3]।
सु ले नित्ति[4] नारद्द काहे[5] प्रसंगा॥ २२३॥ १३६२

---

[२१६] १. चक्की २. सेन ३. संनाह ४. झिल्ल

[२२०] १. टंकार २. बद्दलं ३. थंति ४. जंगीन ५. बनि ६. कद्ध ७. कंती

[२२१] १. सुहाई २. घाइ ३. राय ४. जरजीन ५. बनि बान ६. जानु ७. जोगिंद

[२२२] १. लोहु २. सूर

[२२३] १. बाजे २. लीनी ३. म्रदंगा ४. नृत्य ५. कडढै

वधं[1] वेस[2] विसातल[3] बहु राग[4] रंगा।
जिसे मोहियं सत्थि लग्गे कुरंगा॥
वरं वीर गुंडीर तेसे[5] सुमंगा[6]।
नचै इस सीसै धरो जास गंगा॥ २२४॥ १३६३

सिंधु सहनाइ स्रवपे[1] उतंगा।
सुनै अच्छरी अच्छ मज्झे[2] सु अंगा॥ २२५॥ १३६४

नफेरी नवा[1] रंग सारंग भेरी।
मनो त्रित्तनी इन्द्र आरंभ केरी॥
सिंघ[2] सावज्ज[3] उग्रो[4] न नेरी।
सज्झि[5] आवज्झ[6] हत्थैं करेरी॥ २२६॥ १३६५

उच्छरे[1] धाइ घिर घंट टेरे।
चित तै नाहि वड्ढी[2] कुबेरी॥
उप्पमा[3] खंड नव नयन सग्गी।
मनो राम रावन्न हत्थे विलग्गी॥ २२७॥ १३६६

दूहा

सुणिम वयण[1] राजन[2] चढिय[3] बहु पक्खर भर राहु।
मनु अकाल तेडिय सघन पवय छूट पर बाहु॥२२८॥ १३६७
चढिय सूर सामंत सहु त्रिप धर्मह कुल काज।
सह समूह दिक्खिय नयन त्रिण वरगिन प्रिथिराज॥२२९॥

[२२४] १. वजं २. वंस ३. विसतार ४. रंग ५. संसे ६. ससंगा
[२२५] १. भवने २. मंजे
[२२६] १. नवं २. सिंगि ३. सावद्द ४. नंगी ५. झिंझ ६. आवद्ध
[२२७] १. उच्छुरी २. टेरी ३. वाढी ४. ओपमा
[२२८] १. वज्जन २. रज्जन ३. चढिग

........................औहि रक्खण वहु बंध।
असिय[1] लाख[2]परसूं[3]भिरग धन प्रिथिराज नरिंद ॥२३०॥ १३६८
दल संमुह दंती[1] सघन गणि को कहि अगणित्त।
मनु........................सहु दिक्खइ मयमत्त ॥२३१॥ १३६९

छंद

दिक्खियहि[1] मंत मय[2] मत्त मत्ता।
छत्र छह रंग अंगे[3] दुरंता ॥
एमि अ... जु रंता।
जोवई[4] वहु वेगि झटकंत दंता ॥ २३२ ॥ १३७१
जे सिंघली सिंघ मुंडे[1] प्रहारे।
सार सम्मूह धावै पहारे ॥
उज्जये वाण सज्जे हकारे।
अंकुसह[2] कोस नहि ते चिकारे ॥ २३३ ॥ १३७२
मन्न[1] मं गोल चहुं कोद वंके।
भूप वाजूनि वाजून हंके ॥ १३७३
तेह तर जोर पट्टे न[2] हिल्ले[3]।
कंपिये प्रानि[4] ते मेरु ढिल्ले ॥२३४॥ १३७४
रेस रेसम्म पाट नी रीति भल्ली।
सेस संदेह संदूखि[1] मिल्ली ॥ १३७५
रेख वेरक्ख पति पात वल्ली।
मनो वनराइ ढालेति[2] ढल्ली[3] ॥२३५॥ १३७६

---

[२३०] १. असी २. लक्ख ३. सौं सौ
[२३१] १. दंतिय
[२३२] १. देषियहि २. मै ३. चौरं ४. वाय
[२३३] १. सुंडी २. हकारे ३. अंकुसं
[२३४] १. मीठ २. ब ३. भिल्ले ४. पानि
[२३५] १. सिंदूर २. द्रुम डाल ३. हल्ली

घंट घोरं न सोरं समानं।
हल्लए मत्त[1] लग्गे[2] विमानं ॥
सीधु संबंध बंधइ धुरंगा।
सुर्गा सुम्री[3] न डरि[4] ईंद्र[5] संगा ॥२३६॥ १३७४

सीस सिंदूर गय[1] झिप्पि[2] झंपै।
दिक्खि सुरलोक सह देव कंपै ॥२३७॥ १३७६

दंत मणि मुत्ति जर जटित लक्खे।
वीज चमकंति घन मेघ पक्खे ॥ १३७३
इत्तनहि सास धरि[1] वारि रहियो।
जु कहि जु कहि प्रिथिराज गहियो ॥२३८॥ १३७७

दूहा

गहि गहि कहि सेनान सब[1] चलि हय गय मिलि एक।
जाणूं[2] पावस चुव्वइ[3] अनिल हलि वद्दल वहु भेक ॥२३९॥ १३७८

छंद

हयं गयं नरं भरं उने त्रिये[1] जलद्दरं[2]।
दिसा निसान वज्जए समुद्द सद्द लज्जए ॥२४०॥ १३७९
रजाद[1] मिंद[2] अंखुली[3] वियोम[4] पंक संकुली।
तटाक वालु रंगिनी जु चक्क[5] सो वियोगिनी ॥२४१॥ १३८०

[२३६] १. मंत २. लागे ३. स्वर्ग ३. संगीत ५. करि ६. रंभ
[२३७] १. गज २. जंप ३. देखि
[२३८] १. धरि
[२३९] १. सकल २. जनु ३. पुव्वह
[२४०] १. उनम्मियं २. जलद्धरं
[२४१] १. रजोद २. मोद ३. उष्पली ४. सव्योम ५. सु चक्कयो

पयाल पहल्ल[1] पल्लए दिगंत[2] मंत हल्लए। १३८१
अनंदने[3] निसाचरे कु कुंप[4] तुंड साचरे ॥२४२॥

भगंत गंग कुल्लए[1] समुद्द[2] सून फुल्लए। १३८२
चरंति छत्त छत्तिए. सरोज भोज सत्तए ॥२४३॥ ?

अखंड रेण[1] मंडयो[2] डरप्पि इंदु छंडयो[3]।
कमट्ठ पिट्ठ निट्ठुरं प्रसार भार भित्थरं[4] ॥२४४॥ १३८३

.........समग्गए समाधि आदि[1] जग्गए।
अपूरवं ति बंधयो[2] जटाल काल भाग्गयो[3] ॥२४५॥ १३८४

नरिंद पंग पायसं गसा भुयंति आइसं[1]।
गहन्न योगिनी[2] पूरे जु अप्प अप्प विप्फुरे ॥२४६॥ ११८५

दूहा

सह स मान सह छत्रपति सब[1] सम जुध संजुत्त।
गहन मीर बंदन हती जिहि लग्गे लघु[2] भत्त ॥२४७॥ १४०१

नाराच

पट्ठिए राइ पंगा सु हीसं।
भखे दोइ दुम्मान हीने न दीसं॥
नीच [कंधं तुछं] रोम सीसं।
उप्परे राय[1] प्रिथिराज दीसं ॥२४८॥ १४१२

[२४२] १. पाल २. द्रगंत ३. अनंदिते ४. कंपि
[२४३] १. कूलए २. समुद्र
[२४४] १. रेन २. मंडयौ ३. छंडयौ ४. विथ्थरं
[२४५] १. आधि २. बद्धए ३. लुद्धए
[२४६] १. आयसं २. जोगिनी
[२४७] १. सह २. लहु
[२४८] १. फौज

छन्द जाति नग्नका

कोल पल्लं लखी मेछ[1] सखं भखी ।
रोम राहं नखी, वीर चाहू चखी ॥२४९॥ १४१४

सभे[1] नारं लखी मुखी ।
बान बाहं पखी संघ सावं धखी ॥२५०॥ १४१५

टंक अड्ढा रखी खंच[1] विम्भारखी ।
लोह नारा[2] चखी[3] प्राण जोए लखी ॥२५१॥ १४१६

कूल[1] वाहं[2] चखी दिव्य वाहू नखी ।
द्रुम्मसि[3] सामुखी बोलते[4] ना लखी ॥२५२॥ १४१७

पारसी पालखी[1] पंग पारङ्कखी[2] ।
स्वामिना चित्तखी ढिल्ल[3] ढाहं भखी ॥२५३॥ १४१८

साठि[1] हजारखी पंग वे पारखी ॥२५४॥ १४१९

छन्द वृद्ध नाराच

हय दल पय दल अग्ग सु डारे ।
त्रिपति नछत्तनु लब्भ न पारे ॥
मनो विंटियं कोट के[1] मुनारे ॥२५५॥ १४२०

छन्द पद्धरी

मोरियं राज प्रिथिराज वग्गं ।
अट्ठियं रोस आयासु लग्गं ॥

[२४९] १. मंस
[२५०] १. सुम्मरे
[२५१] १. खंचि २. नारं ३. जखी
[२५२] १. कोल २. चाहै ३. साहै ४. बोल तैं
[२५३] १. पारखी २. पारङ्खी ३. ढिल्लि
[२५४] १. सट्टि
[२५५] १. मंभे

पंथ पारत्थि[1] हरि हेम[2] जिग्गं[3]।
खोलियं खग्ग खाडयो[4] न लग्गं ॥२५६॥ १४२१

उट्ठियं सूर सामंत ताजे[1]।
रोहिया सिंघ सा हत्थ लाजे[2]॥
वाजने वीर रा पंग वाजे।
मनो आगमे मेघ आसाढ़ गाजे ॥२५७॥ १४२२

मिले जोध[1] बत्थै न लग्गे हकारे।
उडे गैन लग्गे समं[2] सार झारे॥
कहे कंध कवंध[3] संधे ननारे[4]।
परे जंग रंगं मनो मत्त वारे ॥२५८॥ १५११

डरे संभरे राइ संसार सारे।
जुरे मल्ल हल्लै नही ते अखारे॥
जीवे[1] हारि हल्ले नही चोप चारे[2]।
तवे कोपियां कोस[3] मयमत्त मारे ॥२५९॥ १५१२

गये सुंड दंतीनु दंता उपारे।
मनो कंदला कंद भिल्ली[1] उखारे ॥२६०॥ १५१३

परे पंडुरे वेस ते मीर सीसं।
मनो जोगिनी जोट लागंति रीसं॥
वहै वान कम्मान दीसै न भानं।
भमै ग्रिद्धणी ग्रिद्ध पावै न जानं ॥२६१॥ १५१४

[२५६] १. पारथ्थ २. होम ३. जग्गं ४. खंडू
[२५७] १. तज्जे २. राजे
[२५८] १. लोह २. सकं ३. कामंध ४. निनारे
[२५९] १. जवै २. को पचारे ३. कन्ह
[२६०] १. गहे २. भीलं
[२६१] १. सुरे २. कंठी

रुने खेत रत्तं चरंतं करारं।
घुले[1] कंठ संठी[2] न लंगी उभारं ॥२६२॥ १५१७

सरं स्रोन रंगी पलं पार पंकं।
वजे मंस[1] नं सं सु वैसे करंकं॥
द्रुमं ढाल लोलंति हालं[2] सुदेसं।
गये हंस नासं लगे हंस वेसं॥२६३॥ १५१८

परे पानि जंघं धरंगं निनारे।
मनो मत्थ[1] कत्थ[2] तरं तीर[3] भारे॥
सिरं सा सरोजं कचं सा सिवाली।
ग्रहै[4] अंत गिद्धी स सोभै[5] मुराली[6] ॥२६४॥ १५१९

वढं[1] रंभ रंतं भरतं पिचारे।
कतं स्याम सेतं कतं नील पारे॥
धरे[2] अंग अंग सुरंगं सुभट्टं।
जिते स्वामि कज्जे[3] समप्पे सुवट्टं ॥२६५॥ १५२०

तहां काल जम जाल हत्थी मसाणं[1]।
भयो[2] इत्तने जुद्ध अस्तमित भाणं॥२६६॥ १५२१

गाथा

निसि गत छड्डिअ[1] भानं चक्की चक्काइ सूर सा रयणी।
विधु संजोग संजोगे[2] कुमुदिनि कलि के कते राने[3] ॥२६७॥ १५३१

[१६२] १. वंस २. लालं
[२६४] १. मच्छ २. कच्छा ३. तिरंत ४. गहै ५. सोहै ६. म्रनाली
[२६५] १. तटं २. बरै ३. काजे
[२६६] १. समाणं २. हुऔ ३. भानं
[२६७] १. वंछिय २. वियोग ३. कुमुद कली कातरं नाचं

दूहा

उभय[१] सहस हय गय परिग निसि आगत गत भानु।
सत[२] सहस्स[३] असि[४] मीर हनि थल विट्यो चहुवान ॥२६८॥ १५३४

कवितु

परयो गज[१] गुहिलोतु[२] राम गोइंद[३] जासु[४] वर।
दाहिम्मो नरसिंघ पलौ[५] नागवर[६] जासु धर॥
परयौ चंद पंडीर[७] चंद दिख्यो मारंतो।
सोनंकी[८] सारंग परगे[९] असिवर झारंतो॥
कुरम्भ राइ[१०] पाल्हंन्न[११] दे बंध्यो[१२] तिन्न[१३] तिहिद्दिया।
कनवज्ज राडि[१४] पहिलइ[१५] दिवसि[१६] सउमइं[१७] सत्त निघट्टिया ॥२६९॥ १५३३

अध्ध[१] रयणि[२] चंदणी[३] अध्ध अग्गैं अंधियारी[४]।
भोग भरन[५] अस्टमी[६] वार मंगल[७] सुदि रारी[८]॥
चार[९] जाम जंगली[१०] राउ[११] निसि नींद न घुटयो।
थल विट्यौ[१२] चहुवान[१३] रहवो[१४] कंदल[१५] आहुट्यौ॥
दस कोस कोस कनवज्ज ते कोस कोस अन्तर अनी[१६]।
वाराह रोह जिम पारधी इम रुक्यौ संभरि धनी[१७] ॥२७०॥ १५४३

[२६८] १. उभै २. सत्त ३. सहस ४. अस

[२६९] १. गंजि २. गहिलोत ३. गोयंद ४. राज ५. परयौ ६. नागौर ७. पुंडीर ८. सोलंकी ६. राव १०. पाल्हन ११. बंधव १२. तीन १३. रारि १४. पहिलै १५. दिवस १६. सौमे

[२७०] १. रयनि २. चंदनिय ३. अँधियारिय ४. भरनि ५. अष्टमिय ६. सुक्र ७. रारिय ८. च्यारि ६. जंगलिय १०. राव ११. विंट्यौ १२. कमधज्ज १२. रह्यो १४ कंदेल १५. अनिय १६. धनिय

अडिल्ल

मत्त[1] महोदधि मज्झि दीसत गसंत[2] तम।
पथिक बधू पथ द्रिस्टि अहुट्टिय जग जिम॥
जिम युव युवतिन गत्त मत्त अंडंगुले[3]।
जिम सारस रस लुद्ध त मुंध मधुप्प ले[4]॥२७१॥ १५४८

खरह चारु चै[1] इंदु ज मंदियवर[2] उदय।
नव विरहिनि नव नेह नवज्जलु नव रुदय॥
भूखन सुभ्भ समीप न मंडनु मंडि तनु।
मिलि मुद मंगल कीन मनोरथ सव्व मन॥२७२॥ १५४९

गाथा

यतो नलिनी ततो नीर यतो नीर ततो नलिनी।
यत्र गेह[1] गेहिनी[2] तत्र यत्र गेहिनी[2] तत्र गृह॥२७३॥ १५५०

कवितु

मेलि सव्व सामंत बोलु भंगहि[1] ति नरेसुर।
अप्पु[2] मग्ग लग्गियइ मग्ग रक्खहि सु महा-भर॥
एक[3] एक[4] भूझंत[5] दंत दंती ढंढोरे।
जिते पंगुरा भीछ मारि मारि म्मुहु[6] मोरे॥
हम बोल रहै कलि अंतरे देहि स्वामि पारथ्थियै।
अरि असी लक्ख को अंगमै परिग्गि[7] राइ सारथ्थियै॥२७४॥ १५५१

मति घट्टिय सामंत मरथ[1] भय मोहि दिखायो[2]।
जिम[3] चिट्टिय विग्गु कहन होइ के[4] मोहि कहायो[5]॥
तुम गज्जुर[6] भट भीम तासु गेरव[7] मैमंतो।

---

[२७१] १. मित्र २. ग्रसंत ३. अनंग लिय ४. लिय
[२७२] १. रुचि २. इंदीवर
[२७३] १. गृह २. गृहिणी
[२७४] १. मांगहि २. आप ३. एक ४. जूझंत ५. मुख ६ बिना
[२७५] १. मरन २. दिखावहु ३. जम ४. सो ५. बतावहु ६. गंज्यो ७. अब्बहु

मैं व गोरि साहिब्ब[८] साहि सारवर[९] साहंतो ।।
मो सरण सरण हिंदू तुरक तिहि सरणागत तुम करो[१०] ।
बुज्झियइ सूर सामंत हुइ इतो बोझ अप्पण धरो[११] ।।२७५।। १५६४

थान[१] रहे[२] ते[३] सिंघ वीह[४] वन रक्खै[५] सिंघह ।
धर रक्खै जु भुवंग धरणि रक्खै जु भुअंगह ।।
कुल रक्खै कुल वधू वधू रक्खै जु अप्प कुल ।
जहु[६] रक्खै जो हेम हेम रक्खै तु सब जल ।।
आब रहै तव लग जियन जियन जम्मु साबुत रहै ।
.... रखत रक्खहिं राव तिह ।।२७६।। १५६७

तैं रक्खे[१] हिंदुवाण गंजि गोरी गाहंतो ।
तैं रक्खे[१] जालोर चंपि चालुक साहंतो[२] ।।
तैं रक्ख्यो पंगुलिय[३] भीम महिय[४] दे मत्थै ।
तैं रख्यौ रिणथंभु[५] राइ जाइदौ[६] सैहत्थै ।।
इहि मरन कीरती[७] पंग की जियण कित्ति रा जंगुली ।
पहु परनि जाहु ढिल्ली लगै जु होइ घरे घरु[८] मंगुली ।। २७७ ।। १५७२

सूर मरन मंगली सार[१] मंगली ग्रिह आये ।
वार मंगल मंगली धरण मंगल जल पाये ।।
क्रिपण लोभ मंगली दीन मंगल कछु दीनइ[४] ।
रुत मंगल माहिसइ मंग मंगल कछु लीनइ[५] ।।
मंगली जु वार होइ मरण की पति सत्थै तन खंडियइ ।
खित[६] चढ़ि[७] राइ राठौर सउ मरण सनम्मुख मंडियइ ।। २७८।। १५७३

८. साहाब ९. सरवर १०. करहु ११. धरहु
[२७६] १. बन २. राखै ३. ज्यों ४. विंझ ५. राखहि ६. जल
[२७७] १. रख्यौ २. चाहंतो ३. पंगुरौ ४. भट्टिय ५. रनथंभ ६. जद्दव ७. किति
८. घरघ्घर
[२७८] १. स्याल २. घरनि ३. दान ४. दिन्नै ५. लिन्नै ६. खेत ७. चढ़ि

मरन दिजइ प्रिथिराज दसहि छत्रिय करि पयठो।
मीचु लग्गये पाइ कहे धरि आव वइट्ठो॥
पंच घाट[1] सौ कोस कहइ ढिल्ली अस कत्थइ।
इक्क इक्क सूरवा[2] पिक्खि वाहंते वत्थइ॥
घर घरणि परणि रा पंगु के पहुचे इहै वडित्तनौ[3]।
जब लग्गि गंग धर चंद रवि तव लगि चलै कवित्तनौ[4]॥ २७९॥ १५७४

गाथा—

मिट्यो न जाइ कहणो गहणो कवि चंद सूर सांवत[1]।
आली हय गय वहणो रहणो चित्त निदावंत॥ २८०॥ १५८८
सत्रु-भट-किरण समूहे सूरो[1] ... ...
जोगिणि पुर पति सूरे पारस मिसि पंगु राएसु॥ २८१॥ १६२८

छंद त्रोटक

परि पंगु कटक्कति घेरि घनं।
दस पंच ति कोस निसान धुनं[1]॥२८२॥ १६४०
गजराज विराजहिं[1] मध्य घनं।
जनु वद्दर अंभ सुरंग बनं॥
परि पक्खर सार पवंग[2] घनी।
जनु हल्लति हेम समुद्द अनी॥२८३॥ १६४१
बर बंबर वैरख छत्र तणी[1]।
विच माहिय साहिय सिंघ रणी[2]॥
हरि पत्थि हिमाउत पीत पनी[3]।
देखिय लिय रेण सरद्द तनी॥२८४॥ १६४२

[२७९] १. पंच २. सूरिमा ३. बड़प्पनौ ४. कविप्पनौ
[२८०] १. सामंत २. सेन पंग आएस
[२८२] १. सुनं
[२८३] १. विराजित २. तुरंग
[२८४] १. तनी २. अनी ३. बनी

भणणंकिय भेरि अनेग[1] सयं।
सरणाइनि[2] सिंधुअ पूरि[3] लियं॥
जनु भावर[4] भाण[5] समेर करयो॥२८५॥ १६४३

दल सव्व स मोरिय रत्त करी।
जिन जाइ निकस्सि नरिंद अरी॥
गत जाम त्रियाम सु पीत[1] परी।
सय[2] सद्द अयासनु[3] देव करी॥२८६॥ १६४४

त्रिप जग्गति सव्व तुरंग चढे।
विणु भाणु पयाणहि लोह कढे॥२८७॥ १६४७

चहुवान कमान वि कोप लियं।
मिलि भौंहनि खंचि कसीस दियं॥
सर छुट्टति पंखिण सद्द भयं।
मद गंध गयंदनि सुक्क[1] गयं॥२८८॥ १६०८

सर एक सविच्चित[1] सत्त करी।
दल लिख्यित[2] नय कत ठक्क परी॥
जहं जानइ सूर न भीर परी।
ठिल्लइ चहुवान तु अप्प बरी॥२८९॥ १६४९

ठठक्की सेन समि मीर मिल्ले।
विड्डरिय सेन सव्वे न कल्ले॥
वैरि चहुवान राठोर जूरे।
दिक्खियो पंगरे नैन भरे॥२९०॥ १६९५

[२८५] १. अनेक २. सहनाइय ३. राग ४. भांवर ५. भान
[२८६] १. खेत २. जय ३. अयासह
[२८८] १. मुक्कि
[२८९] १. विद्धत २. दिक्खत

कुप्पियो वीर विजपाल पुत्तं ।
अबद्धं राइ जम भार[1] दुत्त ॥२९१॥ १६९९

संप्परे[1] सेन सइ[2] सदाहं[3] ।
नौमि तिथि थलह[4] प्रिथिराज साहं[5] ॥
राजसं तामसं वेगं प्रगट्टं ।
मुक्कियं अेक सानुक्क वट्टं[6] ॥२९२॥ १७००

सार संपत्त पत्ते तिरत्थं[1] ।
मनो आबद्ध रुद्र इंद्रा तिकत्थं ॥
निड्ढरहि ढाल गय मत्त[2] मत्तं ।
पुट्ठि[1] सावंत सामित्त रत्तं ॥२९३॥ १७०१

भूमि भारत्थि ढर सोइ पत्थं ।
अत्थि बिम्र हत्थ प्रथिराज हत्थं ॥
विढे वीर सावंत[1] सा वीर रूपं ।
जिसे सयल[2] सादूल सद्दे सजूपं ॥२९४॥ १७०२

उडे विगावाने स भाने उडंतं ।
जिरे अंकुलाये निकट्टे अनंतं ॥ १७०३
कंपे काइरह लोह रत्ते सरंतं ।
जिसो अनल आरंभ पारंभतं[1] ॥२९५॥ १७०२

इसो जुद्ध अनुरुद्ध[1] मध्यान हूवं ॥२९६॥ १७०४

[२९१] १. जाल
[२९२] १. संहरी २. सीसन्न ३. दीहं ४. थान ५. सीहं ६. वड्ढं
[२९३] १. रच्छं २. कच्छं ३. पत्ति ४. उट्ठियं
[२९४] १. सामंत २. सैल
[२९५] १. प्रारंभ पत्तं
[२९६] १. आबद्ध

नामिय अस्सि ढिल्ली निसानं।
पुट्ठिरे पंग वज्जे निसानं ॥२९७॥ २१५९
चंपे चाइ चहुवान[1] हरि[2] सिंघु नायो।
जिसे सयल[3] ते सिंघ गज जूथ पायो ॥२९८॥ २१६०

कवित्त

करि जुहार हरिसिंघ[1] नयो चहुवान पहिल्लो।
वरिय अनी सावरी लक्ख सूं लर्‍यो[2] अकल्लो॥
अगम कया[3] ह्वो[4] फिर्‍यो धरनि तिलतिल खुरखुंदे।
इक्क[5] लक्ख सों भिरे इक्क[5] लक्खहि रन रुंधे॥
तिल तिल तुर्‍यो नही मुर्‍यो मुरि हय हय आयास भउ।
इम जंपै चंद वरद्दिया च्यारि कोस चहुवान गउ ॥२९९॥ २१६१

दूहा

परत धरनि हरिसिंघ[1] कहु[2] हरिख पंगु दल सब्ब[3]।
मनुह जुद्ध जोगिन पुरह तन मुक्यो सब गब्ब[4] ॥३००॥ २१६२
पुनि[1] प्रिथिराजहि अत्थि दल बल[2] राठोर नरेश।
सिर सरोज चहुवान के भंवर सार[3] त्रिस[4] भेस ॥३०१॥ २१६३

कवितु

देखि[1] सुनहु[2] प्रिथिराज कनिक नायो वर[3] गुज्जर।
हम तुम्ह दुस्सह मिलनु स्वामि हुइ जाइ अपन[4] घर॥
मो[5] रविमंडल भेदि जीव लगि सत्त न छंडउं।
खंड खंड हुअ[6] रुंड मुंड हर-हार ज मंडउं॥

[२९८] १. चौहान २. हर ३. सेन
[२९९] १. नरसिंघ २. भिर्‍यो ३. काय ४. हुअ ५. एक
[३००] १. नरसिंघ २. कहुँ ३. सब्ब ४. ग्रब्ब
[३०१] १. फुनि २. वर ३. सत्र ४. सम
[३०२] १. भौ २. आयस ३. बड ४. अप्पं ५. हौं ६. करि

इह[७] वंस भाजि[८] जानइ न कोइ हो पति पंक अलुज्झयउ ।
इम जंपइ चंद वरद्दिया खट[९] सु कोस चहुवान गउ ॥३०२॥ २१६४

दूहा

वड हथ्थहि वड गुज्जरउ[१] जुज्झि गयउ वैकुंठ ।
भीर सघन स्वामिहि परत चख कमधज्ज[२] अरि ब्रंद[३] ॥३०३॥ २१७८

कवितु

धर तुट्टइ[१] खुर धार लाल[२] फुट्टे[३] सिर उप्पर ।
तव नायो राठोर त्रिपति प्रिथिराज स्वामि छर ॥
खग्गह सीसु हनंत खग्ग खुप्परिव खरक्खर ।
स्रोनित बुंद परंत पंक विद्धिय[४] गयंद धर[५] ॥
वि रचि लोह वरसिंघ सुअ खंड खंड तन खंडयउ ।
निडर[६] निसंक जुझंत रन आठ[७] कोस चहुवान गउ ॥३०४॥ २२०८

दूहा

समर[१] रठोर[२] निराठ[३] वर निडरु[४] जुज्झ गिरि जाम ।
दिनयर दल प्रिथिराज कूं[५] चंपिउ पंग सम ताम ॥३०५॥ २२०७
चंपति पिछोरिय[१] गति[२] चखह हय पट्टन तनु देख ।
तन तुरंग तिल तिज[३] करन भयो कन्ह मनु भेख ॥३०६॥ २२१२

कवितु

सुनहि[१] बात[२] विख रे त[३] लेहि बइठो दल रक्खिउ ।
चिहुरे होइ[४] चंपंत स्वामि अदबुद[५] इहु पिक्खिउ ॥

---

[२०२] ७. इन ८. भग्गि ६. पट्ट
[२०३] १. गुजरह २. निढ्ढुर ३. दिट्ठ
[२०४] १. फुट्टै २. लार ३. तुट्टे ४. किद्धीय ५. घरघ्घर ६. निड्डुर ७. अट्ठ
[२०५] १. सम २. रट्ठोर ३. रट्ठ ४. निड्ढुर ५. कौं ६. भय
[२०६] १. अच्छरि २. रिंढ लगि ३. तिल
[२०७] १. सुनहु २. बत्त ३. पखरैत ४. चहूँ ओर ५. ओटह

पहु पट्टन पल्लानि कटक[६] उह हने गयंदह ।
समर धीर संघरउ भीर बहु परी नरिंदह ॥
रुक्कयो सु छगन जइचंद दलु सिर तुट्यो असिवर कढ्यो ।
जब लगि सहु[७] दल रुकिकयो तब सु कन्ह हयवर चढ्यो ॥३०७॥ २२१३

दूहा

चढन कन्ह सामंत हय जय जय कहै[१] सहु देव ।
मनो कमल करि वर[२] किरन[३] कुरर पंग दल सेव ॥३०८॥ २२१७

कवितु

तब कान्हो चहुवान तुरिय पट्टनु पल्लान्यो ।
हंस किरन कित उड्डि मरन अप्पहो पिछान्यो[१] ॥
कढ करि असिवर लयो[२] गहव[३] गय[४] कुंभ उपट्टइ ।
उड मागइ इहु धाइ देखि अरि दंतह[५] कट्टइ ॥
वह नर निमंक हय वय[६] सयर पिक्खहु चित्त कुचित्तयो[७] ।
वह रुंड माल हर संठयो वह रवि रथ ले जुत्तयो ॥३०९॥ २२४७

दूहा

धरनह कन्हह परत ही प्रगट पंगु न्रिप हंक्क ।
मन अकाल [संकरह हँसि गहिय तुट्टि निधि] रंक ॥३१०॥ २२८३

कवितु

सिर तुटै रुंधयो गयंद कड्ढयो कट्टारो ।
तिह समरी महामाइ देवि दीन्हो हुंकारो ॥

[३०७] ६. हटकि ७. सु तास

[३०८] १. करहि २. सु ३. कलिमल ४. भ्रमर

[३०९] १. पहिचान्यो २. लह्यौ ३. गहिव ४. गज ५. दंतन ६. वर ७. कवित्तयो

अमिय कलस[1] आयास लियो अच्छरिउ उछगह।
भयो परत तिहि सद्द सद्द जय जय सु कहक्कह॥
अल्हन कुमार विभ्रम सुभो रन कवि मानहि[2] मनु मन्यो।
तिम थहि सो लोयन[3] गंगधर तिम तिम संकर सिर धुन्यो ॥३११॥ २२९७

दूहा

धुनि सीस ईस सिर अल्हनह धन धन कहि प्रिथिराज।
सुनि कुप्यो अचलेसु वर मही वरन दिवि राज ॥३१२॥ २२९९

कवित्त

करि सु पैज अचलेसु झुकति चहुवान खग्ग गह।
अरि दल बल संघरिग[1] पूरि धर भरति[2] रुधिर दह॥
मच्छ ति हय वर फुरहि[3] कच्छ गज कुंभ विराजहि।
उअर हंस उड चलहि हंस मुख कमल त्रिराजहि[4]॥
चउसट्ठि सद्द जय जय करहि छत्रपतिय परि संचरिग[5]।
वोहित्थ वीर बाहर भरिउ ढिल्लिय पति[6] चढियउ तुरिग ॥३१३॥ २३१२

दूहा

अचल अचेत जु खेत हुअ परिग पंगु वहु राइ।
पट्टन वइ[1] पहु पट्ट छर त्रिभु[2] विरवर धाइ[3] ॥३१४॥ २३१४

कवित्त

दिनियरु सवि[1] दिन जुद्ध जूह चंपइ सावंतहि[2]।
पर उप्परि सर परइ परहि उप्परि धावंतहि[3]॥
दल दंती विच्छुरहि हय जु हय हय किन नंकति।
अच्छरि पर[4] हर हार धार धारनि झननंकति॥

[३११] १. सद्द २. रन क विमानह ३. लोचन
[३१२] १. संहर्यौ २. भरित ३. तिरहि ४. ति राजहि ५. संचरिय ६. दिल्लीपति ७. तुरिय
[३१४] १. छर २. उठे विंझ ३. विरुझाइ
[३१५] १. सुअ २. सामंतन ३. धावंतन ४. वर

जय जय जु घंट जुग्गिनि करह कलि कनवज ढिल्लिय वयर ।
सामंत पंच खित्तहि खपिग भिरत भंति भइ विक्खहर ॥३१५॥ १७३३

गाथा

विखहर पहट्ट परयं हय गय नर भार सार हत्थेन ।
रह रोस पंगु भरियं ओघरियं वीर बिंबेन ॥३१६॥

कवित्तु

परथो माल चंदेलु जिन्ह[1] धवली धर गुज्जर ।
परथो भान[2] भट्टी भुवाल घंटा[3] घर अग्गर ॥
परयो सूर सावरो[4] जेन वानो[5] मुख मुच्छहि ।
इसे जेत पावारु जेन विरदावलि अच्छहि ॥
निर्वान वीर धावर धनुह नव तर एक नरिंद दल ।
ए परत पंच भउ जुग पहर[6] अगनित भंजिअ पंग बल ॥३१७॥ १७१८

चढ्यो सूर मध्यान्ह पंग परतंग गहन किय ।
खभिर खेह खह मिलिय स्रवन इह सुनिय लीजु लिय ॥
तब नरिद जंगली कोह काढीय[2] चंक[3] असि ।
धीर[4] घुम्मिलि धुंधरिय मनहु दल मंझ दुतिय ससि ॥
अरि अरुन रत्त कोतुक कलह[6] भयो न भवह भिरंत भर ।
सामंत निघट तेरह[7] परिग न्रपति सु पट्टिअ पंच सर ॥३१८॥ १७१६

दूहा

दुइ सर[1] अस्व सि[2] पक्खरह दुइ न्रिप इक संजोगि[3] । १७७१
जुरि घर[4] अत्थि[5] न रत्थि[6] करि अब जंगलवै भोगि ॥३१९॥ १७३३

[३१७] १. जेन २. मान ३. थट्टा ४. सामलौ ५. वानै ६. विप्पहर
[३१८] १. सुरनि २. कड्ढी ३. बंक ४. धर ५. धुम्मरिय ६. कलस ७. पंचह
[३१९] १. वर २. नि ३. संजोइ ४. धर ५ अद्ध ६. निरद्ध

कवित्त

रयन[1] रास रावत[2] रनह रन रंग[3] रंग[4] रस।
उठत एकु धावत्त पंच वाहत्त वीर दस॥
वलि चालउ[5] मोहिल्ल मयंदु मारुव मुह मंधउ।
अरुन अरि लंधिया पंग पारस दल खंधउ[6]॥
नारयन[7] नीर बंधउ वरन दिव दिवान[8] गो देवरउ।
कलहंत जीव[9] सामंत मुअ रहिउ स्वामि सिर सेहरउ॥३२०॥ १७७५

दूहा

संभ सपत्तिय त्रिपति रन द्विय[1] पारस परि कोटि[2]।
रहे सूर सामंत जकि दिखिय[3] त्रिपति तन चोट॥३२१॥ १७७०

कवित्तु

निसि नवमी सिरि चंदु हक्क वाजी चावद्दिसि।
भर[1] अभंग सावंत[2] वीर वरखंति मंत्र असि॥
अजुत[3] जुद्ध आवद्ध इस्ट आरंभ सत्त वर।
इक जीव दस घटित दस त ठिल्लहि सहस भर॥
दिट्ठउ न देव दानव भिरत सुहर[4] रत्त रत तिय[5] सु पल[6]।
सामंत सूर सोलह[7] परिग गन्यो न[8] पंग अभंग दल॥३२२॥ १६२६

छंद भुजंग प्रयात जाति

भयी शरीर टूकंक अंके प्रमानं[1]।
परे सूर सोलह तिके नाम आनं॥
परे मंडली राउ माल्हंत हंसो।
जिने हंकिया[2] पंग रा सख न गंसो॥३२३॥ १६२७

[३२०] १. रेन २. रावत्त ३. जंग ४. अंग ५. वारउ ६. मध्ये ७. खद्धे ८. नारेन ९. देवान १०. बीज
[३२१] १. त्रिय २. कोट ३. देखि
[३२२] १. भिरि २. सामंत ३. अयुत ४. जूह ५. रत्तिय ६. पल ७. सोरह ८. मोरे
[३२३] १. भये राय दुअ कंक इक्कै समानं २. पारिया

परऱ्यो जावलो जाल्ह सावंत भारो।
जिने पारियै पंग खंधार सारो॥
परऱ्यो वारी[1] वाघ वाहे दुहत्थं।
भिरे पंगु[2] भग्गे भरे हत्थ वत्थं॥३२४॥ १९२८

परऱ्यो वीर जंदावली[1] राउ वाना[2]।
जिने नाखिया[3] नैन गयदंत नाना॥
परऱ्यो साह जो सूर सारंग गार्जा।
दुहं सत्थ भऱ्यो भले हत्थ माझी॥३२५॥ १९२९

परऱ्यो पाधरी[1] राउ परिहार राना।
खुले सेरु[2] सारंगु ले पंग वाना॥
जवे उप्पटे पग्ग[3] आवद्ध नीर।
तहां सांखुला सीह[4] भुज पारि भीर॥३२६॥ १९३०

परऱ्यो सींघ सिवास सादूर[1] मोरी।
जगी[2] लोह अगी[3] छगी[4] जानु होरी॥
भिरऱ्यो भोजु अगो[5] नही सार जग्गे।
ढरऱ्यो पंग[6] मानो नही जूर[7] लग्गे॥३२७॥ १९३१

परऱ्यो राउ भोहाउ भो[1] चंद सक्खी।
इके कुसम नखो[2] इके किंत्ति भक्खो[3]॥३२८॥ १९३२

दूहा

म्रित घर कुसल न जेतु सह लब्भ सु कित्तिय भूर।
तिहि मुख प्रगट सु पिंड किय तिहि संघरि गय सूर॥३२९॥

---

[३२४] १. वग्गरी २. खग्ग
[३२५] १. जादौं २. वानं ३. नंषिया
[३२६] १. पद्धरी २. सेल ३. पंग ४. सिंह
[३२७] १. सादल्ल २. लगे ३. अंगं ४. लगे ५. भग्गै ६. मल्ल ७. जूह
[३२८] १. भोंहा उभै २. साखी ३. नंषै ४. भाखी

कवित्त

कलिन कल्यउ अरिजननु मिलिउ भर हर विनु भग्ग्यो।
अजस न लिय जस हीन भग्ग यो अगम न लग्ग्यो ॥
पहु न लिअउ जीवंत गह्यो[1] अपजस नहिं सुम्यो[2]।
कायर[3] जिम दबरि न रह्यो
चलि गयो न मंदिर रह्यो[4] मरन जानि झुक्यो अनिय।
.... भग्गुल धविय ॥३३०॥ २३४९

दूहा

परत देखि चालुक्क धर करिय पंग दल कूह।
इम सु देव इंदहि[1] परस[2] रहे विरि[3] अरि जूह ॥३३१॥ २३४६

कवित्त

राह रूप कम धज्ज गज्जि लग्ग्यो आयासहि[1]।
धारि तत्थ उर जानि फिरिउ[2] पांवारु[3] नन्ह[4] तहिं ॥
रुधि[5] मधु[6] जव करि जीव तनु तिलिमिलि पिंउ[7] उसि।
रत्तु सीस अरि गहिग पानि सुद्धियइ[8] केस कुसि ॥
करि त्रिपति सारु त्रिप पंगु दल अब्बुय पति जय सब्बु किय।
उग्रह्यो प्रहति प्रिथिराज रवि सलख अलख भुजदान दिय ॥३३२॥ २३६१

[३३०] १. गयौ २. सुन्यो ३. ओर ४. दिसह

[३३१] १. करिग २. इन्द्रह ३. परसि ४. वीटि

[३३२] १. आकासह २. फिरयौ ३. पम्मार ४. न्हान ५. रुधिर ६. मद्ध ७. खंड
    ८. सोभियइ

जिते[1] समर लक्खन बघेल आहनति खग्गवर ।
तिधर [तुट्टि धरनहि धुकंत निबरंत] अध धर ॥
तहाँ गिद्ध [रव रुरिग अंत गहि] अंतरु लग्ग्यो ।
तरुन[2] तेज सब्बासु पमुकि[3] पावन घन चग्ग्यो ॥
तिहि सद्द[4] सीस[5] संकर धुन्यो अमिय बिंदु [ससि] उल्हस्यो ।
विडुरयउ धवल संकिय गवरि डरिग[6] गंग संकर हस्यो ॥३३३॥ २३७२

दूहा

दीउ[1] दान पावार[2]जब अरि पंगह सब खेल ।
मरन जानि मन मज्झ रिउ गिरि[3] लक्खिनह[4] बघेल[5] ॥३३४॥ २३६३
परत बघेल सुमेल[1] किय रठि[2] राठोर सुभार[3] ।
जब दस कोस दिली रहिय फिरि तोंवर त पहार ॥३३५॥ २३७६

कवित्त

दल पंगनि राठोर आनि आनि चंपी ढिल्ली[1] धर[2] ।
तब जंप्यो प्रिथिराज पंगु वंसह पहुरण हर[3] ॥
हरि हत्थहि हरि गहहि वान रक्खहि इनि बारह ।
सेस सीसु कंपियउ दाढ दिल्ली भई भारह ॥
कहै चंदु इस अपुव सुनि त्रिप रक्खहि विहु भुव भरयो ।
फिरि कंपि संकि जयचंद दल तोंवर सिरि टटूटुर धरयो ॥३३६॥ २३८३

[३३३] १. जीति २. तरनि ३. पवन ४. नाद ५. ईस ६. टरिग
[३३४] १. दियौ २. पम्मार ३. लरि ४. लक्खन ५. बघ्घेल
[३३५] १. मेल २. रन ३. मार
[३३६] १. दिल्ली २. भर ३. नर

वेद कोस हरि सिंघ उभय तिअ तिहि वडगुज्जर ।
इक्क बान हरनयन निडर नीडर भुइ मज्झर ॥
छगनु पत्तु पल्लानि कन्ह खंचिय द्रिग[1]पालह ।
अल्हवाल द्वादसनि अचल विद्या गनि कालह ॥
सिंगार विंझ सालख्ख दिय पंगु राउ फिरि गेहु गउ ।
सामंत सत्त[2] जुज्झे प्रथम ढिल्ली पति[3] प्रिथिराज भउ[4] ॥३३७॥ २४०३

मुडिल्ल

ढिल्ली पति ढिल्लीय संपत्तउ ।
फिरि पहु रंग राउ ग्रह जत्तउ ॥
जिम राजन संजोगि सु रत्तउ ।
सुह दुह कहन चंद मनु रत्तउ ॥३३८॥ २४८७

दूहा

दिव मंडन तारक सयल सर मंडन कमलानु ।
जस मंडन नर भर सयल[1] महि मंडन महिलानु ॥३३९॥ २४९२
पहिलहि[1] मंडन त्रिपति ग्रिह कनक कंति ललनानि ।
तिहि उप्परि संजोग[2] नग धरि रख्यो वलि वानि[3] ॥३४०॥ २४९३
राजन तिन सह प्रिय प्रमद तन कामिनि गिनि भोग ।
सरइ नि खलु लग्गत पलिति त्रिय नयनन ति संजोग ॥३४१॥ २४९४
सुभ हरम्य मंडिम त्रिपति दिपति दीप दिव लोक ।
सुकल मुक्ख अम्रितु झरहि करहि जु मनुह असोक ॥२४२॥

छंद

अगर धूम[1] मुख गोउख[2] उन्नए[3] मेघ जनु ।
मोर मराल[4] निरत्त हिरन्नहि मित्तु[5] धनु[6] ॥
सारंग सारंग रंग पहुक्कहि पंखि रसि ।
विज्जल काक लसंति[7] झमक्कहि जासु मिसि ॥३४३॥ २५४२

[३३७] १. द्रग २. सथ ३. सोरों पुर ४ अय

[३३९] १. सु भर

[३४०] १. महिलन २. संजोगि ३. वलवान

[३४३] १. धुम्म २. गौखह ३. उनयो ४. मल्हार ५. मत्त ६. घन
७. काकल सानि

दादुर सोर..................जु नूपुर नारि घन
मिमिलिसुर[१] मध व्रत माधुर मंजु मन ॥
सालक पंच पचीस प्रजंक तदून तस ।
तह तह अथि सुर चीन्ह प्रवीण ति दासि दस ॥३४४॥ २५४३

कैव युव[१] यूथ[२]ति वाद[३] प्रमादति मंद गति ।
के चल अंचल वायु निरुप्पहि सह[४] रति ॥
के वर भाखि पराक्रिति संक्रिति देव सुर ।
के गुन[५] ग्यान[६] सुजान विराजहि राज वर ॥३४५॥ २५४४

इह विधि विलसि विलास असार ति सार किय ।
दिव[१] सुख जोग संजोगि प्रिथी प्रिथिराज जिय[२] ॥
अहनिसि..................जान न मानिनि प्रौढ रति ।
गुरु बंध धव भ्रंति लोइ भई विपरीत गति ॥ ३४६॥ २५४५

———

लघुतम रूपान्तर की पुष्पिका

संवत् १६६७ वर्षे शाके १५३२ प्रवर्तमाने आस (1) ढ मासे
शुक्लपक्षे पंचमी तिथौ महाराजाधिराज महाराजा
श्रीकल्याणमल्लजी तत्पुत्र राजा श्रीभाणजी तत्पुत्र
राजा श्री भगवानदास जी पठनार्थं ॥
श्रेय कल्याण श्री शूभं भवतु ॥

आ रासो धारणोज गामना बारोट पथु वजानो छे आने ते धारणोज वाला कीशोरदास हेमचंद शाह मार्फत कॉपी करवा मलेल छे.'

[३४४] १. मिलि सुर
[३४५] १. जुव २. जूथ ३. जवादि ४. सरद ५. वर ६. बीन
[३४६] १. दै २. प्रिय

शब्द-कोश

अ

शब्द	संदर्भ	अर्थ
*अंकन	७६·३	
अंके	३२३·१	अंका
अंकुरिग	१८२·२	अंकुरित
अंकुरे	११२·१	
अंकुलाये	२६५·२	अकुलाये
अंकुसह	२३·४	अंकुश का
अंखुली	२४१·१	अंकुर
अंखिय	१२०·३	(आख्या) कहा
अंखी	१५६·१	चाहना (आकांक्षा)
अंग	६०·३, ६७·४, ६८·४, १३०·४, १६७·३, १७१·२, २६५·४	
*अंगना	१६२·१	नारी
अंगमैं	२७४·६	अंगीकार करना
अंगह	६१·१, १६२·१	अंग का
अंगा	२२५·२	अंग
अंगीक्रित	६१·१	अंगीकृत
अंगे	२३२·२	अंग में
अंगु	१३२·४	अंग
अंगुरी	३३·१	अंगुलि
*अंगुलि	७८·३, १६५·२	
अंग-रंग	६८·३	अंगराग
*अंचल	३७·१, १६२·३, ३४५·२	अंचल
अंगुलिय	१७०·३	अंजलि
अंजुलीय	१७१·१	अंजलि
अंडंगुले	२७१·३	अनंग
*अंत	७५·४, १७७·४, २६४·४, ३३३·३	
*अंतर	२७०·५	दूरी
अंतरे	२७४·५	में
अंदोलिता	६५·१	आन्दोलित
अंध	१७०·४	अंधा
अंधियारी	२७०·१	अंधकार
*अंब	२२·४	माँ
*अंबर	५६·१, २०६·१	आकाश
अंभ	२०४·२, २०६·३, २८३·२	अभ्र
*अंभसु	२५·२	जल
*अंभोरुह	८८·१	कमल
अंसु	७६·१	अश्रु
अकल्ले	२६६·२	अकेला
अकाल	१५३·२, २२८·२, ३१०·२	असमय
अकुल्ल	१६२·१	अकुल
*अखंड	२४४·१	
अखारे	२५६·२	अखाड़ा
अखी	१६६·२	देखा
अगणिन्त	२३१·१	अगणित
अगनित	३१७·६	अगणित
अगम	७०·१, ३३०·२	अगम्य
अग्ग	२५४·२	अग्र
अगर	१२६·१	अगरु

* तत्सम † फारसी

अगार	७१·४	अंगार
अग्गलउ	१०७·२	अग्रिल, अगला
अग्गे	८४·२	अग्रे
अग्गैं	२७०·१	अंगे
अगार	३१७·२	अग्र
अगी	३२७·२	अग्नि
अगो	३२७·३	अग्रे
ॐअघ	२६·२	पाप
अचल	३१४·१, ३३७·४	स्थिर
अचलेसु	३१३·१	अचलेश, राजा
अचलेसुवर	३१२·२	अचलेश्वर, राजा
अचार	१८६·२	चारा
अचेत	३१४·२	अचेतन, बेहोश
ॐअच्छ	२२५·२	स्वच्छ
अच्छइ	१६८·४	अच्छे
अच्छरि	३१५·५	अप्सरि
अच्छरी	१७३·२, २२५·२	अप्सरा
अच्छहि	१६२·२, ३१७·४	स्वच्छ
अच्छहु	१५०·२	अस्ति
अच्छारिउ	३११·३	अप्सरा
अच्छि	३२·२	अक्षि
अच्छे	१६·३	अच्छे
अछार	१८०·१	क्षार
अज	१८१·१	आज
अजुत	३२२·३	अयुत, अयुक्त
अट्ठति	२०६·२	अष्ट इति
अट्ठिय	२५६·२	अस्थितं
अड्ढा	२५१·१	आधा, अर्ध
ॐअति	१४६·२	
अती	२६२·२	अति
अत्ती	५६·२	अति
अत्थ	११३·१	अस्त्र

अत्थि	२६४·२, ३१६·२	अस्त्र
अदब्बुद	३०७·२	अद्भुत
अद्ध	३८·१, २०४·३	अर्ध
अद्दिष्ट	६३·२	अदृष्ट
अध	३२३·२	अर्ध
*अधर	३८·१, ५०·३	
अध्ध	२७०·१	अर्ध
*अनल	२६५·४	
*अनिल	२३६·२	
अनी	२७०·५, २८३·४	सेना
अनु	१५१·२	अन्यथा
अनुरत्तिय	१६३·४	अनुरक्त
अनुसरहि	११०·४	अनुसरण करना
अनुसरिग	११२·४	अनुसरण किया
अनुरुद्ध	२६६·१	अनिरुद्ध
*अनुहार	११०·६	
*अनूप	१२१·१, १४२·१	
अनेक	३५·२, ६७·२, ८७·३, ११५·२, ११६·२, १७३·१, १७७·३	
अनेग	२८५·१	अनेक
अन्नोन्न	६१·४	अन्योन्य
*अनंग	३६·१, १७१·२	
*अनंतं	२६५·२	
अनंदने	२४२·२	आनंद (न)
अपजस	३३०·३	अपयश
अपन	३०२·२	अपना
*अपर	३१५·६	
अप्प	२४६·२, २७६·३	अपना
अप्पण	२७५·६	अपना
अप्पतं	१६·१	अर्पित
अप्पयं	१७७·४	अर्पितं

शब्द	संदर्भ	अर्थ
अप्पहो	३०६·२	अपना
अप्पतुं	१६८·३	अर्पित करूँ
अप्पिग	१२३·१, १४८·१	अर्पित किया
अप्पिया	१४८·२	अर्पित किया
अप्पु	४८·४, २७४·२	अपना
अप्पो	१००·३	अपना
अपा	१३८·२	अपना
अपु	२७·३	अपने आप, स्वयं
अपुब्ब	७४·३	अपूर्व
अपुव	३३६·५	अपूर्व
अपूरव	२४५·२	अपूर्व
अपंति	१७१·१	अर्पंति
अब	१८४·३, ३१६·२	अब
अब्बीर	६४·३	अबीर
अब्बुय	३३२·५	आबू
अब्बुअ	२०८·३	आबू
अब्भ	१२६·२	अभ्र
*अभिमान	६६·१	
अभंग	३२२·२, ३२२·६	अभग्न
अमग्ग	७१·१	
अम्महि	१६८·२	
अमरच्छरि	२६·२	
अमलत्तिन	२६·३	अमलत्व
अमिय	३११·३	अमृत
अम्रित	१६३·२	अमृत
अम्रितु	३४२·२	अमृत
अमीलि	६३·२	
अयास	१६५·२, २८६·४	आकाश
*अर्क	१५·१, ४६·४, ५८·२, ६५·२	सूर्य
अरंभ	२०६·३	आरंभ
अरधंगे	२६·३	अर्धांग
अरप्प	१३४·३	अर्प
अरब्बी	१६०·१	अरबी
*अरविंद	५६·४	
*अरि	३०·१, ६४·४, १८६·३, २७४·६, ३३०·२, ३३१·२	
अरिजननु	३३०·१	
*अरिदल	३१३·२	
अरिन	८८·२	अरि (बहुवचन)
अरिय	१३·२	अरि
अरी	२८६·२	अरे
अरु	२·२, ८०·२, १६०·१	और
अरुन	३१८·५	अरुण
अरुनैं	५०·४	अरुण
अरोह	५१·२	आरोह
❀अलक	४२·१	
अलक्कं	५१·२, ११८·२	अलक
अलक्ख	१३८·३	अलक्ष्य
अलख	३३२·६	अलक्ष्य
अलग्गिय	१६०·१	अलग्न
अलप्प	१६०·३	अल्प
अलाप	१२२·१	आलाप
❀अलि	२८·२	
अलिय	१२८·१	अलि
अलुज्झ	५२·२	अलुब्ध, उलझ ?
अलुज्झउ	३०२·५	अलुब्ध
अल्हर	३११·५	अल्हड़
अल्हन्यो	३३३·५	अल्हड़पन किया
अल्हवाल	३३७·४	अल्हपाल
अवद्ध	४०·२, २६१·२	आबद्ध
अवन्न	११८·२	अवर्ण्य
अवास	१६५·१, १८५·२	आवास

अवासि	४४·२	आवास में
अवासन	१६४·२	आवासों
अवरेख	४८·३	अवलेख°
अस	२७९·३	ऐसा
असनान	१०१	स्नान
†असमनह	२०२·२	आसमान
असाढ़	११५·२	आषाढ़
*असार	३४६·१	
*असि	१०८.१, १२५·१, १६६·२, २६८·२, ३१८·३	
असिय	२३०·२	असी (अशीति)
*असिवर	२६९·४, ३०९·३ ३०७·५,	
अस्सि	२९७·१	असि
असी	२७४·६	अशीति
असु	१९२·२	अस, ऐसा
असोक	३४२·२	अशोक
अस्टमी	२७०·२	अष्टमी
*अस्तमित	२६६·२	
अस्व	१७५·१, ३१९·१	अश्व
अह	३४६·३	अथ
अहवा	१९७·२	अथवा
अहिह	६४·३	अस्ति, है
अहारे	१५४·१	आहार में
अहुट्ठिय	२७१·२	अधिस्थित

आ

आइ	८७·१, ८९·१	आकर
आइस	१२५·५, १७०·१, १४४·१	आदेश
आउ	१०६·१, १४५·३	आओ
आकास	६०·१, १५६·४	आकाश
*आगत	२६८·१	
*आगमे	२५७·४	
आचरे	१७३·४	आदरे, आदर किया
आठ	६७·२	अष्ट
*आडंबरं	५५·३	
आदरु	१०६·१	आदर
*आदि	२४५·	
आनि	२०८·४	ले आकर
आने	१५४·२	ले आए
आनं	३२३·२	अन्य
आपए	१७१·४	अर्पित किये
आपस	२३·२,	परस्पर
आभरनं	२४·२	आभरण
आयान	१५१·१	अजान, अज्ञानी
आयास	२९९·५, ३११·३	आकाश
आये	२७८·१	
आरोहि	५५·१	चढ़कर
*आरंभ	२२६·२, २९५·२, ३२२·३	
आलमी	३८·२	
आलापु	१४५·३	आलाप
आली	२८०·२	अलि
†आव	२७६·५, २७९·२	आब
आवज्झ	२२६·४	आबद्ध
*आबद्ध	२९३·२, ३२२·३, ३२६·२	
आवध्य	१२·२	आबद्ध
आवधे	१५५·२	आबद्ध
आवज	१३४·२	आबद्ध
आवहि	१६८·४	आता है
*आवास	१८४·४	

आवि	६७·२	आकर
आवै	१०४·१, १५६·४	आता है
आस	१५६·२, १७५·३	
*आसने	६८·१	
आसाढ़	२५७·४	
आहनंति	३३३·१	
*आहार	४७·३	
आहि	८४·२	है
आहुट्यौ	२७०·४	अधि + √ स्था-
आंगमइ	३·६	
आंतिकि	६५·४	अन्त्य

इ

इंद	८०·१	इंदु
इंपाई	३३१·२	
इंदाति	२६३·२	
*इंदु	११·४, ३२·२, ४८·२, ६३·४, १२६·४, १६६·१	
इंदुराज	६·३	
इंदो	८८·४	
इक	३·६, ६·३, १०२·१, ३२२·४,	एक
इक्क	६·२, ११०·४, १७७·२, २७६·४, २६६·४, ३३७·२	
इक्कावनइ	१·१	
इक्कन्त	१६०·४	
इक्कु	३·६, १६०·४	
इके	३२८·२	
इच्छ	१२३·२	इच्छा
इत्त	६६·२	इतना
इत्तनहि	२३८·३	इतना
इत्तनउ	१४६·५	इतना
इत्तने	२६६·२	इतने
इत्तु	११·२	अत्र
इते	१६·२	इतने
*इतो	२७५·६	अत्र
इनिहरि	१०६·२	अनुहार
इनि	१२२·२, १६६·२, ३३६·३	इन्हें
इम	५५·३, ११०·२, २७०·६, २६६·६, ३३१·२	ऐसा
इसो	२६६·१	ऐसा
इस्ट	३२२·३	इष्ट
*इह	१४·१, ३२·२, १०६·२, १२२·१, १४५·२, १६५·१, ३१८·२	यह
इहति	१४६·१	यह
इहि	११०·६, २७७·५	इसे
इहे	१६१·३	इसे
इहै	२६६·५	यही
इहु	१६६·२, २०७·२	यह

ई

ईस	२५·१, ५१·४, ३१२·१	ईश
उंक	११८·२	
उखारे	२६०·२	
उग्रलो	३३२·६	
उग्रो	२२६·२	
उच	२७·२	उच्च
*उच्च	३७·२	
उचरे	६१·४, ६४·१	उच्चारण किया

शब्द	स्थल	अर्थ
*उच्चार	६० १	उच्चारण
उच्चारहि	८६ ४	उच्चारण करता है
उच्छ्र	१४१·२	
उच्छरे	३६·१, २२७· १	उछले, उछाले
उछंग	१७३·२	उत्संग
उछिये	११·५	
उजग्गे	६४·१	जगे
उज्जले	३७·२	उज्ज्वल
उज्जेये	२३३·३	
उझकि	१९३ ३	उचक कर
उटंकि	९४.४	
उट्ठयइ	६७·१	उठता है
उट्ठि	१६४·२, १८४·२, ३०९·२	उठकर
उट्ठियं	१४६·१, २५७·१	उठा
उठंति	११६·१	उठते हैं
उठत	३२०·२	उठता है
उठिग	११२·३	उठा
उठित	८४·१	उठा
उठिते	१७·३	
उठे	२०४३	
उठ्यौ	१४६५	उठा
उठंति	३७·१	
उडंतं	२६५·१	उड़ते हैं
उड	८·१, ३१३·४	उड़ा, उड़कर
उड्डु	१३४·२	उड़कर
उडिय	३·५	उड़ा
उडे	२५८ २, २६५·१	
उडुं	६४·३	
उड्डि	४८ ४	
उतंगं	५३·३	उत्तुंग
—गा	२२५ १	
*उत्तर	१३.२ १४·२, १९१ ३	
उत्तरयो	१०० ४	उतरा
उत्तरिय	९·१	उतरी
*उदय	२७२·१	
उद्दंगह	३११ ३	उर्ध अंग
*उदित	११·१	
उदै	४९ ४, १४६ २	उदय
उद्धरे	६९·१	उद्धार किया
उन्नये	३४३·१	झुके
उन्नयो	९४ २	झुका
उनरोह	१३७·१	
उनिहारि	१४९·२	अनुहार
उने	२४०·१	उन्हें
उपट्टइ	३०९·३	उत्पाटित होता है
उपारे	२६०·१	उखाड़े
उपंग	६८·२	ऊपरी अंग
उपंगा	२२३·२	
उप्पज्यो	१२ २	उत्पन्न हुआ
उप्पमा	१५४·४, २२७·३	उपमा
उप्पमे	५२·३	उपमित किया
उप्पर	३०४·१	ऊपर
उप्परहि	१८०·१	ऊपर
उप्परि	३१५ ३, ३४०·२	ऊहर
उप्परे	१५१·४, २८४ ४	ऊपर
उप्पटे	३२६·३	
उभ	१८२·१	उभय
उभद	१६७·३	
*उभय	३११, १६७·१, २६८ १, ३३७ १	
उभार	२६२ २	
उभै	५१ ४	उभय

उभी	१४०·३	उभरी
उवर	३१३·४	उबरना
उये	१५·२	उगे
*उर	४८·२	उर की
उरक्की	१५६·३	
उरद्ध	१३७·१	ऊर्ध्व
*उरमाल	२८·१	
उरिल	३१·३	
उलट्टि	१३६·१	उलट कर
उलिंचि	७१·४	
उवंति	७६·२	उगते हैं
उव	११०·३	उगा
उवै	१०७·१	उगता है
उस	५४·२	
उह	३०७·३ ३०६·४	वह
उहइ	१४·१	वही

ऊ

ऊखवनं	२०७·२	
ऊघट्ट	१५७·१	उघरा
ऊनी	२०६·३	ऊन
ऊयो	१२६·२	उगा

ए

ए	६८·३, ८८·४, १४०·४, १४५·४ ३१७·६	ये
*एक	१०·१, ८७·४, ६६·४, १२२·१, १३६·१, २२६·१ २७४·३, २६२·३, ३१७·५	
एकइ	११३·१	एक ही
एकइ	११३·१	
एकु	३२०·२	एक
एग	१८६·१	एक
एड्डि	५५·३	एडी
एम	१७४·१	ऐसा
एमि	२३२·३	ऐसा
*एव	२००·१	ही

ऐ

ऐन	४६·१	अयन
ऐराव	१६·२	ऐरावत

ओ

ओउ	६८·४	वह
*ओप	७७·४	
ओर	४०·२	
*ओस	१५६·४	

औ

औहि	२३०·१	

क

*कंकण	१७६·२	
कंकन	७६·३	
कंकम	१८३·२	कुंकुम
*कंचन	३२·४, ४२·२	
कंचू	५२·१	कंचुक
कंटी	१४०·२	
कंठ	२०·१, १६०·२, १६३·३ १५५·२ १७१·४	
कंठाव	३१.१	कंठ
*कंठि	६८·१	कंठ में
कंठील	१६०·२	कंठ का
कंठै	६५·३	कंठ में
कंड	२०·१	कांड

कंत	१७७ ४	कान्त
कंति	३४० १	कान्ति
*कंद	११० ४, २६०·२	
*कंदल	६४·३, २७०४	
*कंदला	२६०·२	
कंदलि	६५·२	कंदली
कंध	१५६ २, २०६·२	
	२४८·३ २५८·३	स्कंध
*कंप	७२ २, १६७·१	
कंपहि	१६८ १	काँपते हैं
कंपि	३३६·३	काँपता है
कंपियउ	३३६·४	काँपा
कंपिय	१२०·१	काँपा
कंपे	२६५·३	काँपे
कंपै	२३७ २	काँपते हैं
कंवारि	१७८ १	कुमारी
कइ	१६५·२ किस	किस
कउ	१६७·३	को
कच्च	५५ ४	कच्चा
कच्चच	२०८·२	कच
कच्चं	२६४·३	कच
कच्छु	३४ २, ३१३.३	कच्छ
कच्छी	१६०·२	
कछु	२७८·३	कुछ
कज्ज	५·२	कार्य
कज्जे	२६५·४	कार्ये
कट	२०६·२	कटा
*कटक	३०७·३	
कट्टरी	१३४ १ १३४·२	कटारी
कटे	२५८ ३	
कटकति	२८२·१	कटक
कड्ढि	३३·२	काढ़कर

कड्ढाई	७६·१	काढ़ता है
कड्ढे	१५६·२	काढ़े
कढे	२८७ २	काढ़े गए
कढ्यो	३०७ ५	काढ़ा गया
कतं	२६५·२	कुत्र
कत	१५१·२, २८६ २	कुत्र
कत्तिज	४५·२	कितना ही
कते	२६७ २	कितने
कथ	१६७ २	कथा, कहा
कथाई	१२७·२	कहते हैं
कथहे	८·२	कहता है
कत्थं	२६४·२, २६३·२	कथा
कत्थइ	२७६·३	कहता है
*कथा	८·२, ११७·२	
कथिक	१२७·२	कथक
*कथित	८·२	
कन	६१·४	कण
*कनक	१२·४, ५४·१,	
	६८·४, ३४०·१	
कनक्क	१७५·२	कनक
कनंक	३३·२, ७५·३	कनक
कनवग	३१२·६	कान्यकुब्ज
कनवज	१·२, १६८·३	कान्यकुब्ज
कनवज्ज	१३·३, १४५·३,	
	१४६·३, १५२·२	कान्यकुब्ज
कनवजहे	३·१	°का
कनवज्जि	६०·४	°में
कनिक	३०२·१	कनक
कने	११७ २	
कन्ह	१८५·२, ३०७·८,	
	३०८·१, ३३७·३	कृष्ण
कन्हयहु	१८३·२	कृष्ण कस्य

कलस १५·२, १२४·१, ३११·३ कलश
कलह ३१८·५
कलहंत ३२०·६ कलह करते हुए
*कला १४०·१
कलाहासियं १०५·१ कल ह्रास करनेवाली
कलिंदी ५१·१ कालिंदी
*कलि २६७·२, २७४·५, ३१५·६
कलिकार ५९·४ कलिकाएँ
कलिन ३३०·१ कलियाँ
कलिमले २०·१ कलि-मल में
कल्लि १२३·२ कल
कल्ले २९०·२
कल्यउ ४३०·१
*कवि ८७·१, ८९·१, ९०·३, १२३·१, २८०·१, ३११·५
*कविता १२६·१
कवित्तनौ २७९·६ कवित्व
कवियन ३२·१ कविजन
कवियहि ८७·१, ८९·१ कवि को
*कविराज ८३·४
कसंत ७५·३ कसा हुआ
कसिक्कसि ७६·१ कसा-कसाया
कसीस २८८·२ कौशीष
कहं ४७·३ को, के लिए
कहंत ३८·२ कहता है
कह २७·३, ३०९·३ कहा
कहइ ३२·१, ८५·५, १८८·२, ३०९·४ कहता है
कहक्कह ३११·४ कहकहा
कहणो २८०·१ कहना
कहत १४९·५ कहते हुए
कहतु ३१५·१ कहता है
कहन २७५·२, ३३८·४ कहना
कहहि ९·३, १४९·६ कहते हैं
कहारो ३११·१
कहायो २७५·२ कहलाया
कहि ८७·४, १०७·२, १२०·३, १२१·१, ३१२·१ कहकर
कहिग १३·१ कहा
कही ४३·२
कहु १५२·२, २०२·१, ३००·१ का
कहुं १६८·२ का
कहूं १६·१, ३५·२, ९१·३
कहे ७४·२, ८२·१, २७९·२
कहेस १३·२ कहा
कहै १४९·३, ३०८·१ कहता है
कह्यो ८१·२, १०६·१ कहा
काइर १९८·२ कायर
काइरह २९५·३ कायर का
कांतिहर २०·१
कांता १४१·१
काज ९·४, २९·१, ५९·२, २२९·१ कार्य
काढीय ३३८·३ काढ़ लिया
कालंकलि १४१·२
कान्हों ३०९·१ कान्ह
कामकला १४०·२ कामकला
काम ४०·१, ४२·४, ११६·२, १३२·२, १७६·२, १८८·१ १९४·२

कामसी	१७५.४	
कामहर	१६५.२	काम को हरने वाला
कामा	१९७.२	
कामागनि	१९०.२	कामाग्नि
*कमिना	१३९.२	
कायर	३३०.४	
कारणइ	१.२	कारण
कारन	४५.२	
कारा	१५५.३	
काल	१७६.२, २४५.२, २६६.१	काल का
कालह	३३७.४	
कालेषु	१८८.१	कालों में
कालेसु	१८८.२	कालों में
किं	९५.१	क्या
कि	१६५.२	
किउ	१०५.१	किया
कित	३०९.२	कहाँ
कितकु	१०७.१	कितना
कित्ति	२७७.५, २२८.२	कीर्ति
कित्तिय	३२९.१	कीर्ति
कितोकु	१०७.२	कितना
किननंकति	३१५.४	
किनहि	८१.२	किन्हें
किनि	९२.३	किन्हें
किन्हों	३.५, ९०.१, १४९.५	किया
किधौं	८६.३	या
किधु	१६५.२	या
किमि	९२.२	क्यों
कियं	८३.२, ९८.२	किया

किय	१०३.२, १२६.१, २८५.१, ३१८.१, ३३२.५	किया
कियो	४६.२, ८५.४	किया
कियउ	१४५.३	किया
किरक्कि	१३६.१	
किरण	१५.१, २८९.१	
किरन	३०८.२, ३०९.२	किरण
किरनीन	११.४	किरणों
किस	२५.५	कौसा
किहु	१३९.२	किसे
की	२०९.१, २७७.१	
*कीच	७१.४	
कीजइ	६०.४	कीजिए
कीतं	५६.२	किया
कीन	२७२.४	किया
कीने	१९०.३	किए
कीयो	८८.२	किय
*कीर	३८.१, ६५.१, ७४.२, ७८.४, ९४.६, १२९.२	
कीरती	२७७.५	कीर्ति
*कुंकुम	१२४.१	
कुंडली	१३७.३	
कुंडीनु	५४.४	
*कुंद	२४२.२	
*कुंभ	१४१.२, ३०९.३, ३१३.३	
कुंभर	१४१.३	हाथी
कुंकुम्भ	५४.४	कुकुंभ
कुच	३६.१	कुच
कुचित्तयो	३०९.५	कु+चित्त०
कुछु	१२३.२	कुछ

शब्द	संदर्भ	अर्थ
कुड्क्यो	३११·१	कुदा
कुप्पियो	२६१·१	कोप किया
कुप्प्यो	३१२·२	कोप किया
❀कुमार	८२·१, ३११·५	
कुमुदिनि	२६७·२	
कुरंग	१६·४, ६६·२, २६४·२	
कुरम्म	२६६·५	
कुल	५२·४, १५२·१, १६२·४, २७६·३	
कुल्लये	२४३·१	कूल में
कुलि	१७६·३	कूल
❀कुवलय	४६·१	कमल
कुवेरी	२२७·२	
कुसम्ह	१३४·२	कुसुम
कुसल	३२६·१	कुशल
❀कुसुम	६५·१, ३२८·२	
कुसि	३३८·४	
❀कुसुमित	२८·२	
❀कुहर	३०८·२	
कूं	३०५·२	का
कूरंभ	३·५	(नाम विशेष)
कूरंभे	२०६·३	(नाम विशेष)
❀कूल	२५२·१	
कूह	३११·१	क्रोध
के	६१·३, ८८·३, ११६·२, २५५·२, ३०१·२	
केम	१०·४	कैसा
केरी	२२६·२	की
❀केलि	२३·१, ५२·४, १७०·३	
केस	३३२·४	केश
❀केसरी	३५·१	
केहइ	२७६·३	कैसा
केहरीन	१७४·२	केसरियों को
कै	२·२, ६१·१, १०१·२	या
कैव	३४५·१	या
को	६०·३	कर्म परसर्ग
को	६४·६	कौन
कोइ	४०·१, ३०२·५	कोई
कोकनंद	५२·१	कोकनद
❀कोकिलं	१२०·१	
कोकिले	११६·१	
❀कोट	२५५·२	
❀कोटि	५८·२, ६१·२, १६६·२, ३२१·१	
कोतुक	३१८·५	कौतुक
कोतिग	२०५·४	कौतुक
कोद	२३४·१	कोना, कोर, ओर
❀कोप	२८८·१	
कोपियां	२५६·४	कुपित
कोपीन	६१·२	कौपीन
❀कोमल	१७०·३	
कोरि	६६·२, १८६·३, १६८·२	कोर
❀कोल	२४६·१	
कोस	१७६·३, २३३·४, २५६·४, २७०·५, २७६·३, ३०२·६, ३३५·६	क्रोश
कोह	३१८·३	क्रोध
कौन	२१८·१	
क्यूं	१५४·४	क्यों
क्रितचंगे	२६२·२	चंग करने वाली
क्रितभंगे	२६·२	भंग करने वाली
क्रियण	२७८·३	क्रिया

*क्षात्र	६६·१	
*क्षिति	७८·२	पृथ्वी

ख

खंच	२५१·१	खींचना
खंचि	२८८·२	खींचकर
खंचिय	३३७·३	खींचा
*खंड	६८·३, २२७·३	
	३०२·४, ३०४·५	
खंडयउ	३०४·५	खंडित किया
खंडियउ	२७८·५	खंडित किया
खंधउ	३२०·४	स्कंध
खंधार	३२४.२	कंधार, स्कंधावार ?
खंभ	४२·२	खंभा
खग्ग	२५६·४, ३१३·४	खड्ग
खग्गवर	३३३·१	खड्गवर
खग्गह	३०४·३	खड्ग का
खट	३०२·६	षष्ठ
खत्त	६५·३	क्षित, क्षेत्र ?
खत्ति	१७३·२	क्षेत्र
खन	१६०·३	खोदना
खपिग	३१५·६	खप गया
खमिर	३१८·२	
खरम्भर	३०४·३	खलबली
खरह	२७२·१	तेज
खह	३१८·२	खेह, क्षार
खाडयो	२५६·४	खंडित किया
खिंचिय	१६६·२	खींचा
खिणि	४·२	क्षण
खित	*१५·२ २७८·६	क्षेत्र
खित्तहि	३१५·७	क्षेत्र में
खीन	५३·४	क्षीण
खुंद	१६२·४	खूँद
खुत्त	१३३·४	क्षुब्ध
खुदंतं	१६०·३	खोदना
खुप्परिव	३०४·३	खप्पर
खुले	११६·१, ३२६·२	
खुरखुंदे	२३६·३	खुर से खोदना
खुरति	४·२	खुर
†खुरसान	१०३·३	खुरासान
खुत	२६२·१, ३१३·१	क्षेत्र
खेत	३१८·२	
खेध्यो	१०१·२	खेदना, भगाना
खोलंत	६२·१	खोलता है

ग

गंग	१६२·१, १७३·२	
	२४३·१	गंगा
गंगह	३२·४	गंगा में, का
गंगधर	२७९·६, ३११·६	गंगाधार
गंगधारं	५१·४	गंगा की धारा
*गंगा	१४३·४, २२४·४	
*गंगामुख	६६·३	
गंगे	२६·१	हे गंगा
गंज	३६·२	नष्ट करना
गंजन	३०·१	नष्ट करना
गंजहु	६२·२	नष्ट करो
गंजि	२७७·१	नष्ट करके
गंठही	१७४·	गांठ देना
गंठि	१७७·२, १८७·२	ग्रंथि
*गंडस्थली	१४१·१	
गंडीर	२२४·३	
गंदे	२७·३	
*गंध	११७·१, २२२·८	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
गंध्रव	२२·१, २७·१	गंधर्व
※गंभीर	२२·४	
गंमो	३२३·४	ग्रस्त
गउ	२९९·६, ३०२·६ ३७७·५	गया
गगन्न	६८·३	गगन
※गजं	१४१·१	गज
※गज	९४·४, १५७·२, १८०·१ १८२·१ १९६·२, २९८·१ २१३·३	
※गजपति	९२·२	
※गजराज	२८३·१	
गज्जि	३३२·१	गर्जना करके
गज्जुर	२७५·३	गुर्जर
गड्ढे	१५५·१	
गणि	२३१·१	गिनकर
गणै	११०·२	गिनता है
※गत	२७·२, २६७·१, १६८·१, २८६·३	गया
गत्त	२७१·३	गात्र
गत्ते	६२·४	गात्र में
※गति	२७६·२, ३०६·१ ३४६·४	
गन	२७·१, १८०·१	गुण
गनि	३३७·४	गिन कर
गन्यो	३२२·६	गिन कर
गब्भ	५२·४	गर्भ
गय	५७·१, ८१·१, ३२२·४, २४०·१, २८०·२, ३०९·३	गज
गयंद	५३·३	गजेन्द्र
गयंदा	१६·१, ३०४·४, ३११·१	
गयंदनि	२२२·४	
गयंदह	३०७·३	गजेन्द्र का
गयउ	३०३·१	गया
गये	१९०·४, २६३·४, ३६०·१	
गयो	७९·४, ८३·१, १४५·३	
गयदंत	३२५·२	गजदंत
गरु	८५·३	गुरु
ग्रवरि	३३३·६	गौरी
गव्व	३००·२	गर्व
गसंन	२७१·१	ग्रसते हैं
गह	११०·२, ३१३·२	ग्रह
गहग्ग	३९·१	गहगह
गहणो	२८०·१	ग्रहण
गहन	२४७·२, ३१८·१	ग्रहण
गहनी	२०·२	ग्रहण करने वाली
गहव्व	३०९·३	ग्रह्+तव्यत्
गह्यो	७९·२, ८१·२, ३३०·३	गहा
गहरन	८४·२	रण में गहा
गहहि	११०·४, ३३६·३	गहता है
गहि	११०·४, १३५·६, १४८·२, ३३३.३	ग्रहण करके
गहिग	३३२·४	गहा
गहिय	३१०·२	गहा
गहियो	२३८·४	गहा
गहुग्गह	१९९·१	गह गह
गहो	८८·२	ग्रहण क्रिया
गाइ	७४·२	गाकर

गाजनै १०२·३ गर्जना
†गाजी ५९·४, ३२५·३
गाजे २५७·४ गरजे
गावही ६८·१ गाते हैं
गाहंतो २७७·१ अवगाहन करते हुए
गाह १५७·२ गाथा
गिनि ३४०·१ गिन कर
गिनै ५७·२ गिनता है
गिद्ध ३३३·३ गृद्ध
गिद्धी २६४·४ गृद्धिनी
गिरंत २०९·२ गिरता है
*गिरि २६·४, ९४·५, १०१·२, ११०·४, ३०५·१, ३३४·२
*गीत १३१·१
गुंजारया १४१ ३ गुंजार किया
*गुंजार १४१·३
*गुंड १०२·१ पराग
गुंथिय ७२·३ गूंथा, ग्रथित
गुज्जर ३०२·१, ३१७·१ गुजर
गुज्जरउ ३०३·१ गुर्जर
गुन ८७·३, ९०·१, १६८·४, १८१·२ ३४५·४ गुण
गुनि ९२·३ गुन कर
गुनियन ८६·१ गुणिजन
गुना १४०·३
*गुरु ११·१, १३१·१, १९४·१, ३४४·४
*गुरुजन १६८·१
गुहिल्लय ३·३ गहलोत
गुहिलोतु २६९·१ गहलोत
गून ५२·३
गेरव २७५·३ गौरव
गेह ५८·३, ६६४·४, ९२·२, १७३·३, २७३·२ गृह
गेहिनी २७३·२ गृहिणी
गैन २५८·३
गो ३२०·५ गया
गोल २३४·१
गोवल्लकुंड १०१·४ गोपालकुंड
गोरि २७५·४ गोरी
गोरी २७७·१ गोरी
गौन १८९·२ गौण
ग्यान ३४५·४ ज्ञान
ग्यारह १·१
ग्रह ३३२·२
ग्रहनि ३३२·६ ग्रहण
ग्रहै २६४·४ ग्रहण करता
ग्रिद्ध २६१·४ गृद्ध
ग्रिद्धणी २६१·४ ग्रिद्धनी
*ग्रह २·१, ६·२, १३७·२, १३७·२, १८६·२, ३४०·१ गृह

घ

घंट २२७·१, २३६·१, ३१५·६ घंटा
घंटनि २०५·३ घंटे
*घंटा ३१७·२
घंटी ३१·३
घटि १३९·१ घट कर
घटिग १२·३ घट गया

घटित	३२२·४	घट गया
घट्ट	१५७·१	घट गया
घट्टिय	२७५·१	घटित
घर्न	२०७·१, २८२·१	
*घन	३·२, १२६·१ ३३३·४	
*घनसार	१२६·१	
घनी	२८३·३	
घमंडि	१३३·३	घमंड करके
घर	२७६·५, ३०२·२, ३१६·२, ३२६·१	
घरणि	२७६·५,	घरनी
घरि	२३८·३, २७६·२	घर में
घरी	२०६·४	घड़ी
घरु	२७७·६	घर
घरे	२६५·३, २७७·६	घर में
घाउ	२०२·४	घाव
घाट	७८·२, २७६·३	
घिर	२२७·१	
घिरि	३३२·१	घिर कर
घुंटिका	१३३·२	घंटिका
घुट्यौ	२७०·३	घुट कर
घुरं	२०५·३	नादानुकृति
घुले	२६२·२	
घूट	२२८·२	घूँट
घेरि	२८२·१	
घोरं	२३६·१	

च

चंक	३१८·३	
चंगा	२२३·१	स्वस्थ
*चंचल	३२·३, १६१·२	
*चंड	१००·१	
चंती	८६·४	
चंद	३५·३, १०६·१, २६६·६, २६६·३	
चंदणी	२७०·१	चांदनी
चंदनु	१६२·१	चंदन
चंदु	११०·६, १२६·१, ३२२·१	
चंदे	२७·१	कवि चंद
चंदेलु	३१७·१	
चंपत	३०७·२	चांपता है
चंपति	७८·४, ३०६·१	चांपता है
चंपही	१७७·२	चांपते हैं
चंपइ	३१५·२	चापता है
चंपि	४८·४, २७७·२	चाँपकर
चांपिउ	३०५·२	चाँपा
चंपिय	२०२·२	चाँपा
चंपिये	२३४·४	चाँपे
चंपी	३३६·१	चाँपी
चंपे	२६८·१	चाँपे
चउसट्ठि	३१३·५	चौंसठ
चक्काइं	२६७·१	चक्रवाक
चकि	१२१·१	चकित होकर
*चकित	८५·३	
चक्कि	१३६·१	चौंककर
चक्की	२६७·१	चक्रवाकिनी
*चक्रवर्ति	१३६·४	
चख	२७·३, ३२·३, ११०·४, ३०३·१	चक्षु
चखह	३०६·१	चक्षु का
चखी	२४६·२, २५१·२, २५२·१	देखी

चढ्ढि	२७८·६	चढ़कर
चढंत	३०८·१	चढ़ता है
चढंति	१६३·१	चढ़ता है
चढ्यो	१६४·१, ३०७·५, ३१८·१	चढ़ा
चढिय	२२८·१, २२९·१	चढ़ा
चढियउ	३१३·६	चढ़ा
चढिउ	१३·४	चढ़ा
चढ़ी	६४	
चढ़े	२८७·१	
चढ़ै	४२·२	चढ़ता है
*चतुर	११०·५	
चत्तरंग	१०७·१	चतुरंग
चप्पिडय	१४७·२	चपड़ी
चम्पि	१५९·२	चाँपकर
चमकांति	२३८·२	
चमकि	१६५·१	
चमके	२०७·१	
चरन्तं	२८·३	चरते हुए
चरंति	२४३·२	
चरताल	२८·३	
चरन	२४·१	
चरन्न	१७४·४	
चरहि	४·२	
चरित्त	५७·२	चरित,
चरित्तनु	१६२·२	चरित्र
*चल	३४५·२	
चलउ	५७·२	
चलंत	४०२	
चलंति	११५·१	
चलहि	३१३·४	
चलि	१२५·१	

चली	११३·१, २०५·२	
चलु	८८·२	
चले	१८९·१	
चलै	२७९·६	
चल्लै	१७·३	चलता है
चल्या	१५३·२	चला
चल्यो	३·१, १४.२ १७८·१	
चवना	१४०·३	
चहुं	११०·५	
चहुंवान	४२·१, ५९·४, १०४·२, १०९·३··· ११०·५, १२०·१, २७०·४···	चौहान
चाइ	१३१·२, २९८·१	चाव से
चाउ	१३·४	चाव
चातग	१९१·४	चातक
*चामर	२९·२	
चार	६८·१, २७०·३	
चारा	१५६·१	
चारि	९०·१	
चारित्त	१९·३	चरित
*चारु	१९ ३, २७२·१	
चारे	२५९·३	चले
चालं	२८·२	
चालउ	३२०·३	चला
चालक्य	१०१·२	चालुक्य
चालिं	६८·२	
चालिउ	१·२	
चालिनं	१३७·१	
चालु	८८·२	
चालुक	२७७·२	चालुक्य
चालुक्क	३३१·१	चालुक्य

चावद्दिसि	३२२.१	चतुर्दिक्
चाहंति	६३.२	देखते हैं
चाहनं	१३६.१	देखना
चाहिति	७६.१	
चाहियं	१७२.१	
चाहुवान	३.३	चौहान
चाहू	२४६.२	
चाह्यो	८६.१	
चिक्काये	२३३.४	ललकारे
चिट्टिय	२७५.२	
चिडिग	१६८.२	चढ़े
चितु	१८४.२	चित्त
चित्त	६.१, ३४.१, ३६.२, १७७.२	
चित्तखी	२५३.२	
चित्तनि	२८०.२	
चित	८५.३, १३१.२, २२७.२	चिंता करना
चिंता	६.१	
चिहुरे	३०७.२	चिकुर
*चीर	६६.१	
चुक्को	६६.२	चुक गई
चुनहि	६४.७	चुँगता है
चुव्वइ	२३६.२	चूता है
चुवरेण	६५.१	
चै	२७२.१	
चैत	१.१	
चाट	३२१.२	
चोप	६१.३, २३६.३	प्रेम
चोर	७३.४	
च्यारि	२६६.६	चार

छ

छंडणो	२४४.१	छोड़ना
छंडनि	१६२.२	
चंडउ	३०२.३	
छडि	७६.२	
छंडिय	१८५.२	
छंडियो	१०२.१	
छंदी	८८.४	छंद
छंदे	२७.१	
छगन	३०७.५	शिशु
छगनु	३३७.३	
छगी	३२७.२	छकी
छछोरी	५४.३	छोरी, छोकड़ी
छट्ठिय	२६७.१	षष्ठी
छत्त	२४३.२	छत्र
छत्तपति	८५.२	छत्रपति
छत्तिया	३५.२	छाती
छत्तीस	१०४.१	
छनि	१३६.१	छनकर
छने	१०३.१	क्षणे
छब्बि	३५.२	छबि
छर	३०४.२, ३१४.२	क्षर, क्षार
छह	११०.१, ११३.१	
छत्र	१७५.४, २०८.४, २२१.२, २८४.१	
छत्रपतिय	३१३.५	
छत्रीस	६५.३, ११०.१	छत्तीस
छाँडि	१४५.५	छोड़कर
छिति	२८.१	क्षिति
छित्त	५८.४	छत्र
छिनि	१६६.३	लक्षण ?
छिपे	१०२.२	

छीर	१७३·३	छीर
छूटि	१५३·२	
छुट्टति	२२८·२	
छुट्टियं	१५५·३	
छुट्टे	१५२·३	
छुट्टै	५१·३	
छेह	५८·४	स्नेह, छेक, छेद
छैलु	६२·३	
छोडि	१७३·४	
छोरि	१७८·२	छोड़कर

ज

†जंग	२५८·४	युद्ध
जंगली	२७०·३, ३१८·३	
जंगलवै	३१६·३	जंगलपथि
जंगुली	२७७·५	जंगली
जंघया	३४·२	
जंघं	२६४·१	
जंघ	१७७·३	
जंजाले	२०·२	
जंजरि	२६·३	जंजीर
जंदावलो	३२५·१	
जंदे	२७·३	
जंपइ	११०·६	कहता है
जंपि	८५·१	
जंपही	१६७·१	
जंपै	२६६·६	
जंबु	२३·१	जंबुक
जंबुयदीप	२५·४	जंबू दीप
जंभीर	२२·४, ५०·१	जंभीरी नीबू
ज	७७·३, ८७·२, ३०२·४	जो

जइ	१४१·४	यदि
जउ	६०·२, १५०·२	
जाकि	३२१·२	जककर
जक्कि	१५८·२	
जके	१५६·२	
जकै	६२·१	
जखि	१४२·२	
जग्गं	४७·१	
जग	२७·१, २७१·२	
जग्गति	२७७·१	
जग्गये	२४५·१	जागे
जग्गिजे	१८·१	जागिए
जगि	४८·१	जगत में
जग्गिय	१६०·२	जागा
जगी	३२७·२	जागि
जग्गी	२२२·३	जागी
जग्गे	३२७·३	जागे
जज्जुरी	३३·२	जाज्वल्य
जटन	२६·३	जटाएँ
जटाल	२४५·२	जटिल, जटावाला
जटित	२३८·१	
जतन	१६३·१	यत्न
जत्तउ	३३८·२	यत्र
※जन	२०३·१	
जनहित	३०·१	
जनि	१४६·४	नहीं
जनु	२०४·२, २८३·२	मानो
जप	३१५·६	
जब्ब	१०८·२, २७६·६, ३३४·१	
जम	२७·२, २६१·२	यम
जमजाल	२६६·१	यमजाल

जमाय	१३५·२	यमाय, यम के लिए
जम्मइ	३०२·६	
जन्म	११६·२, १७३·४	जन्म
जम्मु	२७६·५	जन्म
*जय	२६·१, ३१३·५	
जयति	१७६·१	
जयनै	१४०·१	
जयपत्त	६०·२	जय-प्रतिष्ठा
जम्मो	३३६·२	
जरनं	७५·३	
जराउ	७४·१, ७५·३	जड़ाव
जरु	१६६·३	
जरे	७७·१, ७८·१	
*जल	२६·४, १६२·२, २७६·४, २७८·२	
*जलद	५०·१	
जलन	१२६·१	
जलद्दरं	२४०·१	जलधर
जवजन	६७·१	युवाजन
जवनहुँ	६२·१	यवन भी
जवे	३२६·३	
जस	६·४, २७·१, ३३०·२	यश
जसु	२५·४	यश
जहं	२८६·३	यत्र
जह	८३·२, १४२·१	जहाँ
जहि	६१·२, १४३·२	जहाँ
जहु	२७६·४	
जा	११५·१	
जाइ	५८·१, ७२·३, १४६·४	
जाइदौ	२७७·४	यादव
जाई	१००·१, १०३·१,	

जांगरा	३·४	
जाणूं	२३६·२	जानूं
जातिग्गति	१३४·१	यति गति
जाथइ	२५·५	जहाँ
जान	१७१·१, १७३·२, ३४६·३	जाना
जानं	५६·३	जांने
जानइ	२·२, २८६·३, ३०२·५	जानता है
जानए	५६·२, १७४·१	
जावत	१८१·१	
जानयो	१३८·२	
जानि	४७·१, ६४·५, १०४·४, १७२·२	
जानिय	८६·४	
जाने	१५८·१	
जानै	२·२, २६१·४	
जानु	१३६·२, १५६·४, ३२७·२	
जाम	७·१, १३६·१, १६४·२, २७०·३	याम
जामतेज	६५·२	याम तेज
जामिति	७५·४, १२१·२	यामिनी
*जालं	२८·२	
जालोर	१७७·२	
जाल्ह	३२४·१	
जावलो	३२४·१	
जास	२२४·४	जिसे
जासु	६७·१ ५८·२, २६६·१	
जांह	४४·१	जहाँ
जाह्नवी	२२·४	

जि	२१·२, ४३·२	जो
	६८·१	जिनके
जिके	६२·३	
जिग्गं	२५६·३	
जिते	२६५·४, २७४·४	
	३३३·१	जितने
जिन	२८६·२	नहीं
जिनके	२०७·४	
जिने	३२३·४, ३२४·२	
जिनै	९९·१	जिन्होंने
जिन्यो	१४५·४	
जिन्ह	३१७·१	
जिम	११०·२, १९१·४,	
	२२५·२, २३०·४	जैसे
जिय	३४६·२	जीव
जियण	२७७·५	जीवन
जियन	२७६·५	जीवन
जिवन	९·४	जीवन
जिह	८२·२, १२१·२	
	१२२·२	जहां
जिस	२९५·२	जैसे
जिसे	२२४·२, २९४·४,	
	२९८·२	जैसे
जिसो	१०८·१, २९५·४	जैसे
जिहो	८·३, ८५·५,	
	१०६·२, ११०·२	जिस
जीति	९८·२	जीतकर
जीरा	१०२·१	
जीव	३०२·२, ३२०·६,	
	३२२·४	
जीवन	१८७·२	
जीवंत	३३०·३	
जु	३५·३, ३४·१.	
	६७·१, ७३·३, १२१·१	जो
जुग	२९·१	युग
जुगिति	२१५·६	योगिनी
जुज्झ	१७६·४, ३०५·१	जुझकर
जुज्झि	३०३·१	जूझकर
जुत	१३६·२	
जुतो	१६९·२	युक्त
जुत्तयते	३०९·६	
जुद्ध	१०९·३, १८४·३,	
	६६·२, ३९६·१	युद्ध
जुध	२४७·१	युद्ध
जुधि	१८३·१	युद्ध में
जुध्ध	१२·२	युद्ध
जुय	७८·१	युगल
जुरंता	२३२·३	जुड़ते हैं
जुरि	३१९·२	जुड़कर
जुरे	५३·३, १३८·४,	
	२५९·२	जुड़े
जुव	७७·१	युवा
जुवान	३५·१	जवान
जुहार	२९२·१	
जुहि	४२·१	जुही
जूथ	६१·१, २९८·२	यूथ
जूप	६१·३, १७३·१	यूप
जूर	३२७·४	
जूरे	२९०·३	जुड़े
जूह	३१५·२, ३३१·८	यूथ
जे	५७·१, ६१·१–३,	
	९२·१, १५४·१	जो
जेते	४७·१	जितने
जेन	२१७·३, २१७·४	जिनके द्वारा

जेहरी	३३·२	
जै	१६०·४	जय
जैचंद	८२·२	जयचंद
जैराम	१४०·४	जयराम
जो	२६·१, ६३·१, ११६·१	
जोइ	८८·१, २०८·१	देखकर
जोए	२५१·२	देखे
जोग	१३५·२, ३४६·२	योग
जोगिनपुर	३००·२	योगिनी पुर (दिल्ली)
जोगिनापुर	१७६·१, २६१·२, २८१·२	
जोट	२६१·२	जोड़ा
जोड़ि	८५·१	जोड़कर
जोति	४८·१, ४६·२, १३१·४	ज्योति
जोध	८०·२, २५८·२	योद्धा
जोप	७७·३	
जोद्ध	५०·१	
जोवइ	१२१·२, २३२·४	देखता है
ज्यं	५·२	ज्यों
ज्यूं	१०६·२, २०२·१	ज्यों
ज्वालाह्वी	२०·३	

झ

झंकि	१३३·२, १६३·३	झाँकना
झंपै	२३७·१	ढकना
झरत	१६३·४	झरता है
झननंकति	३१५·५	झनझनाना
झरइ	३०६·४	झरता है
झरहिं	३४१·२	झरते हैं
झनं	१३३·२	ध्वनि
झलकंत	१२·४	झलकता है
झटकंत	२३२·४	झटकता है
झखी	२५३·२	
झकोलति	३२·४	झकोरती है
झाग	१५६·२	ज्वाल
झारंतो	२६६·४	झारना
झरि	२५८·२	झाड़े
झिप्पि	२३७.१	झिंप कर
झिलमिलिग	११·३	झिलमिलाया
झेले	१५४·३	
झुक्क्यो	३३०·५	झुका
झुल्लंति	१५७·२	झूलते हैं
झुकित	३१३·१	
झू झत	२७४·३	
झूसे	३१५·१	

ट

टंक	२५१·१	
टखी	२५१·१	
टट	२८·२	
टट्टुर	३३६·६	
टुट्टिय	२५·३	टूट्य
टामक	१५३·१	
टारे	१०४·२	टाले
टुट्यो	३०७·२	
टूकंक	३२३·१	
टेरे	२२७·१	पुकारे

ठ

ठक्क	२२६·२	स्तब्ध
ठठुक्की	६६·१	ठिठकी
ठिल्लइ	२२६·४	ठेलता है

*तत्र	१७३·१	
तब	६०·१, १०८·२	
तबल्लं	२२३·३	तबला
तब्ब	१६६·३, ३३६·२	तब
*तम	२७१·१	
तमालह	२२·३	
तमि	२६·२	तिमिर
तमीर	१२६·१	
तमूल	१४६·१	ताम्बूल
तमोर	१६३·३	ताम्बूल
तमोरि	१७७·४	ताम्बूलवाहिनी
*तर	११·३	
तरनि	१६१·४	तरणि
*तरल	२६·२	
त रं	२६४·२	
*तरंग	१६२·१	
तरंगे	२६·२	
तरप्प	१७२·२	तड़प कर
तराजन	७७·३, २०६·४	तारा जन
तरिऊ	१२५·२	तारने वाला
तरुन	४६·२, ३३३·४	तरुण
तरुनि	१३१·२	तरुणी
तरुने	१४१·४	
*तल	२२·३	
तलप्प	१६०·३	तल्प
तलत्तलमु	१३८·१	ताल
तव	८५·१, ८५·४, २७६·५, ३०४·२	तव
तबे	२५६·४	तभी
तवोरह	१४७·२	ताम्बूल का
तस	३४४·३	तैसा, वैसा
*तस्य	१६४·२	उसका

तहां	२६६·१, ३२६·४, ३३३·३	वहाँ
तहि	१४५·४, ३३२·२	वहाँ
ता	४६·३, ६०·४, ६८·२, १६१·२	वह
ताजी	१६०·४	ताजा
ताजे	२५७·१	ताजे
*ताटंक	४६·३	
*तात	१६४·१	
तान	७५·१	
तानी	४७·३	
तानु	१३२·४	उसे
तानुक	७५·१	
तापते	१८·३	
तापसा	१८·३	तापस
ताम	१७५·१, ३०५·२	तत्र
*तामसं	२६२·३	
*तार	११·६, ६६·२, ७३·२, १२२·२ १३०·२, १४०·१	
*तारक	३३६·१	
तारत्त	५०·३	
तारए	११२·२	
तारया	१३४·१	
*तारा	१५६·४	
*ताल	२२·३	
तालिना	१३७·१	ताली से
तासु	६८·२, १७३·४, २७५·३	उसे
ति	३१·१, ३२·३, १७०·३, १७३·३ २०७·४, २७४·१	ते, वे

तुरयो	१६६.५	तुरंग
तुरा	१४१.२	त्वरा
तुरिग	३१३.६	तुरंग
तुरिय	३०६.१	तुरंग
तुरिया	१६२.४	तुरंग
तुलंतु	७७.३	तुलना
तुलसाइ	१४७.१	
तुष्ट	२०.२	
तुसा	६५.१	
तें	४६.१, ८६.१,	
तेग	१८६.२	तेग़
तेज	४६.३, ५५.२ १२७.१, ३३३.४	
तेजि	१५५.३, १७५.१	
तेडिय	२२८.२	
तेय	६८.३	
तेरह	३१८.६	
तेसे	२२४.३	तैसे
तैं	२७७.१ .२, .३, .४	तुमने
तैनु	६०.१	
तोंवर	३३५.२, ३३६.६	तोमर
तो	६३.२, १५१.२	
तोरि	१०१.४, १७१.४	तोड़कर
तोहि	१२३.१	तुम्हें
त्राहु	१५६.१	
त्रिगामऊ	१२८.२	त्रिपथगामी
त्रिए	२२६.२	तीन
त्रिवल्ली	३१.४, ५२.१	त्रिवली
त्रिय	७.१, २१.१, १२१.२, १२२.२	
त्रियन	११२.३	
त्रियाम	२८६.३	

त्रिविद्ध	१३५.२	
त्रिस	३०१.२	
त्रीणि	१४७.२	
त्रीय	७.१	तीन
त्रैलोक्य	२०.२	

थ

थंभ	५४.१, ६४.३	स्तम्भ
थक्कि	३६.३, १७१.३	थक कर
थक्की	१५८.१	
थट्ट	६४.१	ठाट
थट्टी	१८१.१, १८६.३	ठाट, स्थित
थड्ढे	१६.१	थके
थप्पियं	१००.२	स्थापितं
थल	२६८.२, २७०.४	स्थल
थलह	२६२.२	स्थल पर
थवाइस	१४५.५	
थाज	१६६.१	थाल
थान	२७६.१	स्थान
थानए	१७४.२	स्थान पर
थानि	६६.२	स्थान पर
थारि	१७१.३	थाली
थिक्कति	२१.१	√स्था०
थिर	११२.१, १४५.५	स्थिर
थुंग	१३२.२	नादानुकृति
थेइ	१३२.२	नाद०
थै	१३२.२	नाद०

द

दंगे	२६.४	
दंडं	६८.४	
दंत	३८.२, १६६.२, २३२.१, २७४.३ ३०६.४	

दंता	२३२·४, २६०·१	
दंतिय	१८२·२	दंती, हाथी
*दंती	२३१·१, २७४·३, ३१५·४	
दंतीनु	२६०·१	हाथियों के
दंद	१२·२	द्वन्द्व
दंसन	२५·४ ४५·१	दर्शन
दई	१८४·४	दी
दक्खिण	४·२	दक्षिण
दक्खिन	१५०·२	दक्षिण
दक्खिनं	१३४·४	
दच्छिन	२०८·३	दक्षिण
दच्छिन्न	२२३·३	दक्षिण
दच्छिनी	६७·४	दक्षिणी
दच्छिनै	६०·३	दक्षिण को
दपत	११.२	दीप्त
दप्पनं	५३·१	दर्पण
दबरि	३३०·४	दबकर
दमके	२०६·४	
दये	७२·४	दिए
दर	८३·१, १६५·१	
दरदेव	१४३·१	
†दरबार	७६·४, ८५·२, १४२·२	
दरसन	२६·१	दर्शन
दरसाइ	२०·४	दरसा कर, दिखा कर
दरसाए	१६२·२	
दरसे	२०७.३	
दरसौ	५०·२	
दरि	१०५·२	
दरिद्द	१७५·२	दरिद्र
†दरिया	१०३·२	

दरिस	५६.४, १४४.२	
*दल	१०८.१, १४६·४, २०७·१, ३१७·५, ११८·४, ३२०·४, ३२२·६ ३३१·१,	
*दलबल	३०१·१	
दल्ली	२३५·४	दिल्ली
दलु	३०७·५	दल
दव्व	६२·४	द्रव्य
दस	१४४·१, २७०·५, २८२·२, ३२०·२,	
दसहि	२७६·१	
दह	७६.३; १६३.२, ३१३·२	दश
दहार	४·१	दहाड़
दहि	६६·३	
दाच्छिनी	१००·३	दाच्छिनी
*दाडिम्ब	८८·१	
ददुरं	११५·२	दर्दुर
*दान	१०·१, ११०·३, १७०·४, १७१·१, २३४·१	
*दानव	३२२·४	
दानिव्व	६२·२	
*दारु	१७७·१	
दारुन	१४६·२	दारुण
दालमी	३८·२	
दावंत	२८०·२	
दासि	४४·१, ६३·१, १७२·२, १७३·२, ३४४·३	
दासिया	१२०·१	दासी

❀दासी	७२·४	
दाहिम्मो	२६९·२	दाहिम
दिखइ	११·४	देखता है
दिखत	८४·१	देखता है
दिखायो	२७५·१	दिखलाया
दिखिय	३२१·२	देखा
दिक्खति	१६५·१	
दिक्खन्त	१६१·२	
दिक्खन	१७२·१	देखना
दिक्खि	१४५·२, २३७·२	देखकर
दिक्खिय	३२·१, ७५·२, ११२·१, २२९·२	
दिक्खियहि	२३२·१	
दिक्खियो	२९२·४	
दिक्खियै	१६·२, १६०·४	
दिख्ख	५९·५	
दिक्खइ	२३१·२	
दिख्खण	१·२	
दिख्खत	७९·४	
दिख्खन	३·१, ९१·४	
दिख्खयो	२१·१	
दिख्खियं	५८·१	
दिक्खियज	१२·४	
दिख्खिये	६२·२	
दिख्खिहि	७३·३	
दिगंत	२४२·१	
दिच्छन	१७८·२	दक्षिण
दिजइ	२७९·१	दीजिए
दिट्ठ	९७·१	दृष्टि
दिट्ठउ	३२१·४	दीठा, देखा
दिढ़	१४४·६	दृढ़
दिड्ढ	१७७·२	दृढ़

दिनं	२०३·३	
❀दिन	८२·२, ९९·४, ३१५·२, ३४२·१	
दिनयर	४५·१, ३०५·२	दिनकर
दिनयरु	३१५·२	दिनकर
दिने	७६·२	
दिन्हो	९०·२	दिया
दियं	२२८·२	दिया
दिय	११९·१, १९९·३	
दियो	१४५·४	
दिख्यो	२६९·३	देखा
दिख्ख्यो	१९३·३	
❀दिव्य	५७·२, २५२·१	
दिल्लीभर	१४५·४	
दिव	२०४·४, ३३९·१, ३४६·२	
दिवसि	२६९·६	
दिव्व	२२·२	दिव्य
दिवान	३२०·५	देवान
दिवी	२२·२, ३१२ २	
दिसं	१३४.४	दिशा
दिसंग	१३४·१	दिशांग
दिस	८·१	
दिसहि	११०·५	
दिसा	१३५·१, २२३·२, २४०·२	
दिसि	७९·३, ८५·३, १२०·२, १२४·२, १२७·१, १५३·१, २०९·१	
दीउ	३३४·१	दिया
दीजइ	१५४·४	दीजिए

दीढी	४३·२	
दीन	२७८·३	
दीनइ	२७८·३	देने से
दीन्हों	३११·२	दिया
दीप	१२६·१, ३४२·१	
दीसं	४६·१, ५३·१, २४२·२	दिखाई पड़ा
दीस	२५·१, १५७·२	दिखाई पड़ा
दीसत	२७१·१	दिखाई पड़ता है
दीसै	५८·४, २६१·३	
दु	७८·३	से
दुश्रण	१६१·२	दो जन
दुइ	३१६·१	दो
दुज	७३·४, १७०·४	द्विज
दुजन	११०·३, १४५·२	दुर्जन
दुज्जन	११२·२	दुर्जन
दुति	६८·४	दुति
दुतिय	२१८·४	द्वितीय
दुत्त	२६१·२	द्वित्व
दुधार	८२·२	दो धारवाली तलवार
दुधारे	१५४·३	
दुभाइ	३६·२	
दुम्मान	२४८·२	
दुर	५२·४	
दुरदेव	१६६·१	
दुराइ	३६·१	छिपाकर
दुल्लभ	२४·१	दुर्लभ
दुल्लह	४६·२	दुर्लभ
दुल्लही	४५·१	दुर्लभा
दुवार	५७·२	द्वार
दुवाल	२०३·३	देवालय
दुसहु	१४६·३	दुस्सह
दुस्सह	३०२·२	
दुसेर	२०६·३	दो सेर वाला
दुहं	३२५·४	
दुह	२०३·२, २३८·४	दुख
दुहत्थ	३२४·३	दो हाथो से
दुहुं	१०१·१	दोनों
दुहु	४५·२, २०४·१	दोनों
दूत	१६८·३	
दूपा	६३·२	
दूरि	३१३·२	
दूव	१७७·१	दोनों
दे	६१·२, १६६·३, ३६६·५	देकर
देइ	८०·१, १०८·६	
देउ	१६५·६	
देख	३०६·१	
देखत	६०·३, १३०·४	
देखते	१८·४	
देखि	४८·३, ७६·३, १७६·१	
देखिन	७३·४	
देखिय	६८४·४	
देंतु	१७४·४	देते हैं
देय	१७७·१	
देयानि	१४७·२	
देव	१६२·१, २०५·४, २८६·४, ३०८·१, ३०८·१, ३२२·५, ३३१·२, ३४५·३	
देवरउ	३२०·५	देवल
देवाल	१८·२	देवालय
देवि	३११·२	

देश	६·२, १३·१	
देस	६८·१, १००·३, २२३·२	
देहि	१४५·६, १६२·२, २७४·५	
दैत्य	११·१	
दोइ	११२·२	दो
दोख	५४·२	दोष
दोहं	५८·२	दोनों
दोह	१६७·२	दोंनों
द्वादसनि	३३७·४	
*द्विजराज	१६१·४	
द्विय	३२१·१	
द्रबु	७२·४	द्रव्य
द्रवे	७२·१	द्रवित हुए
द्रव्व	६७·२, १४४·२	द्रव्य
द्रम	१३७·३	द्रुम
द्रिग	७१·२	दृग
द्रिगपालह	३३७·३	दिगपाल
द्रिस्टि	१६०·१, २७१·२	दृष्टि
द्रुमं	२६३·३	
द्रुम्म	२५२·२	द्रुम

ध

धंकने	१३८·१	
धज	३३२·१	धज
*धन	६४·१, ३१२·१	
धनिध्धनी	१३२·३	धन्य धन्य
धनिय	३३०·६	धनिक
धन्नि	१३२·३	धन्य
*धनी	२७०·६	
*धनु	७०·२, ३४३·२	
धनुक्क	११८·१	धनुष्
धनुख	५६·२	धनुष्
धनुह	३१७·५	धनुष्
धने	१३८·१	
धमं	१३५·१	धर्म
*धर्म	१३·४	
धर्मह	२२६·१	
*धर्माथेषु	१८८·१	
*धर	१२·१, ६८·३, २७६·२, ३०४·१, ३१३·२, ३१७·२, ३३३·२· ३३६·१	धरा
धरम्मह	१३०·१	धर्म का
धरंगं	२६४·१	
धरंति	६५·८,१३५·१	धारण करते हैं
धरण	२७८·२	धरणी
*धरणि	२७६·२	
धरनह	३१०·१	धरणी पर
धरनहि	३३३·२	धरणी पर
धरनि	६८·२, २६६·३	
धरवी	२५०·२	
धराखित	१६०·३	धरा-क्षेत्र
धरिनि	१३१·२	
धरिय	१३१·२	धर लिया
धरे	२३·३	
धरो	२२४·४, २७५·६	
धरया	१३४·४	धारण किया
धव	११२·४, ३४६·४	
*धवल	३३३·६	
धवला	३१७·१	
धा	१३२·३	
धाइ	१७०·१, ३०६·४, ३१४·२	दौड़कर

धाई	२२७·१, ३४०·२	दौड़ी
*धातु	७०·२, १७५·३	
*धार	३७·३, १३३·३, १७३·३, २०४·१, ३१५·५	
धारनि	३१५·१	
धारि	३३२·२	
धावत्त	३२०·२	दौड़ता है
धावंतहि	३१५·२	
धावतै	१५७·४	
धावै	२३३·२	
धावर	३१७·४	धवल
*धीर	३०७·४, ३१८·४	
धीरत्तनु	१८२·१	धीरता
धुंधरिय	२१८·४	धुँधला
धुंसनं	२००·१	
धुकंत	३३३·२	
धुंनं	२८२·२	ध्वनि
धुनि	१२८·१, १६५·१, ३१२·१	ध्वनि
धुनी	२२·२	ध्वनि
धुन्यो	३११·६, ३३३·५	धुना
धुप्पदं	१३६·३	ध्रुपद
धुम्मिलि	३१८·४	धूमिल
धुरंगा	२३६·३	
धुरक्की	१५६·४	
धुरि	१३·४	
*धुरी	१५७·४	
धुरे	२६४·३	
धुल्लिय	७१·२	
धुव	६७·२	ध्रुव
धुवंति	७३.२	

धूधरियं	२०६·२	
*धूम	३४३·१	
धूव	६८·१	ध्रव, ध्रुपद ?
*ध्यान	१८·३	
*ध्रुव	४·१	

न

नं	१३५·१	
नंखिय	१२०·२	नष्ट करना, रोकना √नश्
नंग	३१·४	नग्न
नंगा	६१·२	
नंदा	१०३·४	
*न	७३·२, ८७·४, २८६·३, २६०·२,·३	
नखं	५३·१,	= नख
नखंनख	७६·१	= नखशिख, पूरा-पूरा
नखी	१६१·४, २४६·२, २६२·१	√नश्
नखो	३२८·२	
नख्खहि	७१·३	
*नग	४८·१	
नग्ग	७७·१	
*नग्न	७८·१	
*नगर	४४·२	
नच्चए	६८·४	नाचते हैं
नच्चै	२२४·४	
नछत्तनु	२५५·१	नक्षत्राणि
नट्ट	१३६·१	नट
नट्टरी	१३४·२	नर्तकी
नट्ठै	१६·४	नष्ट होता है
नतम	२६·४	
नथुंग	१३२·२	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
नासं	२६३·३	नाश
नास	१०६·१	
नासिका	३६·१	
नासुराहं	६८·२	
नास्ति	१६४·४	
नाह	१७३·३	नाथ
नाहि	२२७·२	
नाइ	८५·२	नत्वा, नमन करके
नानु	३१५·१	
निंद	१३६·२	नींद
निंदग	१२२·१	
निंब	२३·१	
नि	७७·१	
निकट्टे	२६५·३	निकट
निकत्थ	११३·१	
निकस्सि	२८६·२	निकलकर
निघट	३१८·६	
निघट्टिया	२६६·६	वध किया
निट्ठुरं	२४४·१	निष्ठुर
निडर	३०४·६, ३३७·२	
निड्ढरहि	२६३·३	(नाम विशेष)
नितंब	५३·३, १२६·२	
*नितंबिनि	१३०·२	
नित्त	११०·६	नित्य
नित्ति	२२३·४	नृत्य में
नित्तु	१३०·२	नृत्य
निद्र	६२·१, ६३·२	निद्रा
निद्रा-दलं	१४१·२	
*निधि	३१०·२	
निनारा	१५७·१	
निनारे	२६४·१	
निवरंत	३३३·३	निबटना
निभान	१०·३	
निम्मयी	४५·२	निर्मित किया
निम्मलं	५३·१	
निय	२६·३, ४५·१, १३६·२	निज
निरखि	४८·१, ६४·४	निरीक्ष्य
निरक्खि	१३६·१, १७२·१	
निरक्खियं	१३२·३	
निरक्खिय	१३१·२	
निरख्खहि	७८·३	
निंरत्त	१३६·२, ३४३·२	नृत्य, निरत
निराठ	३०५·१	
निरुप्पहि	३४५·२	निरूपित करता है
निबट्टि	२०८·१	निवृत्त
*निर्वात	४६·२	बिना वायु का
निर्वान	३१७·५	निर्वाण
निसंक	१८६·१, २०४·६, ३०६·६	निःशंक
निसंत	१६६·१	निशान्त
निस	१४३·१	निशि
निस-के	६४·१	
निसा	८·१, १२७·१, २०३·३	निशा
निसाचरे	२४२·२	निशाचर
निसाहर	२२३·१	निशिहर
निसान	१०·२, २२३·१, २७७·२, २६७·१	वाद्य विशेष
निसानह	२०२·१	
निसि	८१·१, ८२·१, २६७·१, २६८·१, २७०·३, ३२२·१, ३४६·३	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
निठुरत्त	१०२·४	
निसे	२०६·३	
निसेधाइ	१७६·२	निषेध
नींद	२७०·३	
नीच	१७१·४	
नीवि	२२·१	
नीरं	३२६·३	
*नीर	१२·४, १३·२, ३३·१, २७३·१, ३२०·५	
*नीलं	५६·१	
*नील	२६५·२	
नुरे	२०४·४	
*नूपुर	३४४·१	
नूपुरा	११५·१	
नेनयं	१३८·३	
नेरी	२२६·३	
नेह	५४·२; २७२·२	स्नेह
नैन	४६·२, ६२·३. १७२·१, २६०·४, ३२५.२	नयन
नोपुर	१३३·२	नूपुर
†नौबति	८१·१	नौबत
नौमि	२६२·२	नवमी
न्याइ	६६·४	न्याय
न्रितावत	१६६·४	नचावत
न्रिति	६६·१	नृत्य
न्रित्त	६६·२ ६७ १	नृत्त
न्रित्तनी	२२६·२	नर्त्तकी
न्रिप	११·१ ८३·२ १६६·१ ११२·४ ११७·१ १३६·२ १४८·१ १०१·१ ३१०·१ ३१६·१	नृप
न्रिपति	११.५ १०५.१ १२४·२, १५०·१, २५५·१, ३१८·६, ३३२·५, ३४०·३	नृपति
न्रिपु	१२८·१	नृप
न्रिप्पु	१८२·२	नृप

प

शब्द	संदर्भ	अर्थ
पंकं	२४१·१, २६३·१, ३०४·४	कीचड़
पंखिरा	२२८.३	पक्षी (बहुत)
पंखी	१५६·१	पक्षी
पंग	२४६·१, २५३·१, २५४·१	जयचंद
पंगनि	३३६·१	
पंगह	३३४·१	
पंगरे	२६०·४	
पंगुपुत्रीय	१७६·१	संयोगिता
पंगुर	१८४·१	जयचंद
पंगुरा	२७४·४	
पंगुराइ	६२·३, १६६·१	
पंगुरो	४६·१, १७३·३	
पंच	२७६·३, ३१५·७, ३१७·६	
पंचसर	३१८·६	
पंचास	१०८·२	पचास
पंजरि	२६·२	
पंड	५६·३	पांडव
पँडीर	२०६·१	पुंडीर
पंडुए	१६१.१	
पंडुरे	२६१.१	
पंडुरी	३४ १	

पंति	१३८·२	पंक्ति
*पंथ	२५६·३	
पक्ख	१७७·१	पक्ष
पक्खर	२२८·१	घोड़े का झोल
पक्खरउ	१४६·४	
पक्खरे	१५६·१	
पक्खरइ	३१६·१	
पखर	१५३·१	
पक्खि	६८·४	पक्षी
पक्खे	२३८·२	पक्षे
पखी	२५०·२	पक्षी
पग्ग	३२६·३	पंग
पच्छमी	१५८·१	पश्चिमी
*पट	७०·२, १४४·१	
पटोर	७३·३	रेशम
पठावहि	१६८·३	भेजना
पट्टन	७०·१	पत्तन, नगर
पट्टने	६६·४	पत्तन में
पट्टु	२७७·६	पट्ट
पट्टे	२३४·३	
पट्ठिअ	३१८·६	भेजा
पट्ठिए	२४८·३	भेजे
पता	१४०·४	
पति	१६३·४, २८८·५, २८१·२	
पतिग	१४२·१	प्राप्त, पहुँचे
पतो	२७३·१	
पत्त	३३·१, ६८·४, ६४·१, १७·२	पत, प्रतिष्ठा
पत्ति	३३२·५	पति
पत्तिय	१६३·३	पति
पत्ते	२६३·१	

पत्तु	२३७·३	
पत्थं	२६४·१	
पत्थि	२८४·३	
*पथ	१७१·२	
पथिक	२७१·२	
पनिहार	४३·३	
पनी	२८४·३	घनी
पपठो	२७६·१	
पमः	१५६·१	
पमुति	३३३·३	
पम्मर	२८३·३	
पयंपि	१७६·१	प्रजल्प्य
पयदल	२५४·२	पैदल
पयाणहि	२८७·२	प्रयाण
पयाल	२३२·१	पाताल
पयालह	२२·२	पाताल का
पयालपुरं		पातालपुर
*पर	३१४·३	
परइ	११२·३, १८०·१	
परगे	१६६·३	
परचए	६८·३	प्ररक्त
परणि	२७६·५	
परणेवा	२००·२	
परत	३००·१, ३०३·२, ३१०·१, ३११·३, ३१७·६, ३३१·१	पड़ते ही
परंउ	३०४·४	पड़ता है
परतंग	११७·३	
परनाम	८५·४	प्रमाण
परनि	५·२, २००·१, २१७·६	
परप	२२८·२	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
परमं	३१६·१	पराया
परयो	३६९·१, ३१७·१, ३२४·३	
परस	११२·३, १९०·१, ३३१·२	स्पर्श
परसंगे	२६·३	प्रसंग
परस	३२०·२	पर (शत्रु) से
परवत्त	९१·३	पर्वत
परहि	३१५·३	पड़ता है
पराकृति	३४४·३	प्राकृत
परि	२८२·१, २८३·३, ३१३·५	
पारिग	२६८·१, ३३३·१, ३१८·६	पड़ गए
परिणि	२७४·६	
परिहार	३१६·१	
*परी	२२९·३, २८६·३, २८९·२, ३०७·४	
परे	२५८·४, २६२·१, २६४·१, ३२३·२	पड़े
पसर	१२८·२	प्रसार
पसरी	९४·१	
पसंचनं	१३५·२	
*पश्चिम	१२४·२	
पल	७·१, ८१·१, ३२२·५	
पलिछ	१०५·२	पलायन करना
पलिति	३४०·३	पलायन
पलौ	२६९·२	पलायित
पल्ल	२४२·१	
पल्लं	२४९·१	
पल्लये	२४२·१	
पल्लमि	३०७·३	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
पल्लनि	३३७·३	
पल्लान्यो	३०९·१	
पवंग	२८३·३	
*पट्ट	१२·३, ३१४·२	
पहट्ठा	५१७·१	प्रहृष्ट
पट्टन	७१·१, ३०६·१, ३०७·३, ३१४·२	पत्तन
पट्टनु	३०९·१	पत्तन
पहर	३१७·६	प्रहर
पहारं	१००·४	प्रहार
पहार	३३५·२	प्रहार
पहारे	२०४·४	प्रहार किया
पहि	१३६·१	
पहिचान्यो	१४९·१	
पहिलइ	२६६९·६	पहले ही
पहिली	३१५·१	पहली
पहिल्ले	२९९·१	पहले
पहु	१३·१, ३०७·१, ३१५·१, ३३०·३	प्रभु
पहुक्कहि	३४३·४	
पहुचे	२७९·५	
पहुच्च	७२·१	
पहुरण	३३६·१	
*पत्र	२७३·१	
पांवार	३·४	परमार
पांवारु	३३२·२	परमार
पाइ	१७५·२, २७९·१	पाँव से
पाई	१०२·४	
पाट	२३५·२	
पात	३३५·१	
पाताल	१९८·१	
पाघरी	३२६·१	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
पान	३३'१, १४५'६	
पानि	५१'३, १७१'३, १६०'१, २६४'१, ३३२'४	पाणि
पानी	५५'४	
पानु	१२३'१	
पान	२५'५	
पाये	२७८'२	
पायक्क	१७'२	पायक
पायसं	२४६'१	
पायो	८३'३ २६८'२	
पार	२६३'१	
पारंभतं	२६५'४	
पारवी	२५३'१	
पारद्धकी	२५३'१	
पारथ्थियै	२७४'५	पार्थ°
पारधी	२७०'६	
पारस	२८१'२, ३२०'४	
पारसी	२५३'१	
पारत्थि	२५६'३	
पारि	३२६'४	
पारियै	३२४'२	
पारी	६१'४	
पारे	२५५'१, २६५'२	
पालखी	२५३'१	
पाल्हंभ	२६६'५	
*पावन	३३३'४	
*पावस	१६१'४, २३६'२	
पावसे	५६'२	
पावार	३३४'१	
पावास	३१७'४	
पावै	२६१'४	

शब्द	संदर्भ	अर्थ
पास	१३३'४, १८३'१	
पासि	१७२'२, १७६'२	
पिक्खउ	३०६'५	देखा
पिक्खियहि	४४'१	देखा गया
पिक्ख्यो	१४६'२	देखा
पिक्खि	१७'२, १७६'४	देखकर
पिक्खउ	३०७'२	देखा
पिचारे	२६५'१	ललकारे
पिछान्यो	३०६'२	पीछा किया
पिछोरिय	३०६'१	
*पिंड	१०८'२, ३२६'२, ३३२'२	
पिट्ठ	२४४'२	पीठ
पिना	१४०'३	
पींडी	५४'३	
*पीत	१३३'४, २८४'३, २८६'३	
पुच्छ	४७'३, १६६'४	पूछा
पुच्छइ	१०७'२	पूछता है
पुच्छन	८३'१, ८७'२, १६८'३	पूछना
पुच्छे	१६८'२	पूछा
पुज्जए	१७१'२	पूजा
पुञ्ज	१७१'४	
पुट्ठि	१६४'१, २६३'४	पुष्ठ
पुट्ठिवै	२६७'१	
पुंडीर	३०३	
*पुण्य	१८'१, १३१'२	
पुत्त	१४७'२, २६१'१	पुत्र
पुत्ति	१६६'१' १७३'४	पुत्री
पुन	१६३'३	पुनः
पुनप्पि	१७१'४	

*पुनर्	३१·२	
पुनर	१४१·१	
पुनंजरि	२२६·४	
पुनरजन्म	४७·१	पुनर्जन्म
पुनि	१५२·२	पुनः
पुब्व	१३·१	पूर्व
पुब्बहि	१४·२	पूर्व को
*पुर	१२०·२, १२४·२, १२६·२, २८१·२	
पुरख	११२·३	पुरुष
पुरखि	१२१·१	पुरुष
*पुरंदर	३२·२	
पुरह	१७६·१	
पुरा	११५·१, १४१·१	
पुरिखन	१२०·३	पुरखे
पुष्फंजलि	१३१·१	
पुव	२७१·२	पूर्व
पुवावहि	७८·२	
पुहवि	१६३·१	पृथ्वी
पुहुप	३१·२	पुष्प
*पुत्रि	१६६·१	
*पुत्री	२००·२	
पूछहि	१६६·२	
पूजंत	५६·२	
*पूजा	३१·२	
पूरन	७६·२	पूर्ण
पूरि	२८५·२	
पेज	३१३·१	
पेत्त	१६७·१	
पोखनं	१४०·२	
पोति	१७१·६	
*प्रकार	७६·२, ७७·१	

प्रगट	३१०·१, ३२६·२	प्रकट
प्रगट्ट	२६२·३	प्रकट
प्रजंक	३४४·३	पर्यंक
*प्रजा	६५·३	
प्रतक्ख	१७४·३	प्रत्यक्ष
प्रतख्ख	४०·१	प्रत्यक्ष
प्रतच्छ	१३७·४	प्रतक्ष
*प्रतिपालं	२८·३	
प्रतिबिंबित	३०७·२	
*प्रतिहार	५·३, ८५·४	
*प्रतीत	१७०·२	
प्रथिराज	१६४·२	पृथ्वीराज
प्रनाम	८६·२	प्रणाम
प्रनि	३०१·१	
*प्रभु	१३१·१	
प्रमादित	३४५·१	
*प्रमाणं	१६·२, ३२३·१	
प्रमान	४२·२	प्रमाण
प्रमानिम	८६·३	
प्रवान	५·२	प्रमाण
*प्रवाह	८६·३, १५३·२	
प्रवाहे	५१·२	
*प्रवासी	१५४·१	
*प्रवाल	६४·१	
प्रवाहि	१६७·२	प्रवाह
प्रविन	१६७·१	प्रवीण
*प्रवीण	३४४·४	
प्रवीन	१३७·३	
प्रवेसह	१६३·४	प्रवेश
*प्रसन्न	८५·५	
*प्रसार	२४४·२	
*प्रसंगा	६१·१, २२३·४	

बनाई	५०·४	
बर	१४७·१, २८४·१	
बरनै	१५६·३	वर्णन करना
*बलं	१०·२, १६१·२, १७·६, ३१३·२	सेना
बलनि	१६५·१	बल (बहुत)
*बलि	११०·५	बलि जाऊँ
*बहु	५७·१, ७४·१ १८७·३ १४४·२- २२४·१, २२८·१, ३१४·१ ३३८·२	
बहुत	३·२,· १४५·३, १६३·२	
*बाजी	१६० ३	घोड़ा
बात	३७७·१	
बान	१०१·१, २५०·२, २६१·३	
बानै	१७·२	बान चलाने वाले
बारह	३३६·३	
बारी	६१·३	बाली
बारे	६४·४	द्वारे
*बाल	१६१·१	
*बाला	६५·२, १८८·२	
बालु	२४१·२	
बाहं	२५०·२	बाहु
बाहर	३१३·६	
*बाहु	१६६·२, २२८·२	
बिचारि	१७०·१	
बिट्ठयइ	६७·२	बैठते हैं
बिनु	११२·३, ३३०·१	बिना
बिबइ	७८·४	बिंब का
बिंबेन	३१६·२	बिंब से
बिसरी	२०६·२	विस्मृत
बीच	८८·१	
बीय	३८·३, ५०·४	द्वितीय
बुज्झियइ	२७५·६	बूझता है
बुझयो	६·१	बूझा
बुंद	३०४·४	बूँद
बुधि	८७·३	
बुलंति	१३३·२	बोलते हैं
बुल्लिय	१५१·१	बोला
बे	११२·३	दो
बेलि	७२·३, ६४·१	वल्ली, लता
बैकुंठ	३०३·१	
बैन	६४·१	वचन
बैरख	२८४·१	
बोझ	२७५·६	
बोलं	५०·२	
बोल	२७४·५	
बोलते	२५२·२	
बोलु	२७४·१	
बोहित्थ	३१३·६	बोहित, नाव

म

भंग	४६·१, ११५·१	भग्न
भंगहि	२७४·१	भग्न करता है
भंज्यो	६६·२	भग्न किया
भंजिअ	३१७·३	भग्न किया
भंड्डि	८६·४	भ्रष्ट करके
भंति	११५·२, ३१५·७	भ्रान्ति
भइं	३३६·४	हुई
भइ	५०·१, ३१५·७, २६६·५	हुई
भइत	८·२	हुई
भई	३४६·४	हुई

भउ	१४६·५, ३१७·६	हुआ
भक्खी	१५·२, ३२८·२	भक्षण किया
भख	७६·२	भक्ष्य
भखी	२४६·२	भक्षण किया
भखे	२४८·२	
भख्यो	२०६·१, ३२५·४	
भगंत	२४३·१	भागते हैं
भाग्यो	३३०·१	भागे
भग्ग	३३०·२	भग्न
भग्गयो	२४५·२	भागे
भग्गे	३२४·४	भागे
भग्गै	१८·४	भागते हैं
भजि	४६·१	भागकर
भज्ज	५·२	भाग
भट	२७५·३, २८१·१	भट्ट
*भट्ट	१२१·२, १४४·२	
भट्टि	१४·२	भट्ट
भणणंकिय	२८५·१	नादानुकृति
भत्त	२४७·२	आता
भद्दव	२०२·२	भाद्रपद
भनंति	१३८·२	भणन्ति
भमर	३१·३	भ्रमर
भमै	२६१·४	भ्रमता है
*भय	२६·१, १२१·१, १५३·१, २०६·१, २८८·३, ३७५·१	
भयउ	१६७·४	हुआ
भयत	१२७·१	हुआ
भयी	३२३·१	हुई
भयो	३०६·२, ३११·४, २६६·२, ३१८·५	हुआ
भरं	२४०·१	भट

भर	१२५·१, ३१८·५, ३२२·२ ३२२·४	भट
भरतं	२६५·१	भरत
भरति	३१३·२	भरती है
भरतार	४५·१	भर्त्ता
भरंति	३३·१	भरते हैं
भरन	२७०·२, ३३०·५, ३३४·२	भराव
भरयं	२०३·२	
भरयो	३३६·५	भर गया
भरहिं	१०·२, ३२·४	भरते हैं
भरि	१६६·१, १०१·३, १६६·१	भर कर
भरिउ	३१३·६	
भरियं	३१६	भरित
भरी	३४·१	
भरे	२६·१, १८१·१, २६०·४, ३३४·४	
भला	१४६·६	
भल्लि	१०३·१	
भल्ली	२३५·१	
भले	३२५·४	
भवं	२०३·४	हुआ
*भव	२१·४	
भवंति	१३२·४, १३३·३	भ्रमन्ति
भंवर	३०१·२	भ्रमर
भवह	३१८·५	
भाइ	६६·३, ७४·१, ६७·२, १६७·४	भ्राता
भाई	१४४·१	
भाख	८०·१, ८७·२	भाषा
भाखन	८०·१	भाषण से

भाखि	३४५.३	भाषा
भाजं	२९.१	भानना
भागे	१४९.४, ३०२.५	भागकर
भाणं	२६६.३, २८५.३	भानु
भाणु	२८७.२	भानु
भानं	२६७.१, ३१७.२	
	२६१.३	भानु
भानु	२६८.१	
भाने	२९५.१	
*भार	७९.३, १४१.१,	
	२४४.२, २९१.२,	
	३१६.१	
भारत्थ	५९.३	भारत
भारत्थि	२९४.१	भारती
भारह	३३६.४	भार
भारे	२६४.२	भाले
भारो	३२४.१	भारी
*भाव	५३.१	
भावर	२८५.३	भाँवर
भावरी	१७६.४	भाँवरी, फेरी
*भाषा	८८.४	
भित्थरं	२४४.२	भीतर
भिद्दहै	६.२	भेदेगा
भिर	१२५.२	भिड़ा
भिरग	६३.२	भिड़ गया
भिरनं	३१८.५, ३१५.७	
	३२२.५	भिड़ना
भिरयो	३२७.३	भिड़ा
भिरे	३२४.४, २९९.४	भिड़े
भिल्ली	२६ .२	भिल्लिनी
भिछ	२७४.४	
भीर	२४७. , २८९.३,	
	३०३.२, ३०७.४,	
	३२६.४	
भीने	१६०.४	
भुअंगह	२७६.२	भुजंग
भुइ	३३७.२	भूमि
भुज	२०८.३, ३२६.४	भुजा
भुजदान	३३२.३	
भुजपति	१४९.५	
भुयति	२४६.१	
भुम्मिहि	१२५.२	भूमि पर
भुल्ल	१६२.२	भूल
भुल्लयो	१६३.१	भूला
भुव	४८.३ १४८.१,	
	३३६.५	भुवन
भुवंग	४२.२, २७६.२	भुजंग
भुवहि	१९८.३	भुवन में, भूमि में
भुवाल	३१७.२	भूपाल
भुल्लि	१४.२	भूलकर
भुल्ले	१७.४	
भुल्लै	६३.४	भूलता है
भूखन	१३३.३, १००.२,	
	२७२.३	भूषण
भूखै	९०.२	भूखे को
भूदंड	१७.१	भुजदंड
*भूप	६२.२, १०९.१,	
	१२१.७, १४२.२	
*भूपाल	६४.४	
*भूमि	१३७.४, २९४.१	
भूलि	१०३.१	
*भेक	२३९.१	मेढक
भेख	२०६.२, ३३२.३	वेश

भेजु	१३८·२	
भेद	१३३·१, १३४·१	
भेदनं	१३३·१	
भेदि	३०२	
भेरि	२८५·१	
भेस	३०१·२	भेस
भो	१६८·१ ३२८·१	हुआ
*भोग	२७०·२	
भोगि	३१६·२	
भोज	२४३·२	
भोजु	३२७·३	
भोह	४०·२	
भोहाउ	३२८·१	भौंह
भौन	१८६·१	भवन
भौह	११२·१	
भौंहनि	२८८·२	
भ्रमिग	१३·१	भ्रमित हुआ
भ्रिंग	३१·१, १२७·१	भृङ्ग
भ्रित	२७·३, १६७·५,	
भ्रित्य	१८·२	भृत्य
भ्रिति	१४६·४	भृत्य

म

मंगलिक्क	१७६·१	मांगलिक
मंगई	१०·४	मांगता
मंगन	२५·५ (भीख मांगने वाला १०५·२	
मंगति	२००·१	
*मंगल	६६·३, ६७·१, २७०·२ २७२·४, २७८·२	
मंगली	२७८·१	मंगलमय
मंगिहइ	१२३·२	मांगेगा
मंगुली	२७७·६	मंगली
*मंच	३२२·२	
*मंजु	३४४·२	
मंजन	२१·२, ३०·१	मज्जन
मंजरि	२६·३	मंजरी
*मंजीर	५५·१	
मंझ	७१·१, ३१८·४	मध्य
मंडउं	३०३·४	मंडित करूं
*मंडन	४५·१, १५१·१, ३३६·१	
मंडनु	२७२·३	
*मंडपे	२४४·१	
मंडपै	५८·३	
*मंडली	१३७·१, ३२३·३	
मंडि	६४·३, १३१·१, २७२·३	
मंडियइ	२७२·२	
मंत	२३२·१, २४२·१	मंत्र
मंती	८६·३	मंत्री
मंदियवर	२७२·१	
*मंदिर	३३०·५	
मंदु	११·४, १२·१ ५५·२, ३४५·१	मंद
मदे	२७·२	
मघउ	३२०·३	
मयंक	१७६·२	
मयंदं	५३·४	
मंस	२६३·२	
म	४३·१	
मइंद	११२·२	
मकरादि	२०३·२	
मग्ग	१४·१, २५·३, २७४·२	

मोहिनि	१४६·२	मोहिनी
❀मोहिनी	१८८·२	
मोहियं	२२४·२	मोहितं
मोहिल्ल	३२०·३	
मोहए	३६·२	मोहित हुए
म्रित	३२६·१	मृत
म्रिग	११·२	मृग
म्रिदंग	६७·३, १३८·१, २२३·३	मृदंग
म्रिदु	५५·२	मृदु

य

य	१४१·३	यो
❀यज्ञार्थे	१८८·१	यज्ञ के लिए
❀यतो	२७३·१	जहाँ
यत्त	२६३·३	यत्र
यह	५७·२,	
❀यामिनी	७·१	
युव	३४५·१	
युवति	२७१·३	युवतियाँ
यूं	३८·१, १८५·४	यों
❀यूथ	३४५·१	
येह	६३·४	यह
❀यो	१३७·४, ३३०·२	
❀योग	३४०·१	
❀योगिनां	१४७·१	
योगिनीपुरे	२८६·२	दिल्ली
❀योजन	७·२	

र

❀रंग	३१·४, १६४·१, १७१·२, १७३·१, २३२·२, २५८·४, ३१०·२, ३२०·१	
रंगा	२२४·१	
रंगि	१७३·१	
रंगिनी	२४१·२	
रंगी	२६२·१	
रंगीय	५४·३	
रंचउ	६३·१	रंचक, कुछ
रंजहु	९२·३	रंजन करो
रंजरि	२६·४	
रंतं	२६५·१	रक्त
रंभं	५४·२, १३४·३, १४०·३, १७१·२, २६५·१	रम्भा
रंभया	३४·२	रम्भा
रंभसु	२५·२	रभस, वेग
रक्खण	२३०·१	रक्षण, रखना
रक्खहु	१२३·२	रखो
रक्खहि	२७४·२	रखते हैं
रक्खूं	१२३·१	
रक्खै	२७६·१, ·२	
रक्ख्यो	५३·४, २७७·४, ३४०·२	
रखत	१२४·१, २७६·६	
रखन्ति	२०४·१	
रखी	१६१·३	
❀रघुवंश-कुमारह	८३·२	
रचि	३०४·५	रचकर
रचीन	५५·४	अनुरक्त
रच्यो	२०८·३	रचा
रजपूत	३·६, १४६·६	राजपूत
रठि	३३५·१	
रठोर	३०५·१	राठौर
❀रत	३२२·५	लीन

रतन	६०·१	रत्न
रतने	१५·१	रत्न
*रति	१३९·२, ३४६·३	
रत्त	५६·१, ८९·२, २६२·१, २९३·४, ३१८·५ ३२२·५	(अनु) रक्त
रत्तउ	९०·३, ३३८·४	अनुरक्त हुआ
रत्तए	३८·१	
रत्तिया	३५·२	
रत्तो	५९·१	
रत्त	३३२·४	
रत्ते	८७·३	
रत्थि	३१९·२	रथ
रत्थे	१५४·२	रथ
*रथ	८०·२, ३०९·६	
*रद	३१६·२	
रनंकि	१६६·२	नादानुकृति
रन	१०७·२,	रण
रनह	३२०·१	रण में
रयणी	२६७·१	रजनी
रयणि	२७०·१	रजनी
रयन	३२०·१	रत्न
ररे	३३१·२	रटे
रव	१६७·३, ३३३·३	ध्वनि
रहइ	३२·२, १०६·२, १२०·२	रहता है
रहणो	२८०·२	रहना
रवि	३३२·६	
रवि मंडल	६·२	
रविवार	१·१	
रहनि	४६·१	
रहवो	२७०·४	
रहहि	४३·१, ८२·२	
रहहिं	४५.२	
रहि	४६·१, ७९·२	
रहिउ	३२०·६	
रहित्त	११९·१	रहित
रही	८९·४	
रहु	३०९·४	रहो
रहे	१८०·२ २७६·१, ३२१·२	
रहै	७४·४, १४५·५, २७४·५, २७६·५	
रह्यो	९४·२, ३३०·४	
*रस	८०·२, ८९·२, ११२·३, १२९·१,	
रा	२५७·३, २७७·५	राज, राजा
राइ	६७·२, ९८·२, १६१·१, १८४·१, २७४·६, २७७·४	राजा
राइन	१२५·१	राजन
राउ	१३·३, १७०·२, २७०·३, ३२५·१	राजा
राएसु	२८१·२	राजा के लिए
*राका	४९·४	
*राग	३९·१, ६५·३, १५९·३, २२४·३	
*राज	१४५·१, १४६·६, २५६·१, ३४५·४	
राजन	३३३·१, ३३८·३	
राजनु	१९२·२	
राजपुत्ति	१६८·२	राजपुत्री
राजयो	१३६·३	विराजित हुआ
*राजसं	२९२·३	

राठोर	१०३·३, १२०·२, २०६·३, ३३६·१	
राडि	२६६·६	रारि, कलह
*रात्र्यंगता	१४०·४	गते रात्रौ
राना	३२६·१	राणा
रानि	१४५·४	रान
राने	३६७·२	
*राम	११२·३	
राय	१४१·४, २४८·४	
रारि	३२३·१	कलह
रारी	२७०·२	कलह
राव	१०३·४, २७६ ६	राजा
रावत	३२०·१	राजपुत्र
रास	१३६·१, ३२०·१	
रासा	२४६·१	
रासि	४४·१, ६३·१, १७५·३	राशि
राहं	२४६·२	राजि
राहं	३३२·१	राहु
*राहु	११०·२, १८३·१	
रिउ	३३४·२	रिपु
रिखि	६४·४	ऋषि
रिणथंभु	२७७·४	रणस्तम्भ
रितु	५४·२	ऋतु
रिपु	५३·४, १०५·१,	
रिद्धि	१७५·२	ऋद्धि
रिम	२८·३	रित (ऋतु)
रिसि	१२०·१	रोष से
रीसं	२६१·२	रोष
*रुंड	३०२·४, ३०६·६	
रुंधयो	३११·६	रुद्ध
रुक्कियो	३०७·८	रुका
रुक्यों	३०७·५	
रुत	२७८·४	ऋतु
रुदय	२७२·२	हृदय
रुद्र	२६३·२	
*रुधिर	३१३·२	
रुनंति	१७५·४	
रुने	२६२·१	रंगे
रुरंति	३७·१	रुलंति, हिलना
रुलंति	६५·४	हिलना
रुवंत	१८५·२	रोते हुए
रूप	१८·४, ४८·३, १७३·१, २६४·३, ३३२·१	
रूव	१६·२, ४४·१, ४८·२	रूप
रे	८२·१	
रेख	१३४·३	
रेखयो	१३३·४	
रेण	२८४·२	रजनी
रेणु	३·५	
रेनु	१८०·१	रेणु
रेसम्म	२३५·१	रेशम
रोम	१६७·२, २५६·२, १८२·१	
रोरे	१०३·१	रोले
रोस	१०३·२, २५६·२, ३१६·२	
रोह	१३७·१, २७०·६	
रोहि	५५·१	रोध०
रोहिनी	४८·२	रोहिनी
रोहिया	२५७·२	रुद्ध किया

ल

शब्द	संदर्भ	अर्थ
लंगरी	६१·१	लंगरी राव
लंगी	२६२·१	
लंतु	१७४·४	लेते हैं
लंघिया	३१०·४	लाँघा
लक्ख	८२·२, १३८·३, २७४·६, २९९·२	लाख
लक्खन	३३३·१	लक्ष्मण वघेल
लक्खहि	२९२·४	लखता हैं
लक्खिनह	३३४·२	लक्ष्मण बघेल
लक्खियं	१३२·४	लखा, देखा
लक्ख्यौ	१४९·१	
लखिउ	१८३·२	
लखी	२४९·१, २५१·२	
लख्खे	२३८·१	
लख्खै	६२·१	
लग	२७६·५	तक
लगि	५७·२, १०८·२, ३०२·३	तक
लगे	२६३·४	
लगै	२७७·६	
लग्गं	२५६·२, २५६·४	लग्न
लग्गए	३९·२, १७१·१ २७९·२	
लग्गयं	१७७·३	लगा
लग्गयो		लगा
लग्गहि	७३·४	लगता है
लग्गि	३३·२	
लग्गियइ	२७४·२	लगता है
लग्गी	४८·१, ४८·२, १३१·१	
लग्गे	६३·१, ६६·३, २२४·२, २३६·२, २४७·२, २५८·१, ३२७·४	
लग्गै	१८·३ ६४·२	
लग्ग्यो	४८·४, ३३०·२, ३३३·३	
*लघु	२४७·२	
लच्छि	१६३·२	लक्ष्मी
लच्छिन	१०९·१	लक्षण
लच्छी	१६०·१	लक्ष्मी
लज्ज	११९·१	लज्जा
लजये	२४०·२	लजाता है
*लज्जा	४६·१	
लज्जि	५८·४	
लज्जी	१५४·१	
लटापट	१४१·४	
लता	४२·१	
लद्धी	२२३·२	ली
लपटाई	७४·४	
लब्भं	५२·३, २५५·१, ३२९·१	लब्ध
लयो	३०९·३	लियो
लरि	८८·१	
लरै	१६०·१	लड़ता है
लर्‌यो	२०९·२, २९९·२	
*ललनानि	२४०·१	
लवन्न	११७·१	लोने, सलोने
लहंति	३७·२	✓ लभ्
लह	१६३·३	
लहन्तु	१६३·२	
लहल्लक	७५·१	लकालक, चमकदार

लहि १८६·२

लहे ११६·२

लाख २३·२

लाखु ६७·१

लागत ३४०·२ लगता है

लागंति २६१·२

लाज १२१·२, १२२·२
१५२·१

लाजनु १६२·२

लाजे २५७·२

लाट ४१·१

लारा १५५·१

लाल २८·२, ७७·१,

लावहि १६२·१ लगती हैं

लाहोर १५७·३

लिअउ ३३०·३ लिया

लिखियत २८६·२ लिखत

लिय १४४·२, १७०·१,
२८४·४, ३१८·२,
३३०·२ लिया

लियं २०३·१, २०८·१,
२८५·२, २८८·१

लिये ३·६

लियो ३११·३

लिलाट ४१·१ ललाट

लीजइ २७८·४ लीजिए

लीज ३१८·२

लीन ३४·२

लीन्हसि १५१·२ लिया

*लीला ३१·१

लुद्ध २७१·४ लुब्ध

लुब्भवइ ६७·४ लुब्ध होता है

ले २·१, ४७·२, ७४·२,
१६६·२, २२३·४,
२७१·४

लेउ १६६·४

लेखयो १३३·३ लिखा

लेहि ६·३, ७२·४,
३०७·१ लेते हैं

लो ८८·१, ३३७·४

लोइ ३४६·४

*लोक ३३७·२, ३४२·१

*लोचने ४०·१

लोल ३४·२ लोल

*लोभ ७६·३, २७८·३

लोयन ३११·६ लोचन

लोरी ५४·४

*लोल ४६·४ चंचल

लोलंति २६३·२ हिलते हैं

लोह १५३·१, २५१·१,
२८७·२, २९५·२,
३२७·२ लौह, अस्त्र-शस्त्र

व

वंकुरि ११२·२ बाँकुरे

वंके २३४·१ बाँके

वंचहि ७३·१ बेचते हैं

वंछहि १०·३ वांछा करते हैं

वंदते ३१·२ वंदन करना

†वंदा १०३·३ बंदा

वंदिअ १६८·१ वंदित

*वंदे २७·२

वंध ८५·३, १०२·४,
१८१·१ बन्ध

वंस ६६·१, १०४·१, २६३·२, ३०२·५ — वंश
वइ १०६·२, ३१४·२ — पति
वखानश्रो ६६·१ — बखाना
वग ६३·२ — वक
वग्ग १५५·१, २५६·१
वघेल ३३३·१
❀वचन १८१·२
वच्छु १६१·२ — वत्स
वच्छनिय १६६·४ — वचन, वांछा
वजाज ७३·१ — बजाज
वजे २६३·२ — बजे
वजइ १५७·३ — बजता है
वज्जंति १५५·२ — बजते हैं
वजए १७६·४, २४०·२ — बजते हैं
वज्जने १६४·२ — बाद्य
वज्जवै १०८·२
वटी २२·३ — वाटिका
वट्ट १८१·२, २६२·४ — वर्त्म, बाट
वड ३०३·१ — बड़ा
वडगुज्जर ३३७·१ — बड़ा गुर्जर
वडितनौ २७६·५ — बड़प्पन
वड्डी २२७·२ — बढ़ी
वड्ढे १६·४, ६८·१ — बढे
वढं २६५·१ — बढ़ा
वत्तरहि ६·२ — वार्ता
बत्तिमा १३७·२ — वर्तिमा (वर्तिका)
वत्थ १२५·२ — बात
वत्थ ३२४·४ — वस्तु (अस्त्रविशेष)
वत्थइ २७६·४ — अस्त्र विशेष
❀वदनं २४७·२
वद्दर २८३·२ — बादल

वद्दल २०२·२, २०७·३, २३६·२ — बादल
वद्दे ५५·२ — वाद्य
वधं २२४·१ — अधं (?), बजे
❀वधू ३७१·२, २७६·३
वद्धए ३८·१ — वत्तए, वार्ता करते हैं
❀वन ८०·१, २७६·१, ३००·२
वनु १२७·१ — वन
वनराई २३५·४ — वनराजि
वपंति ११७·२
❀वपु २७·३
वय ३०६·५ — पति
वयण १२८·१ — वचन
वरं २२४·३
वरंखति ३२२·२
❀वर ६·३, १३·३, ६३·१, १६४·२, १६७·१, १६१·२, २६६·१, ३०८·२, ३२२·३, ३४५·३
वरज २६·२ — बरजा, मना किया
वर्णंते ६६·३
वरणनु ३१५·१
वरदायि ६१·३ — वरदायी
वरद्दिया ११०·६, २६६·६, ३०२·६ — बलद्दिय, वरदायी
❀वरदिहह १४५·१ — वरदाई को
वर्धति २०३·४ — बढ़ती है
वर्न ११६·२ — वर्ण
वरन १०६·२, ३१२·२, ३२२·५ — वर्ण

वरन॰	४६·२	वर्णन
वरनइ	५७·१	वर्ण वाले
वरस	११०·१	वर्ष
वरसत	२७·२	
वरसिंघ	३०४·५	वर (नर) सिंह
वरि	१६६·४, १७८·१	वरण करना
वरिय	१८४·१, २६६·२	वरण किया
वरूं	८३·३, ८५·४	वरण करूँ
वल्लए	१७६·२	
❀वल्लभा	१८८·२	
वलि	३३०·३, ३४०·२	
*वल्ली	२३५·३	
वह	३०६·२, ३०६·६	
वहणो	२८०·२	वहन
वहिं	११०·३, १६०·४	उस
वहै	२६१·३	वही
❀वाइ	१३१·१	वात
वाइतु	११२·१	
वाउ	२०२·२	वात, वायु
वाघ	३२४·३	बाग, वल्गा
वाजने	२५७·३	
वाजव	१४३·१	
वाजिन्न	६५·४	वाद्य
वाजून	२३४·२	वाद्य
वाजूनि	२३४·२	बजे
*वाण	२३३·३	
*वाद	३४५·१	
वाना	३२५·१	वाण
वानि	१३७·३, ३२५·१, ३४०·२	वाणी
वानी	४७·२, ५५·३	वाणी
वानो	३१७·३	

*वाम	२०६·१	
वाय	१६·४	वात, वायु
❀वायु	३४५·२	
❀वार	५६·३, २७·२, २७८·२	
❀वारह	२७·२	
*वारि	१३६·१, १६०·४	
वारी	३२४·३	
वारु	१४६·३	वार
❀वारे	२५८·४	वाले
वाल	१०·४, १८४·१	बाला
वालिता	६८·२	वाद्य विशेष
वालिगा	१३६·४	वाद्य विशेष
*वास	१२४·२, १७५·३	
वासु	१२०·३	
वासंत	६४४	
❀वासर	७३·२, ७५·४	
वाहं	२५१·१	प्रवाह
वाहत्त	३२०·२	वहना
❀वाहनं	१३६·२	
वाहे	३२४·३	
वि	२७८·१	अपि
विअ	१८३·२, २६४·२	द्वि
विकारे	१५४·४	त्रिकाल
बिक्किस	८८·३	
विक्खहर	३१५·६	विषधर
विखरे	३०७·१	
विगावाने	२६५·१	
विच	२८४·१	बीच
❀विचार	४३·१, ६०·४, १००·३	
विचारु	१६६·३	

विचि २२·४
*विचित्र २६·२
विचे ४६·२ बीच में
विजपाल १३४·४, २६१·१ विजयपाल
विजर १२०·३
विज्जु १४५·५ विद्युत
विटियं २५५·२ विखेरना
विट्ठिय १२२·२
विट्यो २६८·२, २७०·४
विडरिय २६०·२ विखर गई
विडरयउ ३३३·६ विखर गया
विढे २६४·३
विगु ७५·२, २८७·२ विना
वित्तये १७१·३ वित्त
विदिसिं १५३·१ विदिशि
विदेसी १६०·१ विदेशी
*विद्यमान ८८·४
*विद्या ३३७·४
विधिय ३०४·४ विद्ध
विधत्त २०५·१ वृद्धि
*विधान १०·४
विधान १०·३
*विधि ६६·१, १०५·३, १७६·२, १४६·१
विधिवाल २८·३
*विधु १३·३, २६७·२, ३१४·२
विन ६४·२
विंभ ३३७·५ विन्ध्य
विन्द १२८·१ वृन्द
*विंदु ३३३·५
विन १६१·३

विनुद्ध १६३·१
विनान ३६·१
*विनश्यंति १६४·३
*विपरीत ३४६·४
विप्फुरे २४६·२ विस्फुरित हुए
*विप्र ३१·२, १४७·१
*विभा ६१·२
*विभूति १४७·१
*विभ्रम ३११·५
*विमानं २३६·२
विमाप २४·४
विम्भारखी २५१·१ विस्मित
विय ५०·४ द्वि
*वियोग २४१·१
वियोगिनी २४१·२
विर ३१४·२ वीर ?
विरि ३३१·२ विंटि ?
विरंचि ८१·२
विरदावली ३१७·४ विरुदावली
विरहिनि २७२·२ विरहिणी
विराज ६०·१, १२७·१,
विराजहि ३१३·३, ३४५·४
*विराम १३२·२
विरुद्ध १३०·२
विलग्गी २२७·४ विलग्ना
विलसि ३४६·१ विलास करके
*विलास ३४६·१
विलग्गे २६·३ विलग्ने
विलसंदे २७·३ विलास करते हैं
*विवर्जित १६४·१
विवहर १६७·१
विविहारे १६७·१ व्यवहार

विसताल	२२४·१	
विसाजयो	१३६·४	
विसारि	१३६·२	विस्मृत करके
विसाल	२८·१, ७७·२	विशाल
विसेस	१३६·३	विशेष
*विहंग	११५·१	
विहना	८८·४	विधना, विधि
विहरित	२६·४	
विहरे	१०४·२	
विहि	४५·२	विधि
विहु	५६·३	विधु
विंहु	३३६·५	दोनों
वीज	२३८·२	विजली
वीन	६५·४, ६८·२	वीणा
*वीर	६८·४, २०५·१, २२४·३, २४६·२, २६१·१ २५७·३, २६४·३, ११३·६, ३२२·२	
वीरह	२०५·२	वीर (बहु०)
वीह	२७६·१	विन्ध्य
वुध	६७·३	
वुधु	२०·४	मुधु (?) मुग्धा
*वेगं	२६२·३	वेग
वेगि	२३२·४	वेग से
वेयन	८८·३	
वेठे	१५५·३	
*वेद	३३७·१	चार
वेश	१३३·४, २२४·१, २६१·१, २६३·४	वेश
वेस्या	६२·३	वेश्या
वै	४४·१	वे

वैन	१३८·३, १७२·१, १६१·१	वचन
वैरख्ख	३३५·२	
वैरि	२६०·३	
वैसे	२६३·२	
वाति	१६६·२	बात
*व्याकरण	८६·२	
व्रत	१६६·४	व्रत
व्रंद	३०३·२	वृंद

श

*शास्त्र	६५·३	
*श्याम	५७·४, ११६·२, २६५·२	
*शुक्र	११·१, ६७·१	
शुरु	६७·१	
*शोभितं	१८८·१	
*शृंग	३१७·६	

स

संउत्त	१०६·२	संयुक्त
संक	६४·४	शंका
संकर	३११·६	शंकर
संकरि	२६·४	
संकरह	३१०·२	शंकर
संकि	१७२·२, ३३६·६	शंकित होकर
संकुली	२४१·१	
संख ध्वनिश्र	६६·२	शंखध्वनी
*संग	६८·३, १४४·२	
*संगति	२१·४	
संगा	२३६·४	
संगि	१७३·१	
*संगीत	६४·२	
संग्रहे	११०·२	
*संग्राम	१५४·३	

शब्द	स्थान	अर्थ
*संघ	२५०·२	
संघरऊ	३०७·४	संहार किया
संघरि	३२६·२	संहार करके
संघासन	६१·२	सिंहासन
सच्च	१००·१	सत्य
संचउ	६२·१	संचित
सञ्चारिग	७·२, ३१३·५	संचार किया
संचरिय	१२८·१	संचरित
संचही	१७४·३	संचार करते हैं
संजोग	१६३·१, २६१·२	संयोग
संजोगि	१६८·१, ३१६·१, ३३८·३, ३४६·२	संयोगिता
संजोर	१४८·२	
सझ	७१·२, ३२१·१	संध्या
संठी	२६२·२	
संठयो	३०६·६	
ॐसंत	१६३·४	
संत एक	५६·१	
संथिम	१४६·३	
ॐसंदेह	५७·२, ५८·१, २३५·२	
संदूखि	२३४·२	
संधन	८५·३	
ॐसंधि	१७७·३, ३३२·३	
संधे	२५८·३, २६६·४	
संधै	१७·१	
संपत्त	२६२·१	सम्प्राप्त
संपत्तउ	८६·१, ३३८·१	सम्प्राप्त
संपत्ते	८७·१	सम्प्राप्तं
संपर पतिग	१४२·१	सम्प्राप्तिक
*संपन्न	७·२, ५८·२	
संप्परिग	३१३·२	सपर गए

शब्द	स्थान	अर्थ
संप्परे	२६२·१	सपरे
ॐसंप्राप्तितं	१४१·४	
संभरधनि	१०७·१	पृथ्वीराज
संभरे	१६·२, २५६·१	स्मरण किया
संभरि	१५·२, १५२·१, २७०·६	शाकंभरि
संभारि	६२·१	सँभाल कर
संमुह	१५२·२	सम्मुख
संमुही	११६·१	सम्मुखे
संमुहो	२·१, १४३·२	सम्मुखे
*संवेग	१६·३	
*संसार	१८·४, २५६·१	
स	१४१·३, २६६·४, २०७·२	वह
सइ	१·१; २६२·१	सै, सौ
सउ	१४६, ६, ७२८·६	सौ
सउमइ	२६२ ६	
ॐसकल	८५·३, ६७ १,	
सक्करपय	६०·२	शर्करा-पय
सक्कि	५४·१	
सकोल	३४·२	
सक्खी	३२८·१	सखी
सखं	२४६·१	
सख	३२३·४	
ॐसखी	१७६·४, १६१·२	
सग्गी	२२७·३	सगी
सगुन	४·१	शकुन
*सघन	२२८·२, ३०३·२, २३१·१	
*सजन	३०·१	
सजए	११५·४	सजे
साजि	१७·१	सजकर

सज्जिगे	९९·१	सज गए
*सजीव	१६६·४	
सजुत्त	१०९·१	संयुक्त
सजूपं	२६४·४	
सज्जे	१६१·१, २३३·३	सज्जित हुए
सज्झि	२२६·४	सज कर
सत	२·१, ९६·२, १५१·६	शत
सत्त	१६८·१, ८०३·१, २२९·१, २९६·६, ३२२·३, ३३७·६	सप्त
सत्तये	२४३·२	शत
सत्ति	१३९·१	शक्ति
सत्तिहु	१३९·१	शक्ति भी
सत्थ	१२५·१, १५१·१, ३२५·४	साथ
सत्थह	१२१·२	साथ
सत्थि	१२२·१	साथ में
सत्थिहुअ	१८६·१	साथी होकर
सत्थै	२७८·५	साथ
सत्थहि	१९६·२	साथ
सत्रु	२८१·१	शत्रु
सदा	८३·३	सदा
सदाहं	२९२·१	सदा
सद्द	१७७·१, २२२·३, २४०·२ ३११·५, ३३३·५	शब्द
सब्दे	५५·१, २९४·४	शब्दे
*सधन	९४·१, १५३·२	धन सहित
सधर	३०९·५	
सनम्मुख	२७८·६	सम्मुख
सनाह	२०७·१	सन्नाह, कवच
सनाहं	९८·१	

सनि	९७·१	शनि
सपत	१६७·४	
सपन	१२७·२, १४४·१	स्वप्न
सपत्तिय	३२१·१	सम्प्राप्त
सपह्नु	१९८·२	सौंपो
सपुतउ	९०·४	सम्प्राप्त
सब	१०९·१, ११०·५, २७६·४, ३ ४·१	
सबद	५·१, १०५·१	शब्द
सबद्द	११९·१	शब्द
सब्द	३१·३	शब्द
सब्बासु	३३३·४	सभी
सब्बु	३३२·५	सब
सभे	२५०·१	सभी
*समं	१५८·३	साथ
*सम	१६७·२, २४५·१, ३९५·२	से
समग्गये	२४५·१	समग्रे
समप्पन	१४४·२, १४५·१	समर्पण
समझाउ	१०६·२	समझाकर
समज्झ	५२·१	समझ कर
*समस्त	६७·४, ९५·३	
समतेध	१६१·४	
समत्ते	८७·४	समस्त
समेत	२०८·४	सहित
समप्पति	१७०·४	समर्पित करती है
समप्पूं	१२३·२	समर्पित करूँ
समप्पे	२६५·५	समर्पित किया
*समर	१३९·२, ३०५·१, ३०७·४, ३३३·४	
समरत्थ	१५१·१	समर्थ
समरी	३११·२	समर में

समसेर	२०६·३	शमशेर
समानं	२३६·१	समान
*समान	९५·२, ११६·१	
*समादाय	१७९·२	लेकर
*समाधि	२४५·१	
समानु	१२३·१	समान
समाए	१९३·१	
समाह	२०६·३	
*सम्मान	१९·२	
समि	२९०·१	
*समीपं	५३·२, ५६·३	
समीप	२७२·३	
*समीर	७२·२	
समीवं	५३·२	समीप
समुज्झ	१४·१	समझ
समुझावहि	१९२·२	समझते हैं
समुद्द	२०३·१, २३०·२, २४३·१, २८३·४	समुद्र
समुह	६·१, २३१·१	सम्मुख
समुहउ	१४·१	सम्मुख
*समूह	२२९·२	
सम्मूह	२३३·२	समूह
समूहे	२८१·१	
समै	९५·४	समय
समोह	१४३·२	समूह
सय	२८६·४	शत
सयन	८·२	शयन
सयन्न	११६·२	संकेत
सयल	१४१·२, २९४·४, ९९८·२, ३३९·१	शैल
सज्जो	२७८·४	
सज्यो	६·१	सजे

सत्थिअनु	१५२·१	साथी (बहु०)
सत्य	१२७·२	
सरं	६३·१	शर
*सर	२२२·३, २८९·१, ३१९·१	शर
सरइ	३४१·२	
सरग्गि	१३२·३	स्वर्ग
सरण	२७५·५	शरण
सरणागत	२७५·५	शरणागत
सरणाइनि	२८५·२	
सरंद	२९५·३	
सरंत	१६३·३	
सरद	९६·१, १२९·२	शरद
सरद्द	४१·१, २८४·४	शरद
सरद्दहि	७६·४	शरद में
सरन	२४·४	शरण
सरन्नि	४६·१	शरण में
सरव	१७९·२	सर्व
सरसइ	४६·२, ८५·५, ८६·४, ९२·१	सरस्वती
सराल	१९७·१	
शरीर	४२·३	शरीर
*सरोजं	२६४·२	
*सरोज	१७६·१, ४३·२, ३०१·२	
सलख	३३२·६	
सलख्ख	३३७·५	
सलिता	२०३·१	सरिता
सव	१४७·१, २६८·२	सब
सव्व	२७४·१, ३००·१, १०२·२, १५०·१, १८०·२, १९९·३, ७४२·२	सर्व

*सवं	१०९.१	
सवद्ध	६९·१	
सवनि	१६९.३	
†सवार	१७४·३	
सवारे	६४·३, ६६४	सबेरे
सवि	३१५·२, ४३·२	सव
सविच्चित	२८९·१	सविच्चित्र
सर्वरि	१२·३	शर्वरी
सर्वरिय	१०·३	शर्वरी
*सर्वत्र	१८८·२	
सवे	९९·३	सब
सव्वे	१५५·४, २९०·२	सब
ससि	७७·२, १३९·२, ३१८·४	शशि
*सह	१२१·१, १४०·४, १४८·२, १६३.१, १८९·२, ३९९·१	
सहच्च	३४·१	सहज
†सहनाइ	२२५·१	शहनाई
सहंस	३२२·४	सहस्र
*सहस	१२५·१, १४२·२, २६८·१	सहस्र
सहस्स	२६८·२	सहस्र
सहसालं	२८·१	
*सहस्र	९६·२	
सहाइ	१८४·३	सहाय
*सहित	११०·१	
सहिता	१४०·४	
सहुं	४५·२, ७०·२, १८१·२, १८९·१, १२९·१, ३०८·१	से
सध्वाइ	२०५·१	

सा	२९·४, २५७·२, १६९·१, ६५·१, ६७·३, १९०·२, १४१·३, १९४·३	
साई	५०·३	स्वामी
साउ	६८·४	
साखा	१४१·१	शाखा
सांखुला	३२६·४	
साचरे	२४२·२	संचरे
साज	२·१, २९·२, १८६·३, ८१·१	
साजी	५९·३	
साजु	७४·३	
साखर	२७५·४	
साठि	२५४·१	साठ
सात	१४२·२, १४४·१	
साथ	३०२	
साथि	८·२	
*सादरं	११५·२, १४७·२	
सादरनं	२५·१	सादर
सादूर	३२७·१	शार्दूल
सादूल	२९४	शार्दूल
सानुक	२९२·४	
†साबुत्त	२७६·५	साबित
साभो	६०·१	सभा
सागरनं	२३·२	सागर को
सामंत	३·२, ३१८·६, ३०८·६, २५७·१, २७४·१, २२९·१	
सामि	५६·३	स्वामी
सामित्त	२९३·४	स्वामित्व
सामुखी	२५२·२	सम्मुख

शब्द	संदर्भ	अर्थ
साम्हो	४'१, ४२'२	समुख
*सार	६७'३, ३४६'६, ३०१'२, ७३'१, २८३'३, ३१६'१, २७८'१	शस्त्र
*सारस	५'१, २७१'४	
सारथियै	२७४'६	सारथी
सारंग	४६'२, ३२५'३, २६६'४, २३६'१	धनुष
सारंगु	३२६'२	धनुष
सारा	१५५'२	वाद्य-विशेष
सारि	६२'१	सारिका
सारे	६६'३, २५६'१	सभी
सारु	३३२'५	
सारो	३२४'२	
†साल	१०'३, २२.३	वर्ष
†सालक	३४४'३	वर्ष
सावं	२५०'२	सब
सावज्ज	२२६'३	श्वापद
सावन्त	१२६'१, १४६'६, ३२२'२; १७३'१, १६६'१	सामन्त
सावंतहि	३१५'२	सामन्तों को
सांस	६५'१, १३५'१, १०३'१, २३८'३	श्वास
सासिका	३६'१	शासिका
†साह	१७'१, ३२५'३	शाह
साहं	२६२'२	शाह
†साहब	१०२'३	
साहभं	१८१'२	साहब
साहंतो	२७५'४	
†साहि	८८'३, २७५'४	शाही
साहिय	२८४'२	
साहिव्व	२७५'४	साहब
साहियं	१७२'२	साधितं
साहियै	१५५'१	साधिए
साही	१०२३	शाही
साहे	६६'४	
सि	८०'१, १४५'५, २५२'२, ३१६'१	
सिक्खयो	१३४'४	सिखाया
सिख	१६१'२	सीख
*सिता	५१'३, १४१'३	
*सिद्धि	८३ ३	
सिंघ	६४.३, २२६'३	सिंह
सियरा	२३'२	शीतला
सियाम	७५'१	श्याम
सिर	२६'३, ८६'२, ६८'४, १२०'४, १८२'१, ३०१'२, ३०४'१, ३०७ ५, ३११'१, ३११'६, ३२०'६	
सिरं	२६४'३	
सिरि	१३१'१, १८०'१, २८०'४, ३२२'१, ३३६'६	सिर पर
सिवाली	२६४'३	शैवाल
सिसिर	८०'१	शिशिर
सिंगार	३३७'५	शृंगार
सिंघले	३७'२	
सिंघह	२७६'१	सिंह का
सिंघासन	१४५'२	सिंहासन
सिंजा	६४'३	शय्या

सेखर्फ	१३४·३	
सेजु	७४·४	सेज
सेतं	२६५·२	श्वेत
सेद	१६७·४	स्वेद
सेन	१००·४, ८५·८	
	२६०·१, २६२·१,	
	१०३·४	सेना
सेव	३०८·२	सेवा
सेवंतिय	७३·३	सेवा करना
सेस	६८·१, २३५·२,	
	३३६·४	शेष
†सिहरउ	३२०·६	सेहरा
सै	२७७·४	सो
सों	१६५·१	से
सो	३·६, ८३·४, २६५·४	सौ
सोई	२६४·१	वही
सोचि	१६६·१	सोचकर
सोड़सा	१६·१	षोडशी
सोनंकी	२६६·४	सोलंकी
सोंनि	१७५·४	सोना
सोब	११६·१	
सोभ	३४·१, ३५·१, ६६·१,	
	७६·१, ११५·१,	
	१७१·१	शोभा
सोभा	३१·१, ६५·१	शोभा
सोभे	२६४·४	शोभित
ॐसोम	१६३·२	
सोर	११५·२, २३६·१	
सोवन्न	५४·१, ५८·३	सुवर्ण
सोलह	३२२·६, ३२३·२	
सोह	७८·२, ६१·४	शोभित
सोहए	३६·२, ३६·२	सोहता है

सोहही	४०·२	सोहते हैं
सोहं	५१·१, ५८·१	शोभित
सोहंत	३८·२	शोभंत
सौ	२७६·३	
स्सु	१३४·१	सु
स्रवण	८६·४	श्रवण
स्रवन	४२·१, ४६·३,	
	३१८·२	श्रवण
स्रुव	२६·२	श्रुत
स्रोन	५५·३, ५६·१,	
	२६३·१	श्रवण
स्रोनित	३०४·४	श्रोणित
स्यामि	१५४·३	श्याम
† स्याह	१३३·४, १७५·४	
* स्वर्ग	१३·४, १७·४	
ॐस्वाति	५१·३	
स्वामि	३०७·२, ३२०·३,	
	२७४·५, ३०२·२,	
	२६५·४	
ॐस्वामिना	२५३·२	
सामिहि	३०३·२	स्वामी से
ॐस्वेद	१६७·१	
हरिसिंघ	२६६·१, ३३७·१	
हरिह	३२·३	
हरो	१४०·३	
हलं	२५·४	
हलि	२३६·२	हला
हल्लए	१७६·१, २३६·३,	
	२४२,१	हिलता है
हल्लति	२८३·४	हिलती है
हल्ले	२५६·२	हिले
हसंत	१६५·२	हँसते हैं

हसि	६'१, १४६'६	हँसकर
हसे	३१७'४	हँसे
*हस्त	१७०'३	
*हस्तेषु	१४७'१	
हस्थ	१८३'२	
हस्यो	३३३'६	हँसे
*हाटक	७० २	सुवर्ण
हाथे	६५'४	
*हार	३१'३, ३०२'४, ३१५'५	
हारि	२५६'३	
हाल	२६३'३	
*हालाहलं	६५'३	हलाहल
*हास	६५'४	
हि	१६०'३	
हिता	२१'२	
हिंदुवाण	७७'१	हिंदुजन
हिंदुवान	११०'४	हिंदुजन
हिंदू	२७५'५	
*हिम	२८'३	
हिमाउत	२८४'३	हिमवत
हिय	७२'२	हृदय
हिल्ले	२३७'३	
हिल्ले	२३४'३	
हिलोर	१७०'२	हिल्लोल
ही	३४'१, ३६'१, ४०'२, ३१'१	
*हीन	११'५, ६२'४, ३२०'२	
*हीना	६१'१, '२	
हीने	६२'४, २४८'२	
हीर	७८'३	हीरक
हीरा	१०५'२	
हीसं	२४८'१	
हुअ	३०२'४	हुआ
हुइ	१५३'१, २७५'६, ३०२'२	
हुंकारो	३११'२	हुंकार किया
हुंति	८३'४, १८१'१	से
हुव	१६७'१, ३१४'१	हुआ
हुवो	४'१	
हूँ	६१'३	मैं
हूवं	२६६'१	हुआ
हेजम	८३'२, ८४'१, ८५'१	
हेत	८४'१	हेतु
हेम	१६'१, ७६'१, ६१'२, ६६'३, २५६'३, २७६'४, १०६'१	स्वर्ण
है	३२'२, ६४'५, १०६'१	
हों	८५'३	
होइ	६०'२, ६४'४, २७५'२, ३०७'२	होता है
होई	७१'४, २७७'६	होता है
होरी	३२७'२	होली

ह

हंकयो	१७५'१	हांका
हंक्क	३१०'१	हाँका
हंकिया	३२३'४	[illegible]
हंके	२३४'२	हाँक लगाई
*हंस	२६३'४, ३०६'२, ३१३'४	
हंसु	७६'२	

हंसि	३३०·२	
हंसो	३२३·३	
हकारे	१०४·१, २३३·३, २५८·१	ललकारे
हक्क	३२२·१	हाँक दो
हक्कारिउ	१२४ १	हाँक लगाई
※हज्जारखी	२५४·१	हज़ार
※हट्ट	७०·१	हटा
हट्टति	७१·१	
हती	२४७·२	मारी
हत्थ	३७·१, ११०·५, १४५·६, १४८·१, १७१·४, २५७·२, २६४·२, ३२४·४	हाथ
हत्थहि	२०३·१, ३३६·३	हाथ से
हत्थही	१७१·१	
हत्थि	१५५·२	हाथी
हत्थिय	१४४·१	हाथी
हत्थी	२६६·१	हाथी
हत्थे	२२७·४	हाथ से
हत्थेन	३१६·१	हाथ से
हत्थै	२२६·४, २७७·४	हाथ से
हथ	१०७·२	हत
हनंत	२०४·३	हनता है
※हनि	२६८·२	मारकर
हने	३०७ ३	मारे
*हय	५७·१, ८१·१, ३४६·४, १६६·३, २३६·१, २४०·१, २६८·१, २६६ ५, २८०·२, ३०७·२, ३०८·१, ३१६·१	
हयग्गय	७६·३	हय गज
※हयदल	२५४·२	
※हयवर	३१३·३	
हरंत	३६·२	
※हर	२६·१, ८२·३, ३०२·४, ३३०·१	
हरखवंत	१८३·१	हर्षित
हरन	१२०·१	हरण
हर-नयन	३३७·२	
हरम्य	३४१·१	हर्म्य
※हरि	३०·१, १४०·३, २५६·३, २८४·३, २६८·१, ३३६·३	
हरिग्र	१६७·२	हृत
हरिख	३००·१	हर्ष
हरिग	१२·१	हर गया, हर लिया

सहायक साहित्य

१. सम्पादित संस्करण

बीम्स	आदि पर्व (प्रथम १७३ छंद), बिब्लिओथेका इंडिका, न्यू सीरीज़, संख्या २६६, भाग १, फैसीक्यूलस १,१८७३
होर्नले	देवगिरि सम्यो से कांगुरा जुद्ध प्रस्ताव तक (दस समय), बिब्लि० इंडिका, न्यू सीरीज़, संख्या ३०४, भाग २, फैसीक्यूलस १, १८७४.
श्यामसुंदर दास, मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या इत्यादि	पृथ्वीराज रासो (सम्पूर्ण), काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १६०४–१६१२.
मथुरा प्रसाद दीक्षित	असली पृथ्वीराज रासो, (प्रथम समय), लाहौर, १६३८.
हजारीप्रसाद द्विवेदी नामवर सिंह	संक्षिप्त पृथ्वीराज रासो, साहित्य भवन प्रयाग १६५२.
विपिन बिहारी त्रिवेदी	रेवातट, लखनऊ विश्वविद्यालय, १६५३
कविराव मोहन सिंह	पृथ्वीराज रासो, प्रथम भाग (१६ समय), उदयपुर, १६५४.

2. LINGUISTICS

Allen, W. S. *Phonetics in Ancient India,* **London,** *1953.*

Alsdorf, L. *Apabhramsa Studien, Liepzig, 1937.*

Beames, J. *A Comparative Grammar of the Modern Aryan languages of India,* **London, 1875.**
Studies in the Grammar of Chand Bardai, JASB, XLII, part 2, 1873.

Bhayani, H. V. *Grammar, Sandes Rasak, SJS 22,* **Bombay** *1945.*

Chatterji, S. K. *The Origin and Development of Bengali language,* **Calcutta,** *1942.*
Indo-Aryan and Hindi, **Ahmedabad,** *1942.* **Varna-Ratnakar,** *Introduction, Bibliotheca Indica, 1940.*
A study of the New Indo-Aryan Speech treated in the **Ukti-vyakti Prakaran,** *SJS 39, 1953.*

Hoernle, R. *A Comparative Grammar of the Gaudian languages,* **London,** *1880.*

Katre, S. M. *Prakrit Languages* **Bombay,** *1945,*

Kellog, S. H. *A Grammar of Hindi Language,* **London** *1938.*

Saksena, Baburam *Evolution of Avadhi,* **Allahabad,** *1938.*

Sen, Sukumar *Historical Syntax of Middle Indo-Aryan,* **Calcutta,** *1954.*

Sharma, Dashrath & Ranga, Minaram *The Original Prithwiraj Raso : An Apabhramsa work,* **Rajasthan Bharati,** *April 1946.*

Tessitori, L. P. *Notes on the Grammar of the Old Western Rajasthani with special reference to Apabhramsa and to Gujrati and Marwari, Ind. Ant., 1914-16.*

Ziauddin, M. *Mirza Khan's Grammar of Braj Bhakha, Visva Bharati, 1935.*

धीरेन्द्र वर्मा हिंदी भाषा का इतिहास, हिंन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद तृतीय संस्करण, १९४९ ;
ब्रजभाषा, हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १९५४.

३. पृथ्वीराज रासा-सम्बन्धी साहित्य

अगरचंद नाहटा पृथ्वीराज रासो और उनकी हस्तलिखित प्रतियाँ, राजस्थानी, भाग ३, अङ्क २, जनवरी १९४०, राजस्थान में हस्तलिखित ग्रंथों की खोज (द्वितीय भाग)

गौरीशंकर हरीचंद ओझा पृथ्वीराज रासो का निर्माण काल, कोषोत्सव स्मारक संग्रह, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९२८ ; नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग १, १९२०; वही, भाग ६.

ग्राउज, एफ० एस० दि पोइम्स ऑव चंद बरदाई, जे० ए० एस० बी०, जिल्द ६७, भाग १, १८७८ ; फ़र्दर नोट्स ऑन प्रिथिराज रायसा,, वही, भाग १, १८६६ ; ट्रांसलेशंस फ्रॉम चंद, वही ; रिज्वाइंडर टु मिस्टर बीम्स, वही, भाग १, १८७६ ; ए मेट्रिकल वर्शन ऑव दि ओपिनिंग स्टैंजाज़ ऑव चंद्स प्रिथिराज रासौ वही, जिल्द ४२, भाग १, १८७३; इण्डियन एँटिक्वेरी, जिल्द ३.

जिन विजय मुनि — पुरातन प्रबंध संग्रह, सिंघी जैन ग्रंथमाला, १६३५.

टाड, कर्नल — ऐनल्स एण्ड ऐंटोक्विटीज़ ऑव राजस्थान, १८२६; द वाउ ऑव संगोसा; एशियाटिक जर्नल, न्यू सीरीज़ जिल्द २५ कनउज खंड, जे० ए० एस० बी०, १८३८.

दशरथ शर्मा — पृथ्वीराज रासो की एक प्राचीन प्रति और उसकी प्रामाणिकता, ना० प्र० पत्रिका, १६३६ ; पृथ्वीराज रासो की कथाओं का ऐतिहासिक आधार, राजस्थानी, भाग २, अंक २, जनवरी १६४० ; दि एज एण्ड हिस्टारिसिटी ऑव पृथ्वीराज रासो, इण्डियन हिस्टारिकल क्वाटर्ली, जिल्द १६, दिसम्बर १६४० ; वही, जिल्द १८, १६४२, पृथ्वीराज सम्बन्धी कुछ विचार, वीणा, अप्रैल १६४४ ; संयोगिता, राजस्थान भारती, भाग १, अंक २-३, १६४६ ; पृथ्वीराज रासो की ऐतिहासिकता पर प्रो० महमूद खाँ शीरानी के आक्षेप, वही, भाग २, अंक १, जुलाई १६४८ ; दिल्ली का अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज तृतीय, इण्डियन कल्चर, १६४४ ; सम्राट पृथ्वीराज चौहान का रानी पद्मावती, मरु भारती, भाग १, अंक १, सितम्बर १६५१ ; पृथ्वीराज तृतीय और मुहम्मद बिन साम की मुद्रा, जर्नल ऑव न्यूमिस्मैटिक सोसाइटी ऑव इण्डिया, १६५४,

देवी प्रसाद, मुंशी — पृथ्वीराज रासो, ना० प्र० पत्रिका, भाग ५, १६०१;

धीरेन्द्र वर्मा — पृथ्वीराज रासो, काशी विद्यापीठ रजत जयंती अभिनंदन ग्रंथ, १६४६

नरोत्तमदास स्वामी — पृथ्वीराज रासो, राजस्थान भारती, भाग १, अंक १, अप्रैल १६४६; पृथ्वीराज रासो की भाषा, वही भाग १, अंक २, १६४६

मथुराप्रसाद दीक्षित — पृथ्वीराज रासो और चंद बरदाई, सरस्वती, नवंबर १६३४; चंद बरदाई और जयानक कवि, सरस्वती, जून १६३५;

माताप्रसाद गुप्त — पृथ्वीराज रासो के तीन पाठों का आकार-संबंध, अनुशीलन, वर्ष ७, अंक ४, अगस्त १६५५.

मूलराज जैन — पृथ्वीराज रासो की विविध वाचनाएँ, प्रेमी अभिनंदन ग्रन्थ, अक्तूबर १६४६

मॉरिसन, हर्बर्ट — सम अकाउट आव दि जीनिओलाजीज़ इन दि पृथ्वीराज विजय, वियना ओरिएण्टल जर्नल, भाग ७, १८६३

मोतीलाल मेनारिया — राजस्थानी भाषा और साहित्य, १६४०
राजस्थान का पिंगल साहित्य, १६५२
राजस्थान में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज, (प्रथम भाग)

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या — पृथ्वीराज रासो की प्रथम संरक्षा, १८८८

विपिन बिहारी त्रिवेदी — चंद वरदायी और उनका काव्य, हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १६५२; रेवातट (पृथ्वीराज रासो), लखनऊ विश्वविद्यालय, १६५३

बीम्स, जान — दि नाइन्टीन्थ बुक आव दि जेस्टेस ऑव पिथीराय बाइ चंद वरदाई, एनटाइटिल्ड 'दि मैरेज विद पद्मावती' लिटरली ट्रांसलेटेड फ्रॉम ओल्ड हिंदी, जे. ए. एस. बी, जिल्द ३८, भाग १, १८६६; रिप्लाइ टु मि० ग्राउज़, वही; ट्रांसलेशंश ऑव सेलेक्टेड पोर्शंस ऑव बुक फ़र्स्ट ऑव चंद बरदाई' ज़ एपिक, वही, जिल्द ४१, १८७२; लिस्ट आव बुक्स कंटेंड इन चंदज़ पोएम, दि पृथ्वीराज रासो, जे० ए० एस०, १८७२.

बूलर — प्रोसीडिंग्ज़, जे. ए. एस. बी., दिसम्बर जनवरी १८९३,
रामनारायण दूगड़ — पृथ्वीराज चरित्र, १८९९.
श्यामलदास, कविराज — दि एंटीक्विटी ऑथेंटीसिटी एंड जेनुइननेस ऑव दि एपिक काल्ड दि प्रिथीराज रासो, ऐज़ कामनली ऐस्क्राइब्ड टु चंद बरदाई, जे. ए. एस. बी., जिल्द ५५, भाग १, १८८६; पृथ्वीराज रहस्य की नवीनता।
श्यामसुंदर दास — पृथ्वीराज रासो, ना. प्र० पत्रिका, वर्ष ४५, अंक ४, १९४०
हजारी प्रसाद द्विवेदी — हिंदी साहित्य का आदि काल, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, १९५२,
होर्नले, रूडोल्फ — ट्रांसलेशंस फ्राम चंद (रेवातट सम्यो २७, अनंगपाल सम्यो २८), बिब्लिओथेका इंडिका, संख्या ४५२, भाग २, फैसीक्यूलस १, १८८१.

४. विविध

गार्सां द तासी — हिंदुई साहित्य का इतिहास (अनुवाद), अनु० डा. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिंदुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १९५३
ग्रियर्सन, जार्ज अब्राहम — माडर्न वर्नाक्यूलर लिटरेचर ऑव हिंदुस्तान, कलकत्ता १८८०
चन्द्रधर शर्मा गुलेरी — पुरानी हिन्दी, नवीन संस्करण, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९४८.
चन्द्रमोहन घोष — प्राकृत-पैंगलम्, बिब्लिओथेका इंडिका, १९०२
तेसितोरी, एल० पी० — पुरानी राजस्थानी (हिंदी अनुवाद), अनु० नामवर सिंह, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९५५

नामवर सिंह	हिंदी के विकास में अपभ्रंश का योग, साहित्य भवन, प्रयाग, नवीन संस्करण, १९५३
परशुराम लक्ष्मण वैद्य	हेमचन्द्र-प्राकृत व्याकरण,पूना, १९३६
रामचन्द्र शुक्ल	हिन्दी साहित्य का इतिहास, पाँचवाँ संस्करण, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, १९४८.
श्यामसुंदर दास	हिंदी साहित्य, इंडियन प्रेस इलाहाबाद, १९३०
सरयू प्रसाद अग्रवाल	अकबरी दरबार के हिंदी कवि, लखनऊ विश्व-विद्यालय, १९५०.
सूर्यकरण पारीक, रामसिह तथा नरोत्तम दास स्वामी	ढोला मारू रा दूहा, काशी नागरी प्रचारिणी सभा १९३४.
हरगोविंद दास सेठ	पाइय सद्द महण्णवो, कलकत्ता १९२३.